भारतीय विदेशी व्यापार में विश्व व्यापार संगठन का योगदान

ROLE OF WORLD TRADE ORGANISATION IN EXTERNAL TRADE OF INDIA

डी० फिल्० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्ता

संजय कुमार श्रीवास्तव

शोध–निर्देशक

डॉ० ए०ए० सिद्दीकी

रीडर,

वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय,

इलाहाबाद

वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

2002

विषय सूची

विवरण	पृष्ठ संख्या
प्राक्कथन सूची	i-vi
अध्याय - 1 प्रस्तावना	1-114
अध्याय - 2 विश्व व्यापार संगठन का संक्षिप्त इतिहास	115-183
अध्याय - 3 विभिन्न आयात-निर्यात नीतियाँ एवं भारतीय विदेशी व्यापार	184-268
अध्याय - 4 पूर्व सहस्त्राब्दी के नब्बे के दशक में उदारीकरण कार्यक्रम एवं विश्व व्यापार संगठन	269-393
अध्याय - 5 विश्व व्यापार संगठन एवं भारत .... अमेरिका	394-470
अध्याय - 6 समस्यायें, सुझाव एवं उपसंहार	471-621
संदर्भ ग्रन्थ	622-626

प्राक्कथन

जिस प्रकार राष्ट्र स्तर पर विदेशी व्यापार बढ़ाने की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार अब विश्व स्तर पर भी विदेशी व्यापार बढ़ाने की आवश्यकता महसूस हो रही है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए गैट को प्रारम्भ किया ताकि देशों के बीच व्यापार की बाधाओं को दूर कर निरन्तर व्यापार बढ़ाया जा सके। गैग को एक स्थायी रूप देने के लिए विश्व व्यापार संगठ्न की स्थापना 01 जनवरी 1995 को की गयी।

विश्व व्यापार न केवल देशों के बीच व्यापार वृद्धि में सहायता कर रहा है, अपितु दो अथवा दो से अधिक देशों के बीच उत्पन्न व्यापारिक विवादों को भी सुलझाने में सहायक हो रहा है जिनका नवीनतम उदाहरण अमेरिका द्वारा स्टील आयात पर लगाया गया प्रतिबन्ध है। भारत समेत कई देशों ने इसके विरूद्ध विश्व व्यापार संगठ्न ने आवाज उठायी और जीत भी हासिल की। अब यह सभी देश अमेरिका को अपना स्टील निर्यात कर सकते हैं।

अभी विश्व व्यापार संगठन कुछ वर्षो पहले स्थापित हुआ है। इसलिए इसके बारे में अधिक तथ्य, आंकड़े, जानकारी की बहुत कमी है। यथा सम्भव इन जानकारियों को प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

वर्तमान अन्तर्राष्ट्री व्यवस्था में व्यापार बढ़ाने की सम्भावना ज्यादा हो गयी है। जरूरत है तो दृढ़ संकल्प शक्ति, त्वरित, कार्यवाही, प्रशासनिक गतिशीलता, प्रोत्साहन मूलक नीति और सही विषय की ओर दिशा तलाशने की। जबकि सभी राष्ट्र एक दूसरे के नजदीक आ रहे हैं। क्षेत्रीयता का स्थान संकुचित हो रहा है। नये-नये आर्थिक संगठन बन रहे हैं। सबका उद्देश्य अपने-अपने व्यापारिक नीति का प्रयोग अधिकतम लाभ उठाने का है, तो इस परिस्थिति में भारत भी अपने पड़ोसी देशों तथा अन्य सहयोगी राष्ट्रों के साथ मिलकर व्यापारिक गतिशीलता बढ़ाते हुए बेरोजगारी और गरीबी दूर करने के लिए आवश्यक संशाधन और तकनीक प्राप्त कर सकता है। यद्यपि यह सही है कि अन्ततः इनके सम्बन्धित कार्यक्रमों के लिए आन्तरिक संसाधनों पर ही निर्भर रहना पड़ता है, फिर भी संसाधनों की कमी की वजह से अन्य देशों से मदद लेना ही पड़

जाता है। आधुनिक युग में भारतीय अर्थव्यस्था में विदेशी व्यापार की महत्वपूर्ण भूमिका है। और विश्व व्यापार संगठन इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। रफ उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध भारतीय विदेशी व्यापार के विभिन्न पहलुओं की विवेचना करने का प्रयास किया गया है। हमने भारत सरकार के द्वारा लिये गये विभिन्न प्रोत्साहन, उपायों के वास्तविक प्रभावों का पता लगाने की कोशिश की है। यह हमेशा शिकायत है कि भारत सरकार द्वारा उठाये गये कदमों को निर्यात कर्ताओं के अच्छे आशाओं के अनुरूप उचित ढंग से क्रियान्वित नहीं किया जाता है। वह अधिकांशतः अपर्याप्त भी हैं। हमने इसका पता लगाने की कोशिश की है कि वह वास्तव में हमारे देश के बढ़ते हुए निर्यात में किस हद तक प्रभावी है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों को प्रमुख आधार बनाकर अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध कार्य में नवीन तथ्यों को खोजने के लिए ज्यादातर सूचनायें विभिन्न समाचार पत्रों और प्रकाशनों के जरिये एकत्र किये गये हैं

तथा साथ में दूरदर्शन में प्रसारित कार्यक्रमों का भी सहारा लिया गया है। भारत के निर्यात संवर्धन के विषय में अनुसंधान के परिणाम स्वरूप कुछ वर्षो पूर्व जो अर्वाचीन मान्यतायें और सिद्धांत प्रतिपादित हुए, उनके परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को पूरा करने का प्रयास किया गया है। निर्यात के विकास में उत्तरदायी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तत्वों के विश्लेषण तथा विवेचना की चेष्टा की गयी है। हमने भारत में विभिन्न निर्यात संवर्धन योजनाओं के प्रभावों का संक्षिप्त आलोचनात्मक मूल्यांकन करने का प्रयास किया है, तथा साथ में उदारीकरण का निर्यात पर प्रभाव का भी संक्षिप्त अध्ययन करने की कोशिश की है।

मेरे शोध निर्देशक डॉ0 ए0ए0 सिद्दीकी को इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण कराने का पूरा श्रेय है। उनके विद्वतापूर्ण निर्देशन में यह कार्य सम्भव हुआ, जो मेरे लिये गर्व की बात है। उनके लम्बे समय से लगातार गम्भीर रूप से अस्वस्थ रहने के बावजूद उनके विशिष्ट सहयोग, नैतिक प्रेरणा एवं पथ प्रदर्शन से मेरा यह कार्य अबाध गति से पूर्ण हुआ। इसके लिये मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

मैं अपने विभाग के समस्त गुरूजनों विशेषकर प्रो0 जगदीश प्रकाश, विभागाध्यक्ष एवं भूतपूर्व कुलपति इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रो0 जे0के0 जैन एव डॉ0 आलोक कुमार श्रीवास्तव के अतिरिक्त वाणिज्य विभाग के कर्मचारियों जनरल लाइब्रेरी के कर्मचारियों विशेषकर श्री राम नरेश कुशवाहा को धन्यवाद देता हूँ।

मैं इण्डिया ट्रेड प्रमोशन आर्गनाइजेशन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली में कार्यरत श्री महावीर सहायक प्रबन्धक (हिन्दी सेक्शन) तथा श्री सुखवीर सिंह एवं सुश्री माला भट्टाचार्या, कनिष्ठ व्यापार सूचना अधिकारी, (व्यापार सूचना केन्द्र) और डॉ0 रामयश मौर्य (अवकाश प्राप्त) प्रोफेसर, आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबन्ध, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

मैं अपने पिता श्री रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (उप प्रधानाचार्य) एम0एस0के0 इण्टर कालेज, पूरे गिरवर अजगरा प्रतापगढ़ एवं माता श्रीमती सावित्री देवी के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। और बड़े भाई श्री अजय कुमार श्रीवास्तव एवं छोटे भाई विजय कुमार श्रीवास्तव एवं विनय कुमार श्रीवास्तव के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। जिन्होंने मुझे शोध कार्य करने की प्रेरणा दी।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को पूर्ण कराने में मेरे परिवार के सभी सदस्यों ने सक्रिय सहयोग दिया विशेषकर मेरी पत्नी श्रीमती प्रतिभा श्रीवास्तव के प्रति अपना विशेष आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने हर पल मेरा उत्साहवर्धन करते हुए मेरे मनोबल को ऊँचा बनाये रखा, जिसके परिणाम स्वरूप यह शोध प्रबन्ध पूर्ण हो सका। मैं राम नरेश कुशवाहा का विशेष आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध को पूरा कराने में सराहनीय योगदान प्रदान किया हैं मैं अपने परिवार के अन्य सभी सदस्यों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

तिथि : दिसम्बर 2002

(संजय कुमार श्रीवास्तव)
वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

अध्याय एक

प्रस्तावना

वर्तमान समय में विश्व की अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार का महत्वपूर्ण स्थान है। आज के इस विशिष्टिकरण के युग में कोई भी राष्ट्र स्वयं अपने साधनों से अपना आर्थिक विकास नहीं कर सकता। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे धनी देशों को भी अनेक वस्तुओं के लिए अन्य देशों पर निर्भर रहना पड़ता है। आज के युग में विदेशी व्यापार का महत्व सभी राष्ट्रों के लिए होता है चाहे वह विकसित राष्ट्र हो या अविकसित। प्रत्येक देश कुछ भौतिक एवं मानवीय संसाधनों से सम्पन्न होता है और वह कुछ ही वस्तुएं अच्छी व सस्ती उत्पादित कर सकता है, उन वस्तुओं का वह प्रचुर मात्रा में उत्पादित करके ही विदेशों को बेच देता है और उसके बदले में अपनी आवश्यकता की वस्तुएं आयात कर लेता है। इससे दोनों देशों को लाभ होता और वे एक दूसरे पर आश्रित हो जाते हैं।

एक अल्पविकसित राष्ट्र के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का महत्व बहुत ही अधिक होता है क्योंकि हमारे देश

विकासशील राष्ट्र है।। पूंजी निर्माण की आवश्यकता की पूर्ति एवं विद्यमान निर्धनता के चक्र को तोड़ने हेतु, आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने में महत्वपूर्ण श्रोत के रूप में विदेशी व्यापार ही उल्लेखनीय भूमिका अदा कर सकता है। 1995 में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना से विश्व के विदेशी व्यापार में वृद्धि होने की सम्भावनायें अधिक बढ़ गयी है।

ज्ञातव्य है कि अमरीका पर 11 सितम्बर, 2001 को हुए आतंकी हमले के पश्चात् आई विश्वव्यापी मंदी का असर भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी पड़ रहा है। अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर के सभी पूर्वानुमान अब ध्वस्त हो रहे हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व भारतीय रिजर्व बैंक के अतिरिक्त निजी क्षेत्र की मार्गन स्टेनली आदि में आर्थिक वृद्धि दर के पूर्वाकलनों में कटौतियाँ की हैं, विश्व अर्थव्यवस्था में आई इस मंदी से भारत के निर्यात भी गम्भीर रूप से प्रभावित हुए हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में चालू वित्तीय वर्ष 2001-02 में निर्यात वृद्धि दर के लक्ष्य में भारी कटौती वाणिज्य मंत्रालय द्वारा दिसम्बर, 2001 में की गई है, वित्तीय वर्ष 2001-02 में नियोतों के डालर मूल्य में 12 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य

वाणिज्य मंत्रालय द्वारा पहले निर्धारित किया गया था, जिसे घटाकर अब केवल 3 प्रतिशत वाणिज्य मंत्रालय ने किया है। नौवीं योजना के पहले 4 वर्षो में निर्यातों में वृद्धि क्रमशः 4.6 प्रतिशत (1997–98) में, – 5.1 प्रतिशत (1998–99) में, 10.8 प्रतिशत (1999–2000) में तथा लगभग 21 प्रतिशत (2000–2001) में रही है। इन चार वर्षो में निर्यातों में औसत वृद्धि दर 8.22 प्रतिशत बैठती है, अप्रैल–दिसम्बर 2001 की अवधि में भारत के निर्यातों में 0.6 प्रतिशत की कमी आयी, जबकि इसी अवधि में आयातों में 0.3 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी।

विदेशी व्यापार के सभी पहलुओं पर विचार करने के पूर्व हमे व्यापार शब्द को आवश्यक रूप से समझना चाहिए। सामान्य भाषा में लोगों के मध्य होने वाले वस्तुओं या माल के विनिमय को व्यापार कहते हैं। व्यापार का दो वर्गो में वर्गीकृत किया गया है, यथा देशी या आन्तरिक व्यापार तथा विदेशी या अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार। हम यहाँ पर विदेशी व्यापार के परिप्रेक्ष्य में ही अध्ययन करेंगे। विदेशी व्यापार का अभिप्राय उस व्यापार से है जिसके अन्तर्गत दो या

दो से अधिक देशों के बीच वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय किया जाता है। उदाहरण के लिये- यदि भारत का व्यापार रूस अथवा जापान के साथ किया जाता है तो यह विदेशी व्यापार कहलायेगा। इसे बाह्य व्यापार या अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कहा जाता है। हैबरलर के अनुसार, "विदेशी व्यापार की विभाजन रेखा एक देश की सीमा होती है। सीमा के बाहर विभिन्न देशों के साथ किये जाने वाला व्यापार विदेशी व्यापार कहलाता है।"

किसी भी देश की आर्थिक उन्नति के मापदण्ड में उस देश के विदेशी व्यापार का प्रमुख स्थान होता है तथा इसके द्वारा देश में प्राप्त प्राकृतिक साधनों का समुचित प्रयोग संभव है। इसके द्वारा देश अपने तथा दूसरे देशों के विशिष्ट साधनों एवं उनके समुचित उपयोग से बड़े पैमाने की उत्पादन प्रणाली तथा तकनीकी जानकारी व प्रगति का लाभ उठा सकता है। विदेशी व्यापार के समुचित नियमन से किसी अर्थव्यवस्था में उत्पादन, आय, रोजगार कीमत, औद्योगीकरण, अर्थात समग्र आर्थिक विकास पर इच्छित प्रभाव डाला जा सकता है। विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए तो विदेशी व्यापार का महत्व बहुत है क्योंकि विकास की गति को तीव्रतर करने के

लिए विदेशी मुद्रा एंव पूंजीगत वस्तुओं की आवश्यकता होती है। जो विदेशी व्यापार द्वारा ही सम्भव है। विदेशी व्यापार का समर्थक प्रो0 हैबरलर, मायर, मार्शल तथा हार्न व गोमेज ने किया है। इन सभी अर्थशास्त्रियों ने विदेशी व्यापार की आवश्कता को निर्विवाद रूप से स्वीकारा है, और उसे विकास का एक माध्यम भी माना है। आज संसार के जो सबसे अधिक समृद्ध देश माने जाते हैं, उनके विकास की गति प्रदान करने में विदेश व्यापार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ब्रिटेन का आर्थिक विकास ऊनी तथा सूती कपड़ों के कारण हुआ। स्वीडन का लकड़ी के व्यापार द्वारा, डेनमार्क का डेयरी क निर्यात के कारण, कनाडा का गेहू के निर्यात के कारण, स्वीटजरलैण्ड का फीता तथा घड़ी बनाने के कारण तथा जापान का रेशम का निर्यात करने के कारण हुआ। मार्शल ने विदेशी व्यापार का समर्थन करते हुए कहा है कि "विदेशी व्यापार से दोहरा लाभ होता है - एक तो देश में उपलब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है, तथा दूसरे देशों से वस्तुएं प्राप्त करके देशवासियों की आवश्यकताएं प्राप्त की जा सकती हैं" विदेशी व्यापार ने दुनिया के लोगो के जीवन में

एक उमंग का संचार किया है। विश्व की बढ़ती हुयी पारस्परिक निर्भरता के कारण विदेशी व्यापार अर्थव्यवस्था एवं विकास का महत्वपूर्ण माध्यम बन गया है। इसमें किसी प्रकार का असन्तुलन, देश की अर्थव्यवस्था में तंकी और दबाव पैदा करता है। सत्य तो यह है कि विदेशी व्यापार के अभाव में न तो अधिक लोग इतनी प्रसन्नता से जीवन यापन कर सकते थे, न इतनी अधिक विधि आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते थे, और न इतना उच्च जीवन स्तर बिता सकते थे जितना कि आज सम्भव हो सका है, यदि विदेशी व्यापार न होता तो संयुक्त राज्य अमेरिका के लोगों को अनेक वस्तुओं, जैसे – चाय, काफी, चाकलेट, केला इत्यादि के उपभोग से वंचित रहना पड़ता। विदेशी का स्पष्ट महत्व यह है कि इसके माध्यम से विदेशों से ऐसी वस्तुओं का आयात किया जा सकता है जिन्हें देश में पैदा नहीं किया जा सकता है, उन्हें कम लागत पर विदेशों से आयात कर सकते हैं।

प्रो० एल्सवर्थ के शब्दों में, "अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अधिक लोगों के रहने , अधिक विविध आवश्यकताओं की पूर्ति

करने एवं उच्च जीवन स्तर को सम्भव बनाता है जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के अभाव में सम्भव नहीं होता।''

संक्षेप में विदेशी व्यापार का महत्व श्रम विभाजन, सस्ती कीमत पर उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति, कच्चे माल की उपलब्धता, प्राकृतिक संसाधनों का समुचित प्रयोग, संकटकालीन परिस्थितियों में सहायता, तीव्र औद्योगिक विकास, विदेशी प्रतिस्पर्धा के लाभ, बाजार का विस्तार, रोजगार अवसरों का सृजन, सास्कृतिक सम्बन्ध तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग आदि की दृष्टि से है। अब हम यहां पर भारत के विदेशी व्यापार की विवेचना मुख्य रूप से विदेशी व्यापार की मात्रा, विदेशी व्यापार की संरचना एवं विदेशी व्यापार नीति के संदर्भ में करेंगे।

भारत में विदेशी व्यापार : एक ऐतिहासिक विवेचन

भारत में अत्यंत प्राचीन काल से ही विदेशी व्यापार का प्रचलन रहा है। इतिहास के अभिलेख यह प्रमाणित करते हैं कि ईसा से 1100 वर्ष पूर्व भी भारतीय व्यापारी दूर-दूर तक वस्तुओं का आदान-प्रदान करते थे। अनेक स्थानों पर खुदाई करके पुरातत्ववेत्ताओं ने यह प्रमाणित किया है कि

प्राचीन भारत का मिश्र, अरब, जर्मनी, चीन, जापान और जावा आदि के साथ व्यापार था। यही उस काल की सम्पन्नता का मुख्य आधार था। "पीटर महान् के अनुसार भार का व्यापार दुनिया का व्यापार है और जो इसका पूर्ण कर ले वहीं यूरोप का तानाशाह है।" हाकिन्स के मतानुसार "भारत अपने व्यापार के कारण ही समृद्धिशाली है, क्योंकि सभी राष्ट्र यहाँ सिक्के लाते हैं तथा उनके बदले में भारतीय वस्तुएं ले जाते हैं। ये सिक्के भारत में ही गाड़ दिये जाते हैं फिर बाहर नहीं निकल पाते।"[1]

प्राचीन काल में भारत की बनी हुई वस्तुएं जैसे–सूती कपड़े, धातु के बर्तन, सुगन्धित वस्तुएं, इत्र, गरम मसाला आदि की मांग मिस्र, यूनान, रोम तथा ईरान आदि स्थानों में बहुत अधिक थी।

इसी व्यापार के लिए भारत ने स्याम, जावा, सुमात्रा और मलाया में अपने उपनिवेश बनाये थे। देश का विदेशी व्यापार उन दिनों जल और थल दोनों ही मार्गो से होता था। भारत में प्राचीन काल में आयात से अधिक निर्यात

---

[1] डॅ0 डी0एन0 गुर्टू-अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, कालेज बुक डिपो, जयपुर-2, 1971-72 पृ0-439

होता था। विदेशी हमारे व्यापार का भुगतान सोना-चाँदी में करते थे। इस प्रकार प्रत्येक वर्ष हमारे देश में करोड़ों रूपये का सोना आता था।

विदेशी व्यापार का परिणाम और विस्तार मुगल शासन काल में और अधिक बढ़ा। भारत में अंग्रेजी शासन स्थापित होने पर हमारे विदेशी व्यापार में वृद्धि तो हुई लेकिन उसका सारा ढाँचा ही बदल गया। अंग्रेजों की सरकार ने ऐसी नीति अपनाई कि देश के उद्योग धन्धे धीरे-धीरे नष्ट होने लगे और भारत एक कृषि प्रधान देश बन गया। भारत, इण्ग्लैण्ड के निर्मित माल का आयात करने लगा तथा कच्चे माल का निर्यात करने वाला देश बन गया।

प्राचीन काल में भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताएं

(क) उस समय सामान्यतः निर्मित वस्तुओं का आयात और कच्चे माल का निर्यात किया जाता था।

(ख) हमारे निर्यात, हमेशा ही आयात से अधिक होते थे जिसके फलस्वरूप व्यापार सन्तुलन हमेशा ही हमारे पक्ष में रहता था।

(ग) विदेशी व्यापार स्वेज नहर के निर्माण और परिवहन साधनों में उन्नति के कारण तेजी से बढ़ रहा था।

प्राचीन काल में भारतीय व्यापार

मिस्र के पिरामिडों में प्राप्त लाशों पर ढाका की मलमल का होना भारतीय व्यापार की लोकप्रियता को प्रमाणित करता है।। यूनान में इसे गजेटिका के नाम से पुकारा जाता था। मदन मोहन मालवीय के कथनुसार – "रोम जैसे नगरों में भारतीय वस्तुओं मांग बहुत अधिक थी। भारत के पास एक विशाल जहाजी बेड़ा था, जिसके माध्यम से वह विदेशी व्यापार करता था। भारत में दूसरे देशों से कई वस्तुओं का आयात भी किया जाता था। जैसे चीन से चीनी मिट्टी के बर्तन, रेशम और लंका से मोती आदि।"[2]

---

[2] राम शरण शर्मा-प्राचीन भारत, कक्षा-द्वितीय, एन0सी0ई0आर0टी0, पृ0-64

हड़प्पा संस्कृति के दौरान व्यापार

सिन्धु सभ्यता के लोगों के जीवन में व्यापार का बड़ा महत्व था। हड़प्पाई लोग सिन्धु सभ्यता क्षेत्र के भीतर पत्थर, धातुशल्क (हड्डी) आदि का व्यापार करते थे। लेकिन वे जो वस्तुएँ बनाते थे उनके लिए अपेक्षित कच्चा माल उनके नगरों में उपलब्ध नहीं था। अपने तैयार माल और सम्भवतः अनाज भी नावों और बैलगाड़ियों पर लाद कर पड़ोस के इलाकों में ले जाते थे और उन वस्तुओं के बदले धातुएँ ले आते थे।

2350 ई0पू0 के आस पास और उसके आगे के मेसोपोटामियाई अभिलेखों में मेलुहा के साथ व्यापारिक सम्बन्ध की चर्चा है। मेलुहा सिन्धु क्षेत्र का प्राचीन नाम है। हड़प्पाई लोगों का वाणिज्यिक सम्बन्ध राजस्थान के एक क्षेत्र से था और अफगानिस्तान और ईरान से भी था। उन्होंने उत्तरी अफगानिस्तान में एक वाणिज्य उपनिवेश स्थापित किया था, जिसके सहारे उनका व्यापार मध्य एशिया के साथ चलता था। उनके नगरों का व्यापार दजलाफरात प्रदेश के नगरों के साथ चलता था।

बुद्ध काल में व्यापार

बुद्ध काल के सभी प्रमुख नगर नदी के किनारे और व्यापार मार्गों के पास बसे थे और एक दूसरे से जुड़े थे। श्रावस्ती नगरी कौशाम्बी और वाराणसी दोनों से जुड़ी थी। वाराणसी बुद्ध के युग में एक महान व्यापारिक केन्द्र था। सौदागर पटना में गंगापार करके राजगीर जाते थे। मुद्रा के प्रचलन से व्यापार को बढ़ावा मिला। वैदिक काल में लेन-देन का काम वस्तु-विनिमय प्रणाली से चलता था और कभी-कभी पशु का लेन-देन भी मुद्रा की तरह किया जाता था।

मध्य एशिया से सम्पर्क और व्यापार

देश के अन्दर विदेशियों के आने से मध्य एशिया और भारत के बीच घने सम्पर्क स्थापित हुए। परिणामस्वरूप भारत को मध्य एशिया के अल्लाई पहाड़ों से भारी मात्रा में सोना प्राप्त हुआ। भारत को रोमन साम्राज्य के साथ व्यापार के जरिए सोना मिलता था।

चोल राज्य व्यापार और वाणिज्य का बहुत बड़ा केन्द्र था। चोलों के वैभव का एक मुख्य श्रोत सूती कपड़े का

व्यापार था। अपने प्राकृतिक संसाधनों और विदेशी व्यापार से काफी लाभ उठाते रहे। वे मसाले विशेषकर गोल मिर्च उपजाते थे। जिनकी पश्चिमी दुनिया में बहुत मांग थी। उन्हें अपने हाथियों से दांत मिलते थे जो पश्चिम में काफी मूल्यवान समझे जाते थे। समुद्र से मोती प्राप्त होता था। और खानों से रत्न और इन दोनों चीजों का निर्यात पश्चिम में भारी मात्रा में किया जाता था। इसके अलावा, वे मलमल और रेशम भी पैदा करते थे। उनका कपड़ा साँप के केचुल जैसा पतला होता था। उरैऊर का कपास व्यापार नामी था। प्राचीन काल में तमिल लोग एक ओर मिस्र और अरब के यूनानी या हेलेनिस्टिक राज्य के साथ और दूसरी ओर मलयद्वीप समूह के साथ और वहाँ से चीन के साथ व्यापार करते थे। जब ईसा की पहली सदी के आस-पास मिस्र रोम का एक प्रांत हो गया और मानसून का पता लग गया, तब इस व्यापार को अपार बल मिला। इस तरह ईसा की आरम्भिक ढ़ाई सदियों तक रोम के साथ दक्षिण के राज्यों का लाभप्रद व्यापार चलता रहा।

मौर्य काल में विदेशी व्यापार

इस काल में भारत और पूर्वी रोमन साम्राज्य के बीच बड़े पैमाने पर व्यापार होता था। यह व्यापार अधिकतर स्थल मार्ग से होता था। भारत और रोम के बीच व्यापार तो भारी मात्रा में चला, लेकिन इस व्यापार में साधारण लोगों के रोजमर्रे के काम की चीजें शामिल नहीं थीं। बाजार में विलासिता की वस्तुयें खूब बिकती थीं। रोम वाले मुख्यतः मसालों का आयात करते थे। जिनके लिए दक्षिण भारत मशहूर था। वे मध्य और दक्षिण भारत से मलमल, मोती रत्न और माणिक्य का आयात करते थे। लोहे की वस्तुएँ खासकर बर्तन रोमन साम्राज्य में भेजी जाने वाली महत्वपूर्ण वस्तुएँ थीं। मोती, हाथी दांत, रत्न और पशु विलास की वस्तुयें मानी जाती थी, किन्तु पौधे और उसके समान लोगों की धार्मिक अन्तिम संस्कार विषयक, पाक सम्बन्धी और औषधीय आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे।

भारत से सीधे भेजे जाने वाली वस्तुओं के अलावा कुछ वस्तुएँ चीन और मध्य एशिया से भारत आती थीं और तब यहां से रोमन साम्राज्य के पूर्वी भागों में भेजी जाती थीं।

रेशम चीन से सीधे रोमन साम्राज्य को अफगानिस्तान और ईरान से गुजरने वाले रेशम मार्ग से भेजा जाता था। लेकिन बाद में, जब ईरान और उसके पड़ोस के क्षेत्रों में पार्थियनों का शासन हो गया तब इसमें कठिनाई पैदा हुई। अतः रेशम रास्ता बदलकर इस उप महाद्वीप के पश्चिमोत्तर भाग से होते हुए पश्चिमी भारत के बन्दरगाहों पर आने लगा। कभी–कभी चीन से रेशम भारत के पूर्वी समुद्र तट होते हुए भी भारत आता था, तब वह यहां से पश्चिम को जाता था। इस प्रकार भारत और रोमन साम्राज्य के बीच रेशम का पारगमन व्यापार काफी चला।

उज्जयिनी से अगेट (गोमेद) और कार्नेलियन (इन्द्रगोप) पत्थरों का निर्यात होता था। भारत रोमन साम्राज्य के पूर्वी भाग और मध्य एशिया के साथ भी व्यापार करता था। इस्पात बनाने की कला सबसे पहले भारत में ही विकसित हुई थी। भारतीय इस्पात का अन्य देशों में निर्यात ईसा–पूर्व चौथी सदी से होने लगा। विश्व का कोई अन्य देश इस्पात की वैसी तलवारें नहीं बना सकता था। जैसी भारतीय

शिल्पी बनाते थे। पूर्वी एशिया से लेकर पूर्वी यूरोप तक इन तलवारों की भारी मांग थी।

मध्यकाल में भारतीय व्यापार

मुगलकाल में विदेशी आक्रमणें तथा देश की आन्तरिक लड़ाइयों के कारण उत्पन्न स्थितियों ने यहाँ के व्यापार को कम कर दिया। इस काल का व्यापार मुख्य रूप से उन थल मार्गों से हुआ जिन्हें सिकन्दर के समय इस उद्देश्य के लिए ढूंढा जा चुका था। 1271 से 1294 ई0 तक भारत का भ्रमण करने वाले मार्कोपोलो ने लिखा है "भारत अभी भी एशिया के मुख्य बाजारों में से एक था।"

श्री बी0 नारायण ने लिखा है कि – "भारत के व्यापार में विलासिता की वस्तुओं की भरमार थी, उस समय भारत का व्यापार और भुगतान संतुलन इसके पक्ष में था। इसके पास स्वर्ण राशि इतनी थी कि इसे सोने की चिड़िया के नाम से सम्बोधित किया जाता था।" [3] सम्राट अकबर के काल में पुर्तगाली, अंग्रेज और डच आदि विदेशी जातियों को भारत

---

[3] डॉ डी0एन0 गुर्दू-अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, कालेज बुक डिपो, जयपुर-2, 1971-72, पृ0-440

में व्यापारिक सुविधायें दी जाने लगीं। ऐसा होने से भारत का विदेशी व्यापार यद्यपि विकसित हुआ किन्तु उसकी भारतीयता जाने लगी और यह धीरे-धीरे यूरोपीय जातियों के हाथों में पहुंच गया। करेरी के अनुसार – "सारे संसार का सोना और चांदी घूम-फिर कर अन्त में भारत ही पहुंचता था।" देश में राष्ट्रीय जागृति का अभाव होने के कारण भारतीय व्यापार ब्रिटिश कम्पनी हाथों में चला गया।

सोने और चांदी के लिए भारत की जो ख्याति थी, वह भारत के अनुकूल विदेशी व्यापार के कारण थी। अथाह सोना और चांदी विदेशी व्यापार के जरिये देश में आता था। भारतीय वस्त्रों लोबान तथा मसालों की अमीर अरबी शासकों द्वारा मांग के कारण भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के साथ व्यापार बढ़ा। बाद में यह चलकर यह क्षेत्र मसालों के द्वीप के नाम से पुकारा जाने लगा। भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के मध्य छठीं शताब्दी से ही जोरदार व्यापार चल रहा था।

रोमन साम्राज्य के पतन के साथ हिन्द महासागर में चीन व्यापार का एक मुख्य आकर्षण केन्द्र बन गया। चीन के लोग बहुत बड़ी संख्या में मसालों का व्यापार करते थे।

जिसका आयात दक्षिण पूर्व एशिया और भारत से किया जाता था। वे सवोत्तम हाथी दांत भी अफ्रीका से और शीशे का सामान पश्चिम एशिया से आयात करते थे। भारत और दक्षिण पूर्व एशिया दोनों ही चीन पश्चिम एशियाई देश और अफ्रीका के मध्य होने वाले व्यापार के केन्द्र स्थल बन गये थे। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सौदागर भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बन्दरगाहों को चुनते थे।

जापान को कपास से परिचित कराने का श्रेय दो भारतीयों को है। जो समुद्री लहरों के साथ बहते हुए जापान पहुंच गये थे। धीर–धीरे भारतीय व्यापार अरबों और चीनियों के मुकाबले में कम होता गया क्योंकि इनके जहाज भारतीय जहाजों की तुलना में विशाल द्रुतगामी थे।

दिल्ली सल्तनत के दौरान विदेशी व्यापार

भारतीय वस्त्रों की लाल सागर और फारस की खाड़ी के देशों में बड़ी खपत थी। इस काल में चीन में भी अच्छे किस्म के भारतीय वस्त्रों का प्रचलन हुआ, जहाँ उसको रेशमी वस्त्र से भी ज्यादा महत्व दिया जाने लगा। भारत

उत्तम श्रेणी के वस्त्रों, शीशे के सामान और घोड़े भी पश्चिम एशिया से आयात करता था। चीन से यह कच्चे रेशम और चीनी मिट्टी के बर्तन मंगाता था। भारत का थल और जल मार्ग से होने वाला विदेशी व्यापार, वस्तुतः एक अन्तर्राष्ट्रीय उद्योग था।

रोमन काल से ही पाश्चात्य देशों में पूर्वी व्यापारिक वस्तुओं की बड़ी खपत थी। इनमें चीन के रेशम व भारत, दक्षिण-पूर्व एशिया के मसाले व जड़ी-बूटियों की मांग प्रमुख थीं। यूरोप में आर्थिक पुनरूत्थान के बाद इस मांग में और भी वृद्धि हुई। इसमें काली मिर्च व मसालों की मांग मुख्य रूप से थी। ये मसाले व विशेष रूप से काली मिर्च, लीवान्त, मिस्र तथा काले सागर के बन्दरगाहों तक मुख्यतः थल मार्ग द्वारा लायी जाती थी व इसका कुछ हिस्सा भारत और दक्षिण पूर्वी बन्दरगाहों से जल मार्ग द्वारा भी भेजा जाता था।

भारत में सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध के शासकों ने ईरानियों, तुर्कों तथा उजबेकों जैसी पड़ोसी शक्तियों के साथ भारत के सम्बन्ध अच्छे बनाने में सक्रिय योगदान दिया। इससे भारत के विदेशी व्यापार की संभावनायें बढ़ीं, उन्होंने विभिन्न

यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों को जो छूट दी उससे भी भारत का विदेश व्यापार काफी बढ़ा।

मुगलकाल में विदेशी व्यापार

भारत में ऐसे बहुत से बन्दरगाह और कस्बे थे जहाँ से संसार के विभिन्न देशों से व्यापार होता था। मुगलकाल में भारत पड़ोस के कुछ देशों को विशेष रूप से चावल और चीनी जैसे खाद्य पदार्थ निर्यात करता था। सूती कपड़े बनाने के उद्योग में विस्तार के लिए आवश्यक कच्चा माल भी ग्रामीण क्षेत्र से उपलब्ध हो जाता था। गुजरात विदेशी माल के लिए प्रवेश द्वार था। भारत दक्षिण–पूर्वी एवं पश्चिम एशिया के कई देशों को चीनी, चावल आदि जैसे खाद्य पदार्थ ही नहीं भेजता था, बल्कि इस क्षेत्र के व्यापार में भारत के सूती कपड़े की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका थी।

"भारत खाने और औषधियों के कुछ मसाले जंगी घोड़े और विलासिता की वस्तुएँ भी आयात करता था। सोने और चाँदी के आयात से व्यापार में भारतीय व्यापार के पक्ष में संतुलन पैदा हुआ। भारत के विदेशी व्यापार के विकास के

फलस्वरूप सत्रहवीं शताब्दी में भारत ने सोने और चाँदी का आयात इतना बढ़ गया था कि "विश्व के प्रत्येक भाग में चक्कर काटने के बाद सोना और चाँदी अन्त में भारत में जो सोने और चाँदी की दलदल है, दफन हो जाता है।"[4]

भारतीय व्यापारी कपड़े के व्यापार के मामले में देशी और विदेशी दोनों बाजारों के बारे में ज्यादा जानकारी रखते थे। इसके अतिरिक्त भारतीय दस से पाँच प्रतिशत तक के मुनाफे पर व्यापार के लिए तैयार थे। मुगलों ने शुद्ध चांदी के रुपयों का प्रचलन आरम्भ किया, जिसकी सारे भारत में ही नहीं वरन् विदेशों में भी मान्यता थी और इससे भारत के व्यापार को और भी बढ़ावा मिला।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी और भारतीय विदेशी व्यापार

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना 1601ई0 में की गयी। प्रारंभिक दौर में अंग्रेजों के अलावा फ्रांसीसी, डच और पुर्तगाली लोग भी भारत के विदेशी व्यापार में भाग लेते थे। लेकिन धीरे-धीरे ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने

---

[4] मध्यकालीन भारत, कक्षा-द्वितीय, एन0सी0ई0आर0टी0 (800ई0 से 1200 ई0 तक)

भारतीय व्यापार पर एकाधिकार कर लिया। शुरूआत में कम्पनी ने भारतीय उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन दिया और यहाँ की मलमल तथा अन्य कपड़ों का बड़े पैमाने पर निर्यात किया। जब इंग्लैण्ड में व्यापारियों द्वारा भारतीय माल की अत्यधिक लोकप्रियता का विरोध किया गया तो नीति में परिवर्तन कर दिया गया। इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति के कारण कच्चे माल की आवश्यकता और निर्मित माल के लिए बाजारों की आवश्यकता महसूस किया जाने लगा। फलस्वरूप भारतीय उद्योग धन्धों को नष्ट किया जाने लगा। सरकार के ने ऐसा कानून बनाया जिनके अनुसार भारतीय माल का उपयोग करने वालों को दण्ड देने की व्यवस्था की गयी। इस प्रकार अब भारत ग्रेट ब्रिटेन को केवल कच्चा माल निर्यात करने वाला देश रह गया। भारतीय व्यापार के मध्यस्थ प्रायः अंग्रेजी फर्म थी जिन्होंने पर्याप्त धन कमाया।

स्वेज नहर के बनने से भारतीय व्यापार का एक नया युग प्रारम्भ हो गया। 1869ई 0 में भारत के विदेशी व्यापार की राशि केवल 90 करोड रूपये थी, वह 1913-14 में 376 करोड़ रूपये तक पहुँच गयी। यातायात के साधनों के

विकास ने धीर-धीरे परिस्थितियाँ बदल दीं। भारत पहले जिन वस्तुओं का निर्यात करता था अब उन्हीं का आयात करने लगा। अंग्रेजी साम्राज्य की शोषणकारी नीतियों ने भारत में स्वतंत्र व्यापार को नहीं पनपने दिया और उसके स्थान पर ब्रिटिश माल को प्राथमिकता प्रदान की गयी। तथा दूसरी जगह से आये हुये माल पर अनेक प्रतिबंध लगाया गया।

1818 में कम्पनी का एकाधिकार समाप्त हो गया। 1874 तक प्रायः सभी वस्तुओं पर से निर्यात कर हटा लिया गया। 1893 में एकाधिकार को हटाने की प्रक्रिया पूरी हो गयी और भारत में स्वतन्त्र व्यापार को थोड़ा प्रोत्साहन मिला। जापान और जर्मनी आदि देशों ने भारत के विदेशी व्यापार में पर्याप्त रूचि ली। धीरे-धीरे मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई और कराची व्यापार की दृष्टि से महत्वपूर्ण बन्दरगाह बन गये।

प्रथम महायुद्ध के समय भारतीय व्यापार

प्रथम महायुद्ध के समय भारतीय व्यापार को काफी हानि उठानी पड़ी थी और अब तक हासिल की हुई उसकी प्रगति समाप्त हो गई। जिस समय प्रथम विश्व युद्ध प्रारम्भ

हुआ था, उस समय देश में शान्ति थी, रूपये का मूल्य स्थिर था और सरकार यातायात, संचार एवं सिंचाई आदि कामों में सक्रिय आदि कामों में सक्रिय रूचि ले रही थी। जब युद्ध प्रारम्भ हुआ तब भारत में आयातों की मात्रा कम हो गई, इसके अलावा अनके ऐसा प्रतिबंध लगाया गया जिससे भारत का निर्यात बुरी तरह घट गया। भारत में मशीनों का आयात बन्द हो गया और इसलिये अब तैयार माल विदेशों को नहीं भेजा जा सका। युद्ध के परिणामस्वरूप प्रत्येक देश आत्म-निर्भर बनने का प्रयास करने लगा जिससे भारतीय व्यापार को धक्का लगा। भारत के सभी ग्राहक गरीब बन गये, युद्ध का व्यय उठाने के लिये उन्हें अपने आयातों में कमी करनी पड़ी। उस समय भारत में विनिमय की स्थिति बिगड़ गई। मजदूरों की हड़ताल और दूसरी कठिनाइयों ने भारतीय उद्योगों के विकास पर रोक लगा दिया। उस समय बिगड़ी हुई खराब स्थिति को देखकर भारतीय जनता ने विदेशी माल का बहिष्कार करना आरम्भ कर दिया। उसके बाद भारत इंग्लैण्ड की अपेक्षा अन्य देशों से भी आयात करने लगा। उस

दौरान भारत में सूती उद्योग का विकास हुआ और इसलिये कपड़े का आयात कम हो गया।

स्वतंत्रता-पूर्व भारत का विदेशी व्यापार

भारत के प्राचीन काल से ही विभिन्न देशों से व्यापक व्यापारिक सम्बन्ध रहे हैं। लगभग 5,000 वर्ष पूर्व भारत का मिश्र तथा बेबीलोन से बहुत बड़ी मात्रा में व्यापार होता था। हमारे देश में निर्मित ढाके की मलमल विश्वविख्यात थी। उस समय भी हमारे देश के व्यापारियों के पास बड़े-बड़े जहाज थे जिनके द्वारा विभिन्न देशों के साथ बड़ी मात्रा में व्यापार किया जाता था। भारत की निर्यात की प्रमुख वस्तुओं में उस समय मुख्यतया धातु का सामान, सूती, कपड़ा, हाथी दांत, रंग, इत्र, कला की वस्तुएं तथा मसाले आदि थे। इसके अतिरिक्त अरब, फारस, इंग्लैण्ड आदि को हमारे यहाँ से लोहा एवं इस्पात भी भेजा जाता था। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनका वजन अपेक्षाकृत कम होता था, और उनमें नक्काशी व कारीगरी की विशिष्ट भूमिका हुआ करती थी। हिन्दू व मुगल शासकों ने विदेशी व्यापार के प्रोत्साहन को अपनी नीति में विशेष स्थान दिया।

मुगलकाल में विदेशी व्यापार में वृद्धि करने के लिए नये थलमार्गों का निर्माण किया गया जिसमें पड़ोसी देशों से व्यापारिक सम्बन्धों में वृद्धि हुई।

ब्रिटिश शासन–प्रणाली के अन्तर्गत भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा एवं विशेषता में अमापनीय क्षति हुई। ब्रिटिश लोगों ने अपनी राजनीतिक शक्ति के सहारे भारतीय व्यापार के ढाँचे को पूर्णतया उलट दिया। उन्होंने व्यापार की दिशा में एक द्वैत नीति का अनुसरण किया जिसके अनुसार ब्रिटेन में निर्मित सामान भारत में स्वतंत्रता पूर्वक बिक सकता है तथा दूसरी ओर भारतीय निर्यात को हतोत्साहित किया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत के उद्योग नष्ट हो गये। भारत इंग्लैण्ड में बनी वस्तुओं का मुख्य ग्राहक बन गया। और स्वयं कच्चे माल का निर्यातक हो गया। इस नीति के कारण भारत में छोटी–छोटी वस्तुओं का भी उत्पादन बन्द हो गया और वे इंग्लैण्ड से आती रही। इस प्रकार इंग्लैण्ड ने भारत के विदेशी व्यापार को एवं भारतीय उद्योग को नष्ट करने एंव व्यापार लाभों को समग्र रूप से अपने देश ही में केन्द्रित करने के लिए भारतीय व्यापार एवं उद्योग धन्धों का व्यापारिक

शोषण किया हर क्षेत्र में उत्पादन पद्धति एवं उत्पादन कलाओं को नष्ट करने का प्रयास किया, जैसा कि औपनिवेशिक स्थिति में सामान्यतया होता है। अंग्रेजों की मुक्त व्यापार-नीति ने हमारे कुटीर उद्योगों को विनष्ट ही कर दिया। 1929 की महान विश्वव्यापी मन्दी ने भारत के विदेशी व्यापार पर अत्यधिक प्रभाव डाला, इस मन्दी के कारण कृषि पदार्थों के मूल्यों में बहुत कमी आ गई और हमारे निर्यात की प्राप्ति से अत्यन्त कम आय हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के समय कच्चे माल की मात्रा और कीमतों में वृद्धि हुई, जिसका परिणाम यह हुआ कि निर्यात की आय में वृद्धि हुई। वर्ष 1939-40 में 204 करोड़ रूपये का निर्यात किया गया जबकि 1938-39 में 163 करोड़ रूपये का सामान निर्यात किया गया था। 1939-40 में 165 रूपये का सामान आयात किया गया था जिससे यह प्रतीत होता है कि भुगतान-संतुलन पक्ष में था। महायुद्ध के पश्चात् विदेशी व्यापार की मात्रा में वृद्धि हुई। वर्ष 1944-45 में भारत का कुल विदेशी व्यापार 414 करोड़ रूपये का हुआ था।

जहाँ तक द्वितीय महा विश्व युद्ध के दौरान भारतीय व्यापार की दिशा का प्रश्न है, देश के निर्यातों की कुल मात्रा का 53.6 प्रतिशत कामनवेल्थ देशों को होता था तथा इसमें ब्रिटेन का स्थान सर्वोपरि (34 प्रतिशत) था। इसके बाद जापान (8.8 प्रतिशत) और अमरीका (8.4 प्रतिशत) का स्थान था। आज के यूरोपियन साझा बाजार के देशों को हमारा 15 प्रतिशत निर्यात होता था। युद्ध के कारण भारतीय निर्यात प्रतिकूल ढंग से प्रभावित हुए, परन्तु द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होने के बाद भारत के विदेशी व्यापार में आमूल परिवर्तन हुआ है। युद्धकाल समाप्त होते ही उपभोक्ता एवं पूँजीगत दोनों प्रकार के मालों की मांग बढ़ने लगी। साथ ही, युद्धकाल से ही देश के अन्तर्गत खाद्यान्न के अभाव की समस्या उपस्थिति थी, जिसे दूर करने के लिए विदेशों से अत्यधिक मात्रा में अन्न के आयात की आवश्यकता आ पड़ी। इस प्रकार, युद्ध के पश्चात् आयात में अत्यधिक वृद्धि हुई, किन्तु निर्यात में इस दर से वृद्धि नहीं हुई। इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति का समय आते-आते हमारा व्यापार संतुलन प्रतिकूल स्थिति में आ गया।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत का विदेशी व्यापार

स्वतंत्रता के बाद का प्रथम दशक भारतीय अर्थव्यवस्था में चुनौती का काल था। कुछ लोग इसे प्रारम्भिक निर्माण का काल भी कहते हैं। भारत का प्रथम 1949 में अपनी मुद्रा का अवमूल्यन करना पड़ा था जिसका मुख्य कारण पाकिस्तान द्वारा जूट एवं कपास को प्राप्त करने वाली शर्त थी, परन्तु पाकिस्तान ने काफी समय तक अपनी मुद्रा का अवमूल्यन नहीं किया जिसका कि हमारे व्यापार संतुलन पर विपरीत प्रभाव पड़ा। अतः सरकार ने विदेशी व्यापार की इस विषम स्थिति को देखते हुए सुधारात्मक कदमों पर बल दिया और आयात नियंत्रित करने तथा निर्यात को प्रोत्साहित करने का कार्य प्रारम्भ किया। स्वतंत्रता प्राप्त के पश्चात् किये गये विभिन्न प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत विदेशी व्यापार की मात्रा, निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की संख्या तथा उनकी गुणवत्ता में महत्वपूर्ण सुधार हुए। भारत के निर्यात और आयात व्यापार सूची में नवीन वस्तुएँ (गैर-परम्परागत) और नवीन बाजार जुड़े विशेष रूप से 1951 से नियोजित विकास प्रक्रिया के आरम्भ होने से विदेशी व्यापार में बहुत

महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अतः विदेशी व्यापार के मुख्य पहलुओं को अलग-अलग लेकर उनमें हो रहे परिवर्तनों का हम विवेचन करेंगे।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हमारे देश का विभाजन हुआ जिसके कारण कपास व जूट, जो देश की प्रमुख निर्यात-वतुएँ थीं, के उत्पादक क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये। इस विभाजन का हमारे देश के विदेशी व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इसके साथ ही साथ विभाजन के समय विभाजित जनसंख्या की तुलना में भौगोलिक क्षेत्र का अधिक प्रतिशत पाकिस्तान में चला गया, परिणाम स्वरूप विभाजित भारत को अधिक जनसंख्या के भरण-पोषण की जिम्मेदारी उठानी पड़ी और निर्यात हेतु अतिरेकों की कमी हो गयी, लेकिन स्वतंत्रता के बाद नियोजित-प्रयासों के कारण निर्यात बढ़ाने के प्रयास किये गये। परन्तु ब्रिटिश शासन काल में समस्त औद्योगिक एवं व्यापारिक संरचना क्षतिग्रस्त हो चुकी थी, इसलिए उसे पुनः जीवित एवं विकसित करने के लिए कच्चे माल एवं आधार-भूत मशीनरी के आयात में भारी वृद्धि हुई। साथ ही साथ विभाजन के समय देश के प्रमुख खाद्यान्न उत्पादक क्षेत्र

यथा–पश्चिमी पंजाब, सिन्ध एवं पूर्वी बंगाल पाकिस्तान में चले गये, जो गेहूं और चावल के प्रमुख उत्पादक क्षेत्रों में थे। इसके कारण हमें खाद्यान्नों का भी आयात करना पड़ा न केवल कच्चे माल, भारी मशीनरी व खाद्यान्नों का आयात करना पड़ा, बल्कि ऊँची कीमत पर विदेशी तकनीकी ज्ञान का भी आयात करना पड़ा है, इस प्रकार 1947 में स्वंत्रता प्राप्ति के समय हमारे व्यापार में असंतुलन व्याप्त था।

विदेशी व्यापार की मात्रा

नियोजन काल के विगत लगभग चार दशकों अर्थात् स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही भारत के विदेशी व्यापार में उत्तरोत्तर बृद्धि हुई है। भारत के विदेशी व्यापार का कुल मूल्य 1950–51 में 1200 करोड़ रूपये था, जो कि 1960–61 में 1800 करोड़ रूपये, 1970–71 में 3169 करोड़ रूपये और 1980–81 में बढ़कर 19235 करोड़ रूपये का हो गया तथा 1994–95 में कुल विदेशी व्यापार लगभग 121317 करोड़ रूपये का हो गया। इस प्रकार 1950–51 से 1994–95 की अवधि में भारत में कुल विदेशी व्यापार के मूल्य में लगभग 70 गुना से अधिक वृद्धि हुई। विदेशी

व्यापार में आयात एवं निर्यात दोनों की मात्रा निरन्तर बढ़ती गयी। हाँ यह अवश्य है कि कुल विदेशी व्यापार में आयातों का भाग अपेक्षाकृत अधिक था। 1950-51 के कुल विदेशी व्यापार के मूल्य में आयातों का मूल्य 650 करोड़ रूपये था। योजना पूर्वानुमानों से संकेत संकेत मिलता है कि निर्यात जो 1990-91 में 32553 करोड़ का था, वह 1998-99 में बढ़कर 101850 करोड़ रूपये का हो गया। परन्तु सम्पूर्ण अवधि को देखा जाय तो निष्कर्ष यही मिलता है कि हमारे आयात-निर्यात से अधिक रहे हैं। वर्ष 1972-73 एवं 1976-77 को छोड़कर शेष अन्य सभी वर्षों में हमारा व्यापार संतुलन प्रतिकूल ही रहा है तो निम्नवत् है :

तालिका–1
भारत का विदेशी व्यापार करोड़ रूपये में

वर्ष	आयात	निर्यात	व्यापार–संतुलन
1950–51	650.21	600.64	– 49.57
1960–61	1139.69	660.22	– 479.47
1970–71	1634.20	1535.16	– 88.04
1972–73	1867.80	1971.00	+ 104.00
1973–74	2955.37	2523.40	– 431.97
1975–76	5265.20	4042.25	– 1222.95
1976–77	5073.79	5142.25	+ 68.46
1979–80	9021.75	6458.76	– 2562.99
1980–81	12523.91	6710.71	– 5813.20
1984–85	16000.00	10000.00	– 6000.00
1990–91	43198.00	32553.00	– 10640.00
1997–98	151553.00	126286.00	– 25268.00
1998–99	132447.00	101850.00	30597.00
1999–2000	215236.00	159561.00	55675.00
2000–2001	230873.00	203571.00	27302.00
2001–2002	181753.00	154445.00	27308.00
अप्रैल से दिसम्बर तक			

इस तालिका से यह प्रतीत होता है कि भारत के विदेशी व्यापार में निरन्तर वृद्धि हो रही है। खाद्यान्न संकट और विकास की आवश्कताओं को पुरा करने के लिए आयात बढ़ाने का प्रयास हुआ और साथ ही साथ इस बात की कोशिश की गयी कि निर्यातों में वृद्धि हो। तालिका से यह स्पष्ट हो चुका है कि कुल व्यापार में निर्यातों की तुलना में आयातों के मूल्य अधिक रहे हैं, यद्यपि 1998-99 में निर्यातो की प्रतिशत वृद्धि दर कम रही है। आयात में वृद्धि के मुख्य कारण थे - मशीनों एवं कच्चे माल और पेट्रालियम के आयात में वृद्धि तथा विभिन्न वर्षो में मानसून के प्रतिकूलता के कारण कृषि उत्पादन में उतार-चढ़ाव हुए, जिससे भारी मात्रा में खाद्यान्नों का आयात करना पड़ा। निर्यातों के मूल्य इस कारण अधिक नहीं हो सके, क्योंकि निर्यात-योग्य वस्तुओं का अधिक उत्पादन नहीं हो सका और कुछ वस्तुएं जो उत्पन्न की गई, वे आयात प्रतिस्थापन के रूप में थी।

तालिका-2

विश्व व्यापार में भारत का अंश (प्रतिशत)

वर्ष	निर्यात	आयात	व्यापार
1950	1.85	1.71	1.78
1960	1.03	1.69	1.36
1970	0.64	0.65	0.65
1980	0.42	0.72	0.57
1990	0.52	0.66	0.59
1991	0.50	0.56	0.53
1992	0.53	0.61	0.57
1995	0.60	0.60	0.60
1999	0.60	0.8	0.7

भारत का विदेशी व्यापार विश्व के लगभग सभी देशों के साथ है, 7500 से भी अधिक वस्तुएँ लगभग 190 देशों को निर्यात की जाती है, जबकि 6000 से अधिक वस्तुएँ 140 देशों से आयात की जाती हैं, स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है, जो तालिका 2 मे प्रदर्शित है।

आयात में वृद्धि के कारण

नियोजन प्रक्रिया के पूर्व एवं पश्चात् आयात में वृद्धि होने के मुख्य कारण निम्न रहे हैं :

1. युद्ध के दौरान उपभोक्ताओं की मांग की पूर्ति न होने के कारण युद्ध के तुरन्तु बाद ही उपभोक्तओं की मांग में तेजी से वृद्धि हुई। युद्ध के दौरान वस्तुओं के उपलब्ध न होने के कारण उपभोक्ता अपने धन को अपनी आवश्यकता की वस्तुएं खरीदने में उपयोग नहीं कर पाते थे। इसी प्रकार मशीनों आदि का समय में प्रतिस्थापन न होन का

कारण उनकी मांग में भी वृद्धि हुई। अतः आयात बढ़ा।

2. देश का बंटवारा और तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण भारत को बड़े पैमाने पर खाद्यान्नों का आयात करना पड़ा, वर्ष 1947-48 तक खाद्यान्नों का आयात 30 लाख टन तक पहुंच गया, इसके बाद 1965-66 एवं 1966-67 से तो प्रतिवर्ष लगभग 10 लाख टन से अधिक खाद्याान्नों का आयात करना पड़ा।

3. देश विभाजन के कारण कुछ अन्य वस्तुओं जैसे-पटसन इत्यादि के उत्पादन में जो कमी आई, उसे पूरा कररने के लिए भी भारत को इन वस्तुओं का आयात करना पड़ा।

4. जून 1966 में रूपये का अवमूल्यन किया गया जिससे आयातों के लिए अधिक कीमत देनी पड़ी। 1973-74 में पेट्रोलियम पदार्थो की कीमत में भारी वृद्धि होने के कारण समान मात्रा में पेट्रोल

और पेट्रोल पदार्थों के आयात के लिए अधिक कीमत देनी पड़ी थी। परन्तु 1991 के खाड़ी युद्ध के कारण मूल्यों में अब और वृद्धि हो गयी है।

5. नियोजन प्रक्रिया में आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने एवं औद्योकरण को बढ़ाने के लिए पूंजीगत वस्तुओं का बड़ी मात्रा में आयात किया गया। नियोजन काल में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के विकास के नये कार्यक्रम प्रारम्भ किये बहुउद्देशीय सिंचाई योजना, उर्वरक का उत्पादन, मशीनों का प्रतिस्थापन, रेल के डिब्बों का निर्माण इन सभी योजनाओं के कारण सरकार को भारी मात्रा में पूंजी का आयात करने की आवश्यकता हुई, जिससे हमारे आयात में वृद्धि हुई।

निर्यात में वृद्धि के कारण

आयातों के साथ ही साथ हमारे निर्यातों में भी वृद्धि हुई, यद्यपि की आयातों की तुलना में यह वृद्धि की दर कम रही है। हमारे निर्यात में 1950-51 से 1970-71 की

अवधि तक वृद्धि की दर बहुत ही मन्द रही है। नियोजन प्रक्रिया के प्रथम दशक में तो लगभग स्थिरता सी रही है। परन्तु 1970-71 के बाद से निर्यातों में तेजी से वृद्धि की प्रवृत्ति पायी जाती है। वर्ष 1970-71 में हमारा निर्यात कुल 1535 करोड़ रूपये का था जो वर्ष 1998-99 में बढ़कर 101850 करोड़ रूपये का हो गया। निर्यात वृद्धि के भिन्न कारण रहे हैं :

1. निर्यात व्यापार में वृद्धि करने के लिए वर्ष 1949 में प्रथम बार भारतीय रूपये का अवमूल्यन करना पड़ा था, उसके बाद 1966 में, द्वितीय बार पुनः अवमूल्यन किया गया। परन्तु अवमूल्यन के परिणामस्वरूप निर्यात में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो पायी। फिर भी डालर क्षेत्र में अस्थायी प्रोत्साहन मिला और निर्यात पर अनुकूल प्रभाव पड़ा तथा निर्यातो में वृद्धि हुई। इस श्रंखला में 1991 में पुनः तीसरी बार रूपये का अवमूल्यन कर दिया गया।

2. निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार द्वारा अनेक उपाय किये गये। सरकार ने प्रमुख वस्तुओं पर निर्यात–शुल्क कम कर दिया। साथ ही निर्यात में वृद्धि के लिए कई निर्यात विकास परिषदों की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त, 1962 ई0 में एक व्यापार की स्थापना की गई। भारत के विभिन्न देशों के साथ द्विपक्षीय समझौते हुए। द्विपक्षीय समझौते दो देशों के बीच होते हैं। अल्पकाल के लिए होने के कारण इनकी प्रभाविता अधिक होती है। भारत, रूस, भारत–जापान, भारत–बंग्लादेश, भारत–नेपाल आदि द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते के कारण निर्यात व्यापार में वृद्धि हुई। समाजवादी देशों के साथ द्विपक्षीय व्यापारिक समझौता हो जाने के कारण निर्यातों को अधिक प्रोत्साहन मिला।

3. कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादन मे नियोजन के द्वितीय दशक में अधिक वृद्धि हुई इससे निर्यात न केवल बढ़ा, बल्कि उसमें विविधता भी आई।

उत्पादन वृद्धि से निर्यात अधिक सम्भव हो सका। नवीन निर्यात क्षमता बढ़ी, वरन् इससे नवीन व्यापार मिले और पहले से उपलब्ध व्यापारों में निर्यात सम्भावना भी बढ़ी। परम्परागत वस्तुओं के निर्यात से गैर परम्परागत वस्तुओं के निर्यात की ओर अग्रसर हुए, इसके साथ ही साथ परम्परागत निर्यात वस्तुओं, यथा कृषि पदार्थ, खनिज पदार्थ, कपास तथा पटसन की वस्तुओं के निर्यात पर और अधिक जोर दिया गया। इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नियोजन प्रयासों के फलस्वरूप हमारे निर्यातों की मात्रा एवं स्वरूप में परिर्वतन आया।

आर्थिक मन्दी और भारत का विदेशी व्यापार

भारत के विदेशी व्यापार पर सन् 1929-30 की भयानक आर्थिक मन्दी का बहुत ही विपरीत प्रभाव पड़ा। 1929 से 1935 तक का काल आर्थिक मन्दी का काल कहा जाता है। इस काल में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में वस्तुओं का मूल्य गिरने लगा। भारत के आयात और निर्यात की मात्रा में पर्याप्त कमी आ गई। इस काल में ओटावा समझौता हुआ।

इसके अनुसार भारतीय व्यापार में शाही प्राथमिकता लागू कर दी गयी। राष्ट्रवाद की लहर दौड़ जाने के कारण अनेक देशों ने स्वतंत्र व्यापार पर प्रतिबन्ध लगा दिये। 1932–33 में भारत के कुल विदेशी व्यापार का मूल्य आधे से भी कम रह गया। आयातों में कमी इसीलिए हुई क्योंकि भारतीयों की क्रयशक्ति कम हो गयी थी, राजनैतिक परिस्थितियों में तनाव आ गया था और देश में कपड़ा तथा चीनी उद्योग का विस्तार हो गया। धीरे–धीरे आर्थिक मन्दी का प्रभाव कम होने लगा। 1932 में यह बहुत कम रह गया और अब विश्व की आर्थिक दशाओं में सुधार आ गया। भारत का विदेशी व्यापार भी अब सुधरने लगा। जापान के साथ भारत का व्यापारिक सम्बन्ध घनिष्ठ बन गया और भारत औद्योगीकरण की दिशाओं में प्रगति करने लगा।

द्वितीय महायुद्ध के बाद भारत का विदेशी व्यापार

द्वितीय विश्व–युद्ध समाप्त होने के बाद देश के सामने यह समस्या आयी कि उत्पादन बढ़ाकर मुद्रा स्फीति को कम किया जाय और निर्यात बढ़ाकर आवश्यक वस्तुओं के आयात के लिये विदेशी विनिमय प्राप्त किया जा सके। इस

काल में अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक काल को पर्याप्त महत्व दिया गया। बिगड़ी हुई स्थिति को सुधारने के लिये अनेक समझौते और संस्थायें स्थापित की गयी। इस दृष्टि से आंग्ल-अमेरिकी ऋण समझौता हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष, अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निमाण एवं विकास बैंक की भी स्थापना की गई।

स्ववंत्र भारत में विदेशी व्यापार

स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत के सामने अनेक आर्थिक समस्याएं आई। देश के विभाजन ने उसके व्यापार को अस्त-व्यस्त कर दिया। खाद्यान्न एवं अनेक कच्चा माल देश में आवश्यकता से कम हो गया और इसीलिये विदेशों से आयात करना आवश्यक हो गया। व्यापार सन्तुलन भारत के विपरीत बन गया। 19 दिसम्बर, 1949 में विदेशी व्यापार की बढ़ती हुई प्रतिकूलता से विवश होकर भारत सरकार ने रूपये का डालर के रूप में 30.5 प्रतिशत अवमूल्यन कर दिया, जिसके फलस्वरूप भारत के निर्यात में वृद्धि हो गई और आयात मे कमी।

1951 में भारत का व्यापार का सन्तुलन बिगड़ गया और दूसरी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ होते-होते इसके भुगतान सन्तुलन में घाटे की स्थिति आ गयी। इसे ठीक करने के लिए ऐसी नीतियाँ अपनायी गयी ताकि निर्यात में बाधा डालने वाले प्रतिबन्धों को हटाया जा सके। 1949 में निर्यात को बढ़ाने के लिए एक निर्यात प्रोत्साहन समिति की नियुक्ति की गयी।

समिति ने निम्न सुझाव दिये :

1. निर्यात पर लगाये गये करों को हटा लिया जाय।।

2. सट्टे पर रोक लगा दी जाए।

3. देश के उत्पादन को बढ़ाया जाए।

4. व्यापारिक समझौते किये जाए।

आयात-निर्यात सम्बन्धी नीति में परामर्श देने के लिए एक आयात सलाहकार समिति और दूसरी निर्यात सलाहकार समिति नियुक्त की गयी। 1950 में एक आयात-निर्यात जांच समिति बनायी गयी।

भारत के विदेशी व्यापार का एक लम्बा इतिहास रहा है। यातायात और संचार के विकास के कारण उसके व्यापार की अभूतपूर्व प्रगति हुई है। 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत भी विश्व–व्यापार का एक स्वतन्त्र सदस्य बन गया। स्वतन्त्रता से पूर्व देश के आयात और निर्यात की दृष्टि से जो नीतियां अपनाई जा रही थी, उनका उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य को अधिक से अधिक लाभ पहुंचाना था। लेकिन स्वतंत्रता के बाद भारत के विदेशी व्यापार का उद्देश्य देश का औद्योगि विकास एवं जीवन स्तर की प्रगति बन गया।

देश के आर्थिक विकास और प्रगति में निर्यात व्यापार बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। देश के विकास कार्य में निर्यात व्यापार एक गतिज कारण है और जल्द आर्थिक विकास के क्रियाकलापों को महसूस करने में देश का एक महत्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति का यह एक महत्वपूर्ण श्रोत है। देश की आर्थिक व्यवस्था में निर्यात जो स्थान प्राप्त करता है वह इसके विकास योजना के स्रोत, आकार और प्रकृति द्वारा ज्ञात किया जाता है। इसके

वाणिज्यिक विशिष्टता के लिये भारतीय व्यापार एक समय मशहूर था। लेकिन भारतीय निर्यात व्यापार उपनिवेश राज्य में गम्भीर रूप से पीछे हो गया। जब इसकी स्थिति निम्न वस्तुओं की पुर्ति के लिए और ब्रिटेन के उद्योगों को निर्यात के लिए, कच्चे माल की पूर्ति को विवश किया गया।

स्वतंत्रता से पूर्व भारत का निर्यात

"भारत के वाणिज्यिक प्रधानता के दौरान भारतीय व्यापार निश्चित रूप से अनुकूल था। हमारे निर्यात ने आयात को बढ़ावा दिया। भारत निर्यात में वाणिज्य प्रधान था। यूरोपियन देश और अन्य भारत के साथ ज्यादा व्यापार सम्बन्ध बनाने की कोशिश कर रहे थे। व्यापार की यह महत्वपूर्ण स्थिति तब तक बनी री जब तक अंग्रेजों ने देश के ऊपर पूर्ण राजनीतिक नियन्त्रण नहीं स्थापित कर लिया। 1700 ई0 में जब भारत लगभग एक मिलियन सूती कपड़े और 12000 रेशमी कपड़े ब्रिटेन को निर्यात करता था, इन

उद्योगों को इनके रेशमी वस्त्र और सूती वस्त्र क्षेत्र को गम्भीर चोट पहुँचने से ये उद्योग तितर-बितर हो गये।[5]

"उपनिवेश क्षेत्र में जहाँ ब्रिटेन ने दो पक्षीय व्यापार नीति अपनायी, वहीं देश में निर्मित माल के निर्यात की अवनति हुई लेकिन उनके आयात में उन्नति हुई। लगभग दो या तीन प्रतिशत भारतीय आर्थिक बढ़ोत्तरी को 1757 से 1939 तक प्रत्येक वर्ष ब्रिटेन में भेज दिया जाता था। अगर उसी स्तर का विनियोग देश के अन्तर्गत हुआ होता तो 15वीं सदी के दौरान आर्थिक विकास यू0एस0ए0 और यू0के0से थोड़ा की कम होता। भारत के निर्यात की रकम लगभग 300 करोड़ रूपये वार्षिक था। 1920 से 1926 में, वह पांचवीं सबसे बड़ी व्यापारिक राष्ट्र के रूप में जानी जाती थी और जूट माल, चाय, सूती धागे, तिलहन, मसाले, चमड़े और तम्बाकू निर्यात में विश्व में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था लेकिनि 1930 में निर्यात आय में अचानक गिरावट आयी और

[5] क्रिष्ण बाल, कामर्सियल बिटविन इंडिया एण्ड इंग्लैण्ड (1601 से 1757) लन्दन, 1924, पृ0-208

इसलिये भारत का निर्यात लगभग 150 करोड़ रूपये तक नीचे आ गया।[6]

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान दो कारणों से भारतीय निर्यात प्रभावित हुआ – पहला, ब्रिटेन को अत्यधिक मात्रा में वस्तुओं की आवश्यकता थी जैसे चमड़े, कपड़े, भोजन और सीमेन्ट ताकि वह युद्ध आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। इसलिये भारत ने लगभग 17360 मिलियन रूपये का व्यापार किया। दूसरा, विदेश विनिमय कठिनाइयों को कम करने की दृष्टि से जो ब्रिटिश शासन के द्वारा कुछ विदेश विनिमय नियन्त्रण में डाला गया था, इसके कारण आजादी के बाद उनको अच्छा अनुभव प्राप्त हो गया।

जब भारत ने स्वतंत्र देश के रूप में निर्यात करना शुरू किया, उसने 1736 करोड़ मूल्य का शुद्ध मुनाफा कमाया। कुछ ही वर्षो में आजादी के बाद भारतीय सरकार ने शुद्ध मुनाफे का जल्द से जल्द उपयोग करने का कार्य किया। उस समय निर्यात पर कोई भी दबाव नहीं था। देश की आर्थिक व्यवस्था के निर्माण के कार्य और औद्योगिकरण की

---

[6] भाट0वी0वी0, भारत में आर्थिक परिवर्तन और नीति की छवि (1800 से 1960) मुम्बई, 1963,पृ051

तरफ कदम बढ़ाने की आवश्कता के लिये बहुत पूँजीगत माल की आवश्यकता थी। इन पूँजीगत मालों को विकसित और औद्योगिकृत देशों से एक कमजोर औद्योगिक आधार के लिए पूर्ण नहीं थे। जब 1951 मे योजना बनाना शुरू किया गया, इस बात पर ध्यान दिया गया कि देश में आर्थिक विकास और औद्योगिकरण के प्रवाहन के लिये निर्यात के द्वारा विदेशी विनिमय प्राप्त किया जाय।

योजना अवधि के दौरान भारत का निर्यात

पहले पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रथम वर्ष 716 करोड़ रूपये का वार्षिक निर्यात किया गया। इस योजना अवधि के दौरान निर्यात का विकास की सही दर और वार्षिक औसत उतना सही नहीं था। इस योजना के पहले दो वर्षो के दौरान विदेशी व्यापार नीति कुछ पीछे हटी। जबकि बड़े उद्योगों के विकास, निर्यात स्थानान्तरण और निर्यात रोकने वाले व्यवहार का इस काल के दौरान निर्यात व्यापार पर देश की नीति में प्रगति हुई। "1953-54 के दौरान निर्यात का मूल्य अब तक, जबसे योजनाओं की घोषणा की गयी है, सबसे कम था। जिसके परिणामस्वरूप दूसरे योजना के दौरान आयात

बहुत अधिक थे। निर्यात ने कोई महत्वपूर्ण बढ़ोत्तरी नहीं हासिल की और उनको बढ़ाने में कोई योगदान भी नहीं था। सचमुच पहली योजना के अन्त में उदार आयात नीति के अन्तर्गत आयात में बढ़ोत्तरी हुई, जिसके परिणामस्वरूप दूसरी योजना के मध्य में विदेश विनिमय स्रोत बहुत कम हो गये। दूसरी योजना के दौरान 1956 से 1961 तक, निर्यात का वार्षिक औसत 606 करोड़ रूपये पर ही रूका रहा। इसलिये दूसरी योजना के दौरान बहुत मुश्किल से ही कोई विकास हुआ होगा।[7]

"आजादी के पहले दशक और लगभग 60वीं के शुरूआत तक, निर्यात सम्वर्द्धन के क्षेत्र में कोई भी कदम नहीं उठायाा गया था। विश्व व्यापार 8 प्रतिशत वार्षिक की दर से 50वीं और मध्य 60वीं में प्रत्येक वर्ष बढ़ रहा था। 1947 में निर्यात में विश्व व्यापार लगभग 50 बिलियन डालर कमाया था और इसमें भारत का भाग लगभग 12 मिलियन डालर था जो कि 2.4 प्रतिशत है।"[8]

---

[7] कालीपाड़ा, देव, "एक्सपोर्ट स्ट्रे ट्जी इन इण्डिया" सुल्तान चन्द्र एण्ड कं0 लि0, नई दिल्ली,1978 पृ03-8

[8] पटेल,आई0जी0, भारत का भुगतान सन्तुलन-विदेश व्यापार पुर्नदृष्टि की एक समालोचना, भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली, वाल्यूम XVI, 1981, पृ0 212-214

तीसरी योजना के दौरान भारतीय विदेशी व्यापार के रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये कई महत्वपूर्ण उपाय किये गये और सरकार ने निर्यात के लिये कई कदम उठाये। इन उपायों के अन्तर्गत उदारीकृत निर्यात नीति, संस्थागत नीतियों की मजबूती, विभिन्न सम्वर्द्धन योजनाओं चलाना और निर्यात सम्वर्द्धन संगठन की स्थापना करना और प्रोत्साहन देना आते हैं। परिणाम स्वरूप वार्षिक औसत निर्यात में 753 करोड़ रूपये का महत्वपूर्ण विकास हुआ। तीसरी योजना अवधिक के दौरान स्वतन्त्र वाणिज्य मंत्रालय पर नये अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मंत्रालय की स्थापना, व्यापार नीति और संम्वर्द्धन कार्यो को देखने के लिये तथा देश के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को दिशा और गति प्रदान करने के लिये इसकी स्थापना की गयी। उस समय कई राष्ट्रीय वाणिज्यिक संस्थान खोले गये थे। यह 1966 के अन्त का समय था जब रूपये का अवमूल्यन हुआ था, जिससे सभी स्वभाव पूर्णतया बदल गये। अवमूल्यन के समय सभी निर्यात सम्वर्द्धन उपाय विभाजित हो गये थे। इसमें कोई संशय नहीं है कि भारतीय निर्यात सस्ता हो गया था, लेकिन अवमूल्यन प्रोत्साहन के पर्णतया पूर्ति में असफल

था। तीसरी योजना अवधि के दौरान निर्यात 1961 से 62 में 660 करोड़ रूपये से 1965-66 में 810 करोड़ रूपये तक पहुँच गया। लेकिन निर्यात का प्रगति दर बहुत प्रोत्साहन दायन नहीं था। निर्यात में धीमी गति के कारण निम्न हैं :

1. स्थिर कृषि उत्पाद

2. निर्यात बढ़ोत्तरी में कमी क्योंकि निर्यात कच्चे माल का उपयोग घर में बढ़ गया, घरेलू आय में बढ़ोत्तरी और जनसंख्या में वृद्धि।

3. विदेश आयात के लिये घरेलू मालों को कम आकर्षित बनाना।

4. चीन, पाकिस्तान और जापान से प्रतियोगिता का बढ़ना।

5. कुछ परम्परागत निर्यात वस्तुओं के लिये भारी मांग।

6. कुछ प्रमुख निर्यात उत्पाद के लिये कृत्रिम वस्तुओं का विकास जैसे - जूट।

7. सूती वस्त्र उद्योग में व्यापार बाजार में कठिन प्रतियोगिता।

8. विकसित देशों के उनके आर्थिक स्थिर क्षेत्र को बचाने की कोशिश और विकासशील देशों के भाग पर शिशु उद्योग को बचाने की कोशिश। और

9. निर्यात दाम में कमी।

जबकि प्रमुख भारतीय निर्यात के लिये विश्व मांग स्थिर है, इन वस्तुओं के विदेश निर्यात में भारक का भाग बहुत कम हो गया है। अवमूल्यन के बाद निर्यात नीचे गिरता गया और प्रगति दर ऋणात्मक था, तीसरी योजना के शुरूआत की तुलना में, अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में स्थिर निर्यात केवल विदेशी विनिमय का कुछ भाग ही उपयोग करते हैं। मशीन, उपकरण, दाल, पेट्रोलियम और अन्य वस्तुओं के आयात पर हम बहुत ज्यादा खर्च करते हैं। अवमूल्यन के तीन वर्ष के बाद के दौरान औसत वार्षिक आयात 1951 करोड़ रूपये तक बढ़ गया जबकि वार्षिक औसत निर्यात 1238 करोड़ तक ी बढ़ा और व्यापार कमी अब भी ज्यादा था। कृषि उत्पाद, घरेजू

उद्योग में रूकावट निर्यात शाखा का इकट्ठा करने में यह एक प्रमुख भूमिका अदा करती है ताकि भारतीय निर्यात बढ़ सके।

चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान 1970 में एक नयी निर्यात नीति हल को निर्यात प्रभाव के निर्देशन के लिये ग्रहण किया। सरकार के विभिन्न सम्वर्द्धन उपायों के परिणाम स्वरूप निर्यात फिर से बढ़ने लगा। इस समय तीसरी योजना के दौरान उठाये गये कदम भी फलदायक परिणाम पाने लगे। निर्यात और भी उदारीकृत हो गया और चौथी योजना के दौरान ग्रहण किये गये नियम से लगभग कुछ भी आयात नहीं किया गया और निर्यात ज्यादा किया गया। आजादी के बाद भारतीय सरकार ने पहली बार निर्यात की आवश्कता का अनुभव किया और एक धनात्मक नीति का सूत्रीकरण किया। जिसका नाम 'निर्यात नीति हल 1970' रखा गया और संसद में पेश किया गया। अपने देश के निर्यात के इतिहास में यह हल एक सीमा चिन्ह की तरह है। ये नीतियाँ सावधानीपूर्वक लागू की गयी। यह हल निम्न बातें बताता है।

''भारत के विदेशी व्यापार नीति ने अपने उद्देश्यों की आख्या में संशोधन किया है - चौथे पंचवर्षीय योजना की

प्राथमिकता और व्यूह रचना। घरेलू स्रोत को गतिमान करने के वित्तीय योजना के लिये निर्यात करने के विस्तार की दृष्टि से सरकार ने योजना बनायी। अपने ऊपर आधारित रहने और बाहरी सहायताओं को कम करने के लिये निर्यात आय को उच्च दर से बढ़ाने की आवश्यकता है। विस्तार के मिश्रित दर के सामना करने के लिये चौथी योजना में 7 प्रतिशत वार्षिक बढ़ोत्तरी हुई।"[9]

चौथी योजना के दौरान औसत वार्षिक निर्यात में 1810 करोड़ रूपये की रकम मिली। वर्तमान दाम के सम्बन्ध में वार्षिक औसत प्रगति दर 12.6 प्रतिशत इस योजना के दौरान थी जबकि कुछ वर्षों में यह और ऊँची होती हैं। निर्यात की सीमा 1413 करोड़ रूपये पहले वर्ष में तथा 2523 करोड़ रूपये योजना के अन्तिम वर्ष के बीच रही। इस अवधि के दौरान विभिन्न सम्वर्द्धन योजनाओं के चलाने का यह परिणाम है। इसलिये चौथी योजना, निर्यात प्रदर्शन और भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में स्वर्णकाल थी।

---

[9] बाल गोपाल, टी0ए0एस0-निर्यात प्रबन्ध, हिमालय पब्लिसिंग हाऊस, मुम्बई, 1981, पृ0-152

इस सन्दर्भ में विश्व बाजार में भारतीय माल के प्रतियोगी क्षमता बढ़ाने की आवश्कयता पर दबाव नहीं डाला जा सकता। सरकार के द्वारा दीर्घकालीन नीति, जो निर्यात बाजार दाम प्रदान करने में निर्यात व्यापार को सहायता प्रदान करती है, जो सफल दीर्घ कालीन निर्यात के लिये जरूरी है।

1973 में तेल कमी से देश के निर्यात प्रभाव में अवनति हुई। तेल कमी के अलावा पाँचवें योजना के दौरान परिस्थिति पहले, दूसरे, तीसरे योजना की तुलना में अच्छी थी। निर्यात आय आयात आय के 8.6 प्रतिशत के बराबर थी। पांचवें योजना के दौरान हमारे निर्यात की सीमा 1974-75 में 3,329 करोड़ रूपये और 1977-78 में 5408 करोड़ रूपये के बीच में था। आजादी के बाद 1976-77 के दौरान दूसरी बार देश ने 68 करोड़ रूपये का व्यापार लाभ उठाया। पाँचवीं योजना के दौरान विपरीत व्यापार सन्तुलन 612 करोड़ रूपये 1977-78 में से लेकर 1974-75 में 1190 करोड़ रूपये और 1975-76 में 1229 करोड़ रूपये के बीच रही।

1978-80 के दौरान भारत का निर्यात प्रदर्शन 1978-79 में 5726 करोड़ रूपये तक आंका गया जो

पिछले वर्ष से 6.5 प्रतिशत अधिक था। 1979-80 में निर्यात की रकम 6418 करोड़ 12.1 प्रतिशत बढ़ोत्तरी प्रदर्शित करती है। पांचवीं योजना के पहले तीन साल के दौरान हुए प्रगति दर सीमा जो कि 19.31 प्रतिशत और 31 प्रतिशत के बीच था, उनकी तुलना में यह वार्षिक वृद्धि बहुत कम था। दो वर्षों के दौरान धीमी प्रगति और देश के प्रमुख निर्यात ब्याज के उत्पाद में वास्तविक गिरावट आ गयी है। ये वस्तुएँ जेम, आभूषण, लोहा और स्टील, तांबा, धातु उत्पाद है। निर्यात में गिरावट के लिए प्रमुख सहायक वैसे ही रहा जैसे समुद्र पार बाजार में घरेलू पूर्ति विवशता के लिए निम्न कारणों से निर्यात की प्रगति दर कम रही :

1. ज्यादा उपभोग वस्तु के निर्यात पर रूकावट लगाने की नीति।

2. डालर के मूल्य में गिरावट जो कि हमारे निर्यात तालिका का 2 या 3 प्रतिशत भाग है।

3. निम्नस्तर के क्रियाकलापों के कारण विकसित देशों में आयात पूर्ति में कमी।

4. बचाव उपाय जो विकसित देशों द्वारा अपनाये गये हैं, जो वस्त्र, सिले सिलाये वस्त्र, जूते, लोहा और स्टील, खनिज और चमड़े के भारत के निर्यात को प्रभावित किया।

5. कुछ मुख्य निर्यात वस्त्र के दाम में कमी आना।

6. स्टील और सीमेन्ट के लिये घरेलू मांग बढ़ाना।

7. घरेलू परेशानियां जैसे - शक्ति कमी, स्थनान्तरण कमी, कार्य करने वालो का हड़ताल।

छठीं योजना के प्रत्येक वर्ष के दौरान व्यापार घाटा लगभग 5000 करोड़ रूपये हो गया। छठीं योजना के दौरान सबसे कम घाटा, इसके अन्तिम वर्षो (1984-845) में 5390 करोड़ हुआ। औसत वार्षिक घाटा, छठे योजना के दौरान 5716 करोड़ रूपये का घाटा हुआ जो कि पूरे व्यापार घाटे, पांचवीं योजना के दौरान को सबसे ज्यादा घाटा रहा। छठीं योजना के दौरान निर्यात आय केवल आयात के 60 प्रतिशत ही हो सकी और छठी योजना के दौरान व्यापार घाटा बहुत ज्यादा रहा। इस योजना अवधि के दौरान सी0एन0पी0

के द्वारा दिखाये गये घाटे के प्रतिशत से बाजार में कमी आयी। यह कमी 1980-81 में 5.1 प्रतिशत से 1983-84 में 3.4 प्रतिशत हो गयी और 1984-85 के दौरान और भी कमी हो गयी। इस योजना के दौरान कच्चा तेल एक प्रमुख निर्यात वस्तु के रूप में सामने आया। कच्चे तेल का निर्यात 1981-82 के अन्तिम चौथाई में शुरू हुआ। कच्चे तेल का निर्यात 1981-82 में 211 करोड़ रूपये 1982-83 में 1157 करोड़ रूपये से 1983-84 में 1400 करोड़ रूपये और 1984-85 में 1817 करोड़ रूपये की बढ़त हासिल कर ली।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान (1985-86 से 1989-90) कांग्रस (ई) सरकार द्वारा अन्धाधुन्ध उदारीकरण की नीति अपनाये जाने की तरह, जनता दल सरकार ने भी कदम बढ़ाया जिसके परिणामस्वरूप औसत वार्षिक निर्यात केवल 17382 करोड़ रूपये तक पहुंच पाया। 1730 करोड़ रूपये का औसत वार्षिक घाटा पैदा हो गया। सातवें योजना के दौरान हमारे निर्यात की सीमा 1985-86 में 10895 करोड़ रूपये और 1989-90 में 27685 करोड़ रूपये के बीच था।

इतना भारी व्यापार घाटा उत्पन्न हो जाने के कारण भारत सरकार के मजबूर होकर विश्व बैंक तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा केष के पास 670 करोड़ डालर का ऋण लेने के लिए प्रार्थना-पत्र भेजना पड़ा था। भारत सरकार ने बढ़ते हुए आयात को रोकने के लिये आयाता लाइसेंसों की उदार नीति पर अंकुश लगाया।

1990-91 में हमारा व्यापार घाटा 10645 करोड़ रूपये का रहा लेकिन हमारी सरकार के निर्यात प्रोत्साहन के प्रयास के कारण निर्यात बढ़कर 32533 करोड़ रूपया का हो गया। इस दौरान निर्यात में 15.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई। 1991-92 के दौरान व्यापार घाटा 3810 करोड़ रूपये का रहा। निर्यात में 42.5 प्रतिशत की गिरावट आई। 1991-92 में 44041 करोड़ रूपये का निर्यात हुआ। सरकार ने नई व्यापार नीति में निर्यात को बढ़ाने के लिए बहुत से उपाय किये जैसे निर्यात-आयात स्क्रिप्स की इजाजत दिया, नकद क्षतिपूर्ति आलम्बन और रूपये का दो चरणों में अवमूल्यन किया, फिर भी ये सभी उपाय निर्यात को प्रोत्साहित करने में विफल रहे। 1992-93 के दौरान व्यापार घाटा 9687 करोड़

रूपये का हुआ। निर्यात जो 1991-92 में 44041 करोड़ रूपये का था बढ़कर 1992-93 में 53688 करोड़ रूपये का हो गया। 1993-94 में व्यापार घाटा 3350 करोड़ रूपये का था तथा इस दौरान देश का निर्यात 69751 करोड़ रूपये का रहा। 1994-95 की अवधि में निर्यात व्यापार 82674 करोड़ रूपये का हुआ जबकि वर्ष 1993-94 में निर्यात व्यापार 69751 करोड़ रूपये का था। 1994-95 के दौरान व्यापार घाटा 7297 करोड़ रूपये का रहा। अप्रैल-दिसम्बर 1996-97 की अवधिक में निर्यात व्यापार अनुमानतः 85623 करोड़ रूपये का हुआ जबकि वर्ष 1995-96 में निर्यात व्यापार अनुमानित 106350 करोड़ रूपये का था। 1996-97 के दौरान व्यापार घाटा अनुमानतः 11488 करोड़ रूपये का रहा।

प्रोत्साहक लक्षण :

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बढ़ने से निर्यात व्यापार विस्तार कर रहा है। विश्व निर्यात में भारत का भाग 1970 में 0.6 प्रतितशत, 1975 में 0.5 प्रतिशत और 1980 में 0.4 प्रतिशत रहा। 1979-81 के बीच में विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा सबसे कम 0.42 प्रतिशत था। 1990 में विश्व निर्यात में हमारा हिस्सा 0.5 प्रतिशत था, जो 1992 में भी विश्व निर्यात में हमारा हिस्सा 0.5 प्रतिशत तक ही रहा और 1994 में विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा बढ़कर 0.8 प्रतिशत हो गया। 1990 के मूल्य की तुलना में जो 18143 मिलियन डालर था, वह बढ़कर 1994 में 31779 मितिलयन डालर हो गया।

निर्यात उत्पाद का व्यापार विश्व बाजार में अपना महत्वपूर्ण हिस्सा बन रहा है। 1985 में चाय (26.2%), मसाला (19.3%), चमड़ा (7.9%), लोहा और इस्पात (0.1%), महत्वपूर्ण पत्थर (9.6%) चमड़ा निर्मित वस्तुयें (16.4%) और बुने सूती कपड़े (4.8%) लेंकिन 1992 में चाय (10.5%) और चमड़ा निर्मित वस्तुयें (6.7%)। हमारे कुछ महत्वपूर्ण निर्यात उत्पाद भी है जो तालिका-3 में दिये हैं।

तालिका–3

योजना काल में भारत का निर्यात व्यापार(करोड़ रूपये में)

वर्ष/योजना	निर्यात	निर्यात का वार्षिक औसत	व्यापार शेष
प्रथम योजना (1951-52से 1955-56)			
1951-52	716		-174
1952-53	578		-124
1953-54	531		-79
1954-5	593		-107
1955-56	609		-165
कुल (1951-52 से 1955-56)	**3027**	605	
द्वितीय योजना (1956-57 से 1960-61)			
1956-57	605		-236
1957-58	561		-474
1958-59	581		-325
1959-60	640		-321
1960-61	642		-480
कुल (1956-57 से 1960-61)	**3029**	606	
तृतीय योजना (1961-62 से 1965-66)			
1961-62	660		-430
1962-63	685		-446
1963-64	793		-430
1964-65	816		-533

1982-83	8803		-5490
1983-84	9771		-6060
1984-85	11744		-5390
कुल (1980-81 से 1984-85)	44835	8967	
सातवीं योजना (1985-86 से 1989-90)			
1985-86	10895		-8763
1986-87	12452		-7644
1987-88	15674		-6570
1988-89	20232		-8003
1989-90	27658		-7670
कुल (1985-86 से 1989-90)	86911	17382	
1990-91	32553		-10645
1991-92	44041		-3810
1992-93	53688		-9687
1993-94	69751		-3350
1994-95	82674		-7297
1995-96 (अ)	106350		-16325
1996-97 (अ) (अप्रैल-दिसम्बर)	85623		-11488

स्रोत : भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 1996-97

तालिका-4

विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा

(मिलियिन अमरीकी डालर में)

वर्ष	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्सा (प्रतिशत)
1970	313804	2026	0.6
1975	876094	4355	0.5
1980	1997686	8378	0.4
1985	1930849	8750	0.5
1990	3306374	18143	0.5
1992	3572320	18537	0.5
1993	3543323	22238	0.6
1994	3974388	31797	0.8

स्रोत : भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 1996-97

तालिका–5

प्रमुख वस्तुओं का विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा (मिलियन अमरीकी डालर)

वस्तुयें	1970			1975			1980		
	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)
चाय और मेट	587	196	33.7	933	292	31.3	1631	452	27.7
मसाले	255	52	20.5	548	73	13.3	1072	156	14.5
चावल	925	6	0.6	1984	12	0.6	4355	160	3.7
काफी और काफी के अनुकल्प	3205	31	1.6	4580	73	1.6	12979	271	2.1
अविनिर्मित तम्बाकू और चूरा	1058	42	4.0	2357	119	5.0	3423	151	4.4
विनिर्मित तम्बाकू	655	1	0.2	147	5	0.4	–	–	–

चमड़ा	701	94	13.4	1540	189	12.3	3415	342	10.0
चमड़े की निर्मित वस्तुयें	132	1	0.6	355	4	1.0	975	62	6.3
बुने सूती कपड़े	1436	98	6.8	3149	161	5.1	6632	351	5.3
मोती, बहुमूल्य तथा अल्प मूल्य रत्न	2431	53	2.2	5707	128	2.2	18563	579	3.1
लोहा और इस्पात	14540	132	0.9	40789	116	0.3	68231	87	0.1
धातुओं से निर्मित वस्तुयें	4328	27	0.6	12053	74	0.6	36840	221	0.6

वस्तुयें	1985			1990			1992		
	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्स(प्रतिशत)
चाय और मेट	1973	517	26.2	2653	585	22.0	2129	224	10.5
मसाले	1188	229	19.3	1376	109	7.9	172	110	64.1
चावल	2916	162	5.6	3903	254	6.5	3929	133	3.4
काफी और काफी के अनुकल्प	11676	226	1.9	8558	148	1.7	7865	98	1.2
अविनिर्मित तम्बाकू और चूरा	3798	113	3.0	5207	107	2.0	6060	77	1.3
विनिर्मित तम्बाकू	4024	27	0.7	12598	39	0.3	15041	3	0.0
चमड़ा	4185	331	7.9	9393	447	4.8	9859	332	3.4

चमड़े की निर्मित वस्तुयें	1233	202	16.4	2845	385	13.5	3686	248	6.7
बुने सूती कपड़े	6804	327	4.8	15621	571	3.7	16517	461	2.8
मोती, बहुमूल्य तथा अल्प मूल्य रत्न	12073	1165	9.6	30202	2710	9.0	27869	2825	10.1
लोहा और इस्पात	61891	46	0.1	109486	284	0.3	10298	4390	0.4
धातुओं से निर्मित वस्तुयें	32884	125	0.4	66199	341	0.5	74462	425	0.6

1994

वस्तुयें	विश्व निर्यात	भारत का निर्यात	भारत का हिस्सा (प्रतिशत)
चाय और मेट	2263	307	13.6
मसाले	1630	149	9.1
चावल	5780	384	6.6
काफी और काफी के अनुकल्प	13854	335	2.4
अवनिर्मित तम्बाकू और चूरा	4830	59	1.2
विनिर्मित तम्बाकू	16644	22	0.1
चमड़ा	12800	322	2.5
चमड़े की विनिर्मित वस्तुयें	4741	302	6.4
बुने सूती कपड़े	18424	913	5.0
मोती, बहुमूल्य तथा अल्पमूल्य रत्न	37113	4060	10.9
लोहा और इस्पात	113624	775	0.7
धातुओं से विनिर्मित वस्तुयें	79673	497	0.6

स्रोत : भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 1996–97

निर्यात की संरचना

देश के निर्यात संरचना में एक विशिष्ट परिवर्तन प्रमाणित किया गया है। निर्यात संरचना के उपनिवेशी प्रतिभा के विपरीत निर्यात व्यापार के संरचना में भी विशिष्ट परिर्वतन ज्ञात हुआ है। कई नये वस्तु मुख्यतः अर्धनिर्मित और निर्मित निर्यात सूची में जोड़े गये हैं। इसने कुछ परम्परागत वस्तुओं के निर्यात पर भारी मुनाफे को कम कर दिया है जैसे-चाय, रूई, जूट, मसाले, चमड़े इत्यादि जो कुल आय के 50 प्रतिशत से भी ज्यादा प्रदान करते हैं।

1965-66 में भी भारत के 810 करोड़ रूपये के कुल निर्यात में जूट, चाय, सूती वस्त्र, अभ्रक और मैंगनीज के निर्यातों को भाग लगभग आधा था। पिछले लगभग दस वर्षो में निर्यात व्यापार की रचना बदली है। आज भी जूट, चाय, और सूती वस्त्र भारत के निर्यात व्यापार की मुख्य वस्तुएं हैं। लेकिन अब भारत चीनी, तम्बाकू, काजू, खली, चमड़े के तैयार माल, इंजीनियरिंग उपकरणों, रसायनिक वस्तुओं और मछली तथा उससे तैयार की जाने वाली विविध वस्तुओं का निर्यात

बड़ी मात्रा में कर रहा है। भारत अब लगभग 3000 बड़ी छोटी वस्तुओं का निर्यात करता है जबकि आज से पच्चीस वर्ष पहले निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की संख्या 50 के लगभग थी।

देश के जल, थल और वायुमार्ग द्वारा जिन प्रमुख वस्तुओं का निर्यात किया जाता है वे निम्न हैं- पटसन की वस्तुएं (सूत आदि के अतिरिक्त), चाय, सूती वस्त्र (सूत आदि के अतिरिक्त अन्य वस्त्र), सूती वस्त्र (सूती वस्त्र और पटसन को छोड़कर), वस्त्र की बनी चीजें (सूती तथा पटसन के वस्त्र, ऊनी कालीन, चटाई, गलीचे आदि को छोंड़कर), सूत और धागा, अलोह धातुओं के अयस्क और सांद्र अयस्क, चमड़ा, कपास (रद्दी कपास आदि छोंड़कर), ताजे फल तथा गिरियाँ (तेल वाली गिरियों को छोंड़कर), कच्ची वनस्पति जन्य सामग्री (अखाद्य), चीनी (सीरा सहित), लौह अयस्क और सांद्र अयस्क, कच्चा तम्बाकू, वनस्पति, तेल (निर्गन्धीय), कच्चे खनिज पदार्थ (कोयला, पैट्रोल, उर्वरक, तथा रत्नों को छोंडकर), ऊनी कालीन, गलीचे और चटाई आदि, लोहा तथा इस्पात, कहवा,

चमड़ा तथा खालें (कच्ची), पैट्रोलियम पदार्थ, कोयला, कोक तथा कोयला-चूरे की ईंटें आदि

भारत के निर्यात में परम्परागत निर्यातों का योगदान कम होता जा रहा है और कुछ गैर-परम्परागत वस्तुओं जैसे इन्जीनियरी का सामान, रसायन, खनिज, ईंधन, लोहा एवं इस्पात, हस्त-शिल्प के सामान आदि का निर्यात बढ़ता जा रहा है। भारत अपने योजनाबद्ध आर्थिक विकास के फलस्वरूप अने महत्वपूर्ण वस्तुओं से निर्यात की स्थिति में आ गया है। कृषि सम्बन्धी मशीनरी और औजार, हाथ-पम्प, स्टील, फर्नीचर, बिजली का साज-सामान, चमड़े की बढ़िया वस्तुएं, प्लास्टिक का सामान, साइकिलें, अश्नेक ऊँची और पेचीदा श्रेणी की वस्तुओं जैसे मशीन टूल्स एवं वस्त्र मशीनरी, सिलाई की मशीनें, रेलवे बैगनों, बिजली की मोटर, डीजल इन्जन आदि का निर्यात बढ़ता जा रहा है। इन वस्तुओं का निर्यात दक्षिण पूर्वी एशिया और अफ्रीका के विकासशील देशों तथा यूरोप के विकसित देशों दोनों को किया जा रहा है। भारत आधुनिक टैक्नोलाजी के क्षेत्र में काफी आगे बढ़ गया है, अतः उसकी प्रतियोगिता शक्ति काफी उन्नत हुई है। देश

के निर्यातों का स्वरूप एक औद्योगिक देश के निर्यातों के अनुकूल बनता जा रहा है। भारत न केवल वस्तुओं का बल्कि अपने प्राविधिक ज्ञान और डिजाइन तथा परामर्शदात्री सेवाओं का निर्यात भी करने लगा है। भारतीय उद्यमकर्ताओं ने सऊदी अरब, घाना, ईरान, श्रीलंका, नेपाल, नाइजीरिया, मलेशिया, आदि देशों में ही नहीं कनाडा और ब्रिटेन तक में संयुक्त उपक्रम चालू किये हैं।

तालिका 4 के अनुसार कृषि उत्पाद एवं अन्य सम्बन्धित उत्पादों को निर्यात का महत्व घटा है तथा निर्मित वस्तुओं का महत्व बढ़ा है। 1991–92 में कृषि उत्पादों को कुल निर्यात में अंश लगभग 17.9 प्रतिशत था जो बढ़कर 1995–96 में 19.2 प्रतिशत हो गया, जबकि निर्मित वस्तुओं का निर्यात 1991–92 में 74.6 प्रतिशत से बढ़कर 1995–96 में 75.4 प्रतिशत हो गया।

तालिका 4 के आधार पर पता चलता है कि चाय 1991–92 में इसका कुल निर्यात में 2.8 प्रतिश अंश था जो घटते–घटते वर्ष 1995–96 में 1.1 प्रतिशत रह गया। इसी प्रकार 1991–92 में चमड़ा एवं चमड़े की वस्तुओं का

कुल निर्यात में 4.5 प्रतिशत अंश था जो बढ़कर 1992–93 में 4.7 प्रतिशत हो गया और 1995–96 में घटकर 3.6 प्रतिशत पर आ गया। रत्न एवं आभूषण का 1991–92 में कुल निर्यात में 15.3 प्रतिशत अंश था जो कि बढ़कर 1995–96 में 16.6 प्रतिशत हो गया। आने वाले वर्षों में निर्मित और अर्ध–निर्मित वस्तुओं कच्ची लोह धातु और अन्य खनिज पदार्थों के निर्यात में पर्याप्त वृद्धि होने की सम्भावना है।

तालिका–6 भारतीय निर्यात में विभिन्न वस्तुओं का अनुपात (प्रतिशत में)

वस्तु समूह	1991–92	1992–93	1995–96
(I) कृषि उत्पाद	**17.9**	**16.4**	**19.2**
(1) चाय	2.8	1.8	1.1
(2) निर्मित तम्बाकू	0.1	0.2	0.4
(3) खाद्य तेल	2.1	2.9	2.2
(4) संसाधित फल एवं रस	0.2	0.2	0.7
(5) कच्चा सूत	0.7	0.4	0.2
(II) कच्ची धातु और खनिज	**5.2**	**4.0**	**3.7**
(6) कोयला	0.0	0.1	0.9
(III) निर्मित वस्तुयें	**74.6**	**76.3**	**75.4**
(7) चमड़ा एवं चमड़े की वस्तुयें	4.5	4.7	3.6
(8) चमड़े के जूते	2.6	2.1	1.8
(9) रत्न एवं आभूषण	15.3	16.5	16.6
(10) धातु द्वारा निर्मित वस्तुयें	2.7	3.2	2.6
(11) परिवहन से संबंधित उपकरण	2.8	2.8	2.6
(12) लोहे एवं स्टील के धढ़	0.3	0.8	–
(13) कच्चा और अर्धनिर्मित लोहा एवं स्टील	0.5	0.8	1.6
(14) सिले हुए वस्त्र	12.3	12.9	11.6
(15) हस्त शिल्प	4.7	4.6	3.5
(IV) कच्चा पेट्रोलियम उत्पाद	**2.3**	**2.6**	**1.4**
(IV) अन्य अवर्गीकृत वस्तुयें	**0.0**	**0.7**	**0.4**
कुल योग	**100**	**100**	**100**

स्रोत : भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 1996–97

तालिका-7 भारतीय निर्यात वस्तुओं की संरचना
(करोड़ रूपये में)

वस्तुएँ	1980-81	1990-91	1993-94	1995-96
परम्परागत निर्यात				
जूट की वस्तुयें	330	298	389	621
चाय और मेट	426	1070	1059	1171
सूती वस्त्र	408	2100	4821	8669
काजू की गिरी	140	447	1048	1237
खली	125	609	2324	2349
मसाले	11	239	569	794
तम्बाकू	141	263	461	447
गैर-परम्परागत निर्यात				
चीनी	40	38	178	506
इंजीनियरिंग वस्तयें एवं लोहा स्पात	827	3872	9484	14578
चमड़ा और चमड़े से निर्मित वस्तुयें	390	2600	4077	5790
रत्न और आभूषण	618	5247	12533	17644
रासायानिक	225	2111	5688	9849
हस्तशिल्प	952	6167	14955	20501
कपास	165	846	654	204
चावल	224	462	1287	4568
काफी	214	252	546	1503

स्रोत : भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 1996-97

परम्परागत निर्यात

भारत से निर्यात की जाने वाली प्रमुख परम्परागत वस्तुएं निम्नलिखित हैं :

जूट की वस्तुयें –

जूट हमारे देश का परम्परागत निर्यात है। जूट के निर्यात में हमारा सबसे बड़ा प्रतिस्पर्धा बांग्लादेश से है। 1980–81 में 330 करोड़ रूपये का जूट का निर्यात किया गया जो घटकर 1990–91 में 298 करोड़ रूपये का हो गया। 1993–94 में जूट की वस्तुओं का निर्यात फिर बढ़कर 389 करोड़ रूपये तथा 1995–96 में पुनः बढ़कर 621 करोड़ रूपये हो गया। भारत विदेशों को जूट से बने टाट, बोरे, सुतली–रस्से, गलीचे, जूट का कपड़ा आदि निर्यात करता है। भारत से जूट की वस्तुयें अमेरिका, रूस, कनाडा, अर्जेन्टाइना, इंग्लैण्ड, आष्ट्रेलिया, मिस्र, न्यूजीलैण्ड, पश्चिमी, जर्मनी, फ्रांस, जापान, दक्षिणी अफ्रीका आदि देशों को भेजा जाता है। जूट की वस्तुओं का डालर प्राप्त करने वाली वस्तुओं में सबसे प्रमुख

स्थान है। भारत सरकार जूट की वस्तुओं के निर्यात में वृद्धि करने के लिये बहुत प्रयत्नशील है।

चाय

चाय निर्यात का सबसे प्रमुख वस्तु है। चाय से निर्यात आय 1980-81 में 426 करोड़ रूपये से बढ़कर 1990-91 में 1074 करोड़ रूपये हो गया। जो कि निर्यात में गिरावट मुख्यतया रूस द्वारा अपनी आर्थिक समस्याओं के कारण, भारतीय चाय की कुल खरीद में कमी करने और ईरान और मिस्र को उनकी विदेशी मुद्रा समस्याओं के कारण 1993-94 में घटकर चाय का निर्यात 1059 करोड़ रूपये का हो गया तथा 1995-96 में बढ़कर चाय का निर्यात 1171 करोड़ रूपया हो गया। भारत एक गर्म देश है जिससे यहाँ के लोगों में चाय पीने की आदत कम है। जिसके फलस्वरूप अधिक मात्रा में चाय बची रहती है, जिसे विदेशों को निर्यात करके विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है। कुल चाय उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत भाग निर्यात किया जाता है। भारत की चाय इंग्लैण्ड, अमेरिका, कनाडा, ईराक, रूस, पश्चिमी जर्मनी, सूडान, आस्ट्रेलिया आदि देशों को भेजी जाती

है। भारत सम्पूर्ण विश्व के कुल चाय के निर्यात का 48 प्रतिशत भाग निर्यात करता है। भारत से काली चाय निर्यात की जाती है। भारत सरकार चाय के उत्पादन एवं व्यापार में वृद्धि करने के लिये हर संभव प्रयास कर रही है।

सूती वस्त्र

भारत के प्रमुख निर्यातों में सूती वस्त्र का प्रमुख स्थान है। भारतीय सूती वस्त्र विदेशों में काफी लोकप्रिय है। इसके निर्यात में भारत का स्थान जापान के बाद आता है। 1980-81 में सूती वस्त्र का निर्यात 408 करोड़ रूपये का हुआ जो बढ़कर 1990-91 में 2100 करोड़ रूपये का हो गया। 1995-96 के दौरान सूती वस्त्र का निर्यात बढ़कर 8669 करोड़ रूपये का हो गया। हमारे देश के सूती वस्त्र के प्रमुख ग्राहक इंग्लैण्ड, श्रीलंका, आष्ट्रेलिया, मलाया, कनाडा, फ्रांस, अफगानिस्तान, वर्मा आदि देश है। सूती वस्त्र का स्थान डालर प्राप्त करने वाली वस्तुओं में प्रमुख है। भारत में लम्बे व अच्छे किस्म के धागे की कमी है। भारत सरकार उत्तम किस्म के कपास को देश के अन्दर ही पैदा करने की व्यवस्था

कर रही है। भारत सरकार इसके उत्पादन के लिये प्रयत्नशील है।

काजू की गिरी

हाल के वर्षों में काजू का हमारे निर्यात में महत्व बढ़ा है। 1980-81 में काजू की गिरी का निर्यात 140 करोड़ रूपये था जो 1990-91 में बढ़कर 447 करोड़ रूपये तथा 1995-96 में 1237 करोड़ रूपये का हो गया। भारतीय काजू की गिरियों के निर्यात में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। भारतीय काजू संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, पश्चिमी जर्मनी, सोवियत रूस, पूर्वी जर्मनी, जापान, आस्ट्रेलिया आदि देशों को निर्यात किया जाता है।

खली

आज देश की निर्यातक वस्तुओं में खली का प्रमुख स्थान है। 1980-81 में खली का निर्यात 125 करोड़ रूपये था जो बढ़कर 1990-91 में 609 करोड़ रूपये हो गया तथा 1995-96 में 2349 करोड़ रूपये हो गया। इसके

प्रमुख ग्राहक देश इंग्लैण्ड, पूर्वी जर्मनी, पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया तथा जापान आदि हैं।

मसाले

भारत में बहुत समय से ही मसालों का निर्यात विदेशों को किया जाता रहा है। मसालों के निर्यात में काली मिर्च, अदरक, हल्दी, लौंग और बड़ी इलायची आदि का प्रमुख स्थान है। 1980-81 में मसालों का निर्यात 11 करोड़ रूपये का हुआ जो 1990-91 में 239 करोड़ रूपये तथा 1995-96 में में बढ़कर 794 करोड़ रूपये का हो गया। भारत से मसाला अमेरिका, स्वीडेन, ग्रेट ब्रिटेन, पाकिस्तान, अरब आदि देशों को भेजा जाता है।

तम्बाकू

भारत के तम्बाकू का उत्पादन क्षेत्र में सम्पूर्ण विश्व में दूसरा स्थान है। सम्पूर्ण उत्पादन का 50 प्रतिशत तम्बाकू का निर्यात को किया जाता है। 1980-81 में 141 करोड़ रूपये तम्बाकू का निर्यात किया गया जो 1990-91 में बढ़कर 263 करोड़ रूपये तथा 1995-96 में 447 करोड़

रूपये का तम्बाकू निर्यात हुआ। भारत से तम्बाकू ब्रिटेन, रूस, जापान, स्वीडन, मलाया, अदन आदि देशों के निर्यात किया जाता है। भारत तम्बाकू का एक प्रधान निर्यातक देश है इससे भी काफी मात्रा में विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

गैर-परम्परागत निर्यात

भारत के निर्यात की प्रमुख गैर-परम्परागत वस्तुएं इस प्रकार हैं -

चीनी

भारत से चीनी का पर्याप्त मात्रा में विदेशों को निर्यात किया जाता है। भारत में गन्ने की पैदावार अधिक होने के कारण चीनी का अधिकाधिक मात्रा में उत्पादन किया जाता है। 1980-81 में 40 करोड़ रूपये का चीनी का निर्यात हुआ था जो घटकर 1990-91 में 38 करोड़ रूपये हो गया। तथा 1995-96 में निर्यात बढ़कर 506 करोड़ रूपये हो गया। इंग्लैण्ड, नेपाल, जापान, कनाडा, मलाया, हांगकांग आदि देश भारतीय चीनी के प्रमुख ग्राहक हैं। भारत में चीनी का निर्यात काफी प्रगति में है। भारत सरकार गन्ने की किस्म

सुधारने वे गन्ने के मिलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए अधिकाधिक प्रयत्नशील है।

भारत के विदेशी व्यापार की संरचना

संरचना से अभिप्राय यह है कि हमारा देश कौन–कौन सी वस्तुएं आयात करता है तथा कौन–कौन सी वस्तुएं निर्यात करता है, अर्थात कौन सी वस्तुएं दूसरे देशों से मंगाता है और कौन सी वस्तुएं दूसरे देशों से मंगाता है और कौन सी वस्तुएं दूसरे देशों को भेजता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चातृ भारत के विदेशी व्यापार में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं, अतः भारत के आयात निर्यात की संरचना या आयात एंव निर्यात की प्रमुख वस्तुएं निम्न हैं।

भारत के प्रमुख आयात व आयात संरचना

भारत में पहले कच्चे माल के आयात की मात्रा बहुत कम थी, और तैयार माल की मात्रा अधिक थी। लेकिन विगत कुछ वर्षो से हमारे देश में खाद्यान्न की बहुत कमी हो गयी थी जिसके फलस्वरूप भारी मात्रा में बाहरी देशों से खाद्यान्न का आयात करना पड़ा, लेकिन वर्तमान समय में

स्थिति सुधार हो गया और खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति आ गयी है। भारत के आयात की प्रमुख वस्तुयें निम्नलिखित हैं :

(1) खाद्यान्न :

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले से ही हमारे देश में खाद्यान्न की कमी अनुभव की जाती रही है तथा स्वतंत्र भारत के बाद देश विभाजन के कारण यह समस्या अधिक जटिल हो गयी हमारा देश कृषि प्रधान देश होते हुए भी खाद्यान्न पूर्ति करने में असमर्थ रहा और उसे विदेशों पर निर्भर रहना पड़ा, भारत केवल गेहूं और चावल ही आयात करता था। गेहूं का आयात पी0ए0 480 की योजना के अन्तर्गत संयुक्त राज्य अमेरिका से किया जाता था अब इस योजना के अन्तर्गत आयात बन्द कर दिया गया है, इसके अतिरिक्त खाद्यान्न का आयात कनाडा, आष्ट्रेलिया, संयुक्त अरब गणराज्य, वर्मा तथा थाईलैण्ड से होता है।[1] नियोजित विकास प्रक्रिया में भारत के अर्थात व्यापार की संरचना में परिवर्तन आया है। नियोजन से पहले हम अधिकांशतः खाद्य पदार्थों का आयात करते थे।

संक्षेप में आयात की वस्तुओं को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है, यथा पूंजीगत वस्तुएं, कच्चा माल तथा उपभोक्ता वस्तुएं। नियोजन प्रयासों के परिणामस्वरूप नियोजन के डेढ़ शतक के अन्दर ही आयातों का स्वरूप पूंजीगत वस्तुओं एवं कच्चे माल के पक्ष में हो गया और उपभोक्ता वस्तुओं का आयात शनैः-शनैः कम होने लगा। आयातों का यह परिवर्तित स्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था में तीव्र औद्योगीकरण का संकेत करता है। यह परिर्वतन इस बात का सूचक है कि अब हम उपभोग वस्तुओं का आयात न करके उसका उत्पादन स्वयं ही कर रहे हैं। पूंजीगत वस्तुएं एवं कच्चे माल का आयात यह भी संकेत करता है कि हम नये उद्योगों का विकास एवं पूर्व स्थापित उद्योगों की क्षमता का विस्तार कर रहे हैं।

---

[1] भारतीय अर्थव्यवस्था, जगदीश नारायण मिश्र, इ0वि0वि0

भारत के आयातों की संरचना

मद	1970-71	1980-81	1990-91	1997-98
खाद्य पदार्थ और मुख्यतः खाद्य जीवित पशु (कच्चे) काजू को छोड़कर	242.4 (14.8)	380.2 (3.1)	NA	NA
कच्चा पदार्थ और मध्यवर्ती विनिर्माण	888.6 (54.31)	9759.6 (77.7)	NA	NA
पूंजीगत निर्मित वस्तुएं	404.0 (24.8)	1910.3 (15.3)	10461 (17.1)	26532
अन्य (अवर्गीकृत)	99.2 (6.1)	499.1 (3.9)	NA (2.2)	NA

यदि हम आयातों के मूल्य एवं वस्तुओं को देखें तो पाते है कि पेट्रालियम एवं पेट्रोलियम पदार्थ, उर्वरक एवं रासायनिक एवं पेट्रालियम पदार्थ, उर्वरक एवं रासायनिक उत्पादन, लोहा एवं इस्पात, अलौह धातुएं, वनस्पति तेल,

कागज एवं मशीनरी का आयात अधिक है। परन्तु इधर हाल के वर्षो में अलौह वनस्पति तेल के आयात में कमी आई है।

भारत के प्रमुख आयात (करोड़)

मद	1970-71	1980-81	1990-91	1997-98
पेट्रोलियम तेल और चिकनाई	136.6	5266.5	10816	30538
उर्वरक और रासायनिक	216.5	1490.1	4055	NA
लोहा और इस्पात	147.0	852.4	2113	5595
अलौह धातुएं	119.4	477.4	1102	3377
खाद्य तेल	23.1	682.2	326	2733
कागज एंव कागज बोर्ड, लुगदी अवशिष्ट कागज	25.5	186.5	914	3610
पूंजीगत वस्तुएं	404.0	1910.0	10466	26532
अन्य अवर्गीकृत	99.0	499.0	2890	-

भारत के प्रमुख निर्यात व निर्यात संरचना

1947 के बाद सरकार ने निर्यात बढ़ाने की ओर महत्वपूर्ण प्रयास किये। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व हमारे देश से प्रायः कच्चे माल का ही निर्यात किया जाता था, जिसमें कच्चा जूट, तिलहन, खनिज तथा कपास आदि वस्तुयें प्रमुख थी। लेकिन देश विभाजन का निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, अर्थात जहाँ हम कच्चे जूट के निर्यातक थे, वहां आयातक बन गये। हमारे निर्यातक की प्रमुख वस्तुएँ निम्नलिखित हैं :

1. जूट निर्मित सामान –

भारत के परम्परागत निर्यातों में जूट की वस्तुओं का महत्वपूर्ण स्थान है। अमेरिका और कनाडा भारत के प्रमुख जूट आयातक हैं। इसके अतिरिक्त आष्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, वर्मा, क्यूबा, थाईलैण्ड, मिश्र आदि देशों को भी जूट वस्तुओं का निर्यात किया जाता है। देश के विभाजन के फलस्वरूप हमारे यहां कच्चे जूट की बहुत कमी हो गयी, परन्तु सरकार के अथक प्रयासों के फलस्वरूप जूट के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है तथा हम आत्मनिर्भर हो गये हैं।

जूट निर्मित वस्तुओं के निर्यातक के रूप में भारत का महत्वपूर्ण स्थान है।

2. सूती वस्त्र –

भारत की निर्यात वस्तुओं में सूत और सूती कपड़ों का महत्वपूर्ण स्थान है। हमारे सूती कपड़े का निर्यात मुख्य रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, मलाया, आष्ट्रेलिया, वर्मा, श्रीलंका, मिश्र, ईरान, सूडान तथा इण्डोनेशिया आदि देशों को किया जाता है। सूती कपड़ों के संदर्भ में मिल एवं हथकरघा, दोनों क्षेत्रों से निर्मित किया जाता है।

3. चाय –

भारत चाय निर्यात में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। हमारा देश एक गर्म देश होने के नाते यहां के लोगों में चाय पीने की आदतें कम हैं, अतः देश में बहुत सी चाय बच जाती है। दूसरी ओर चाय का उत्पादन भी हमारे देश में अधिक होता है। भारत अपनी कुल चाय के उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत भाग निर्यात कर देता है, यह निर्यात

इंग्लैण्ड, अमेरिका, मिश्र, सूडान, कनाडा, आयरलैण्ड, नीदरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, और पश्चिमी जर्मनी को किया जाता है। इंग्लैण्ड चाय का सबसे बड़ा ग्राहक है। भारत विश्व के कुल चाय निर्यात का 48 प्रतिशत भाग निर्यात करता है।

4. **कच्चा लोहा –**

भारत कच्चे लोहे का भी निर्यात करता है, वर्ष 1970–71 में कच्चे लोहे का कुल निर्यात 117 करोड़ रूपये का था जो 1997–98 में बढ़कर 1763 करोड़ रूपये का हो गया था। इस प्रकार इसके निर्यात में वृद्धि हुई। भारत द्वारा कच्चे लोहे का निर्यात मुख्य रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका एवं जापान को किया जाता है।

5. **चीनी –**

भारत में गन्ना बहुत अधिक होता है, जिसके कारण देश में चीनी का बहुत अधिक उत्पादन होता है। इंग्लैण्ड, जापान, कनाडा, मलाया और हांग–कांग आदि देश भारतीय चीनी के प्रतुख ग्राहक हैं।

6. तम्बाकू –

भारत तम्बाकू का भी निर्यातक है, विशष रूप में कच्ची तम्बाकू का निर्यात करने में भारत महत्वपूर्ण स्थान रखता है, तम्बाकू के प्रमुख ग्राहक सिंगापुर, रूस, श्रीलंका, अदन, मलाया, जापान तथा इंग्लैण्ड हैं। 1997–98 में 1058 करोड़ रूपये का निर्यात किया गया।

7. अन्य निर्यात –

उपयुक्त वस्तुओं के अतिरिक्त भारत में मैंगनीज, अभ्रक, रबड़, नारियल का रेशा, रेशम, रंग, चमड़ा रंगने के पदार्थ, गोंद, मछजियां, कहवा, काजू तथा प्याज आदि का निर्यात किया जाता है। यदि हम विश्लेषण करें तो हम पाते हैं कि हमारा निर्यात–व्यापार दो श्रेणियों में विभक्त है –

1. परम्परागत वस्तुओं का निर्यात

2. अपरम्परागत वस्तुओं का निर्यात

परम्परागत वस्तुओं से अभिप्रायः उन वस्तुओं से है जिनका निर्यात हम एक लम्बे अरसे से करते चले आ

रहे हैं। जैसे सूती वस्त्र, कच्चा लोहा, चाय, चीनी, तम्बाकू, आदि सभी परम्परागत वस्तुएं हैं।

अपरम्परागत वस्तुएं वे हैं जिनका निर्यात हम हाल के वर्षों से कर रहे हैं, अपरम्परागत वस्तुओं की मदें निम्न हैं -

इंजीनियरिंग के सामान -

इंजीनियरिंग वस्तुओं के निर्यात में पिछले वर्षों में कई गुना वृद्धि हुई है निर्यातित इंजीनियरी सामान को देखने से पता चलता है कि हमारे देश में इंजीनियरी सामान के उत्पादन में विविधता, विशिष्टता और परिमार्जन आया है। भारतीय इन्जीनियरी सामान विकसित देशों में भी बिकने लगा है। भारत में निर्मित इंजीनियरी सामान आज विश्व बाजार में प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं।

चमड़ा एवं चमड़े का सामान

भारत की सभी निर्यात वस्तुओं में चमड़ा एवं चमड़े का सामान प्रमुख है। हमारे यहां से गाय, भैंस व बकरी के चमड़े का निर्यात किया जाता है। इसके अतिरिक्त चमड़े के

जूते, तैयार चमड़े का बना सामान निर्यात चमड़े के जूते, तैयार चमड़े का बना सामान निर्यात किया जाता है। इंग्लैण्ड, रूस, पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस, पाकिस्तान, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान आदि देशों को यह निर्यात किया जाता है। वर्ष 1997-98 में चमड़ा एवं चमड़े के कुल सामान का निर्यात 5461 करोड़ रूपये का हुआ।

रत्न एवं आभूषण

वर्ष 1970-71 के बाद से भारत के रत्न एवं आभूषण के निर्यात में महत्व पूर्ण वृद्धि हुई है। इस क्षेत्र में भारत का विश्वबाजार में महत्वपूर्ण स्थान है। वर्ष 1970-71 में कुल 45 करोड़ रूपये मूल्य के रत्न एवं आभूषण का निर्यात किया गया था जो 1990 - 91 में बढ़कर 5247 रूपये का हो गया तथा 1999-2000 में 33089 करोड़ रूपये हो गया।

निर्यात की प्रमुख वस्तुओं का विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष निकलता हे कि भारत की निर्यात वस्तुओं को चार समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है यथा

(क) खाद्यान्न समूह इसमें अनाज, चाय, तम्बाकू, काफी, काजू, केला आदि का समावेश होता है।

(ख) कच्चा माल समूह इसमें खाल, चमड़ा, ऊन, रूई, कच्चा लोहा, मैंगनीज, लाख, खनिज पदार्थ इत्यादि शामिल किये जाते हैं।

(ग) निर्मित वस्तुयें इसमें जूट का सामान, कपड़े, चमड़े का सामान, रेशम के वस्त्र, तैयार वस्त्र, सीमेन्ट, रेशम के वस्त्र, तैयार वस्त्र, सीमेन्ट, रसायन, खेल का सामान, जूते आदि शामिल होते हैं।

(घ) पूंजीगत वस्तुयें इसमें मशीनें, परिवहन, उपकरण, लोहा इस्पात, इंजीनियरिंग वस्तुयें एवं सिलाई मशीनें आदि सम्मिलित है।

इधर हाल के कुछ वर्षों में निर्यात न केवल बढ़ा है, वरन उसमें बहुत विविधता आई है। अब अनेक प्रकार की वस्तुओं का निर्यात किया जाने लगा है। जैसे पूंजीगत माल व अन्य इंजीनियरिंग सामग्री, रसायन व रासायनिक उत्पाद, चमड़ा व चमड़े का सामान।

भारत की निर्यात संरचना (करोड़ रूपये में)

मद	1970-71	1980-81	1990-91	1997-98
कृषि एवं सम्बद्ध उत्पाद	487.01	2056.66	6317.0	23691
अयस्क और खनिज (कोयला को छोड़कर)	164.02	413.56	1497.0	3018
विनिर्मित वस्तुयें	771.97	3746.81	23736.0	96795
खनिज ईंधन और चिकनाई (कोयला सहित)	12.60	27.85	9480	1443
अन्य	99.56	465.52	55.0	359

सिले सिलाये कपड़े, रेशमी व ऊनी वस्त्र, हस्त शिल्प, हीरे व आभूषण, तैयार भोजन व समुद्री सामग्री आदि।

परम्परागत निर्यात वस्तुओं, जैसे बागवानी, कृषि सामग्री, खनिज पदार्थ, कपास तथा पटसन की वस्तुओं के निर्यात में वृद्धि पर जोर दिया जाता है।

भारत की निर्यात संरचना (करोड़ रूपये में)

वस्तु	1970-71	1990-91	1997-98
1. चाय	148.3	1070.0	1505.0
2. काफी	25.1	252.0	1622-0
3. तम्बाकू	32.6	263.4	1058.0
4. काजू	57.1	446.8	1384.0
5. मसाले	38.8	234.0	1408.0
6. समुद्री उत्पाद	30.5	959.7	4313.0
7. जूट से बनी वस्तुयें	190.4	298.0	-
8. लौह अयस्क	117.3	1049.9	1763.0
9. चमड़ा एवं चमड़े के उत्पाद	80.2	2533.9	5461.0
10. सूती वस्त्र	145.4	6832.0	30001.0
11. सिले सूती वस्त्र	29.4	4010.0	14032.0
12. इंजीनियरिंग समान एवं परिवहन तथा लोहा इस्पात सहित	-	3880.0	18354.0
13. रसायन और समवर्गीय उत्पाद	29.4	2540.0	13500.0
14. रत्न एवं आभूषण	44.8	5247.0	19014.0
15. हस्त शिल्प गलीचे सहित	952.0	6167.0	3433.0

वर्ष 1970–71 से 1997–98 के बीच निर्यात संरचना की मात्रा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। कुछ गैर–परम्परागत वस्तुओं का निर्यात में बहुत तेजी से वृद्धि हुई है, यथा इंजीनियरिंग सामान, चमड़े एवं चमड़े के सामान, रसायन एवं समवर्गीय उत्पाद, रत्न, एवं आभूषण तथा सिले सिलाये सूती वस्त्र आदि। वर्ष 1997–98 तक निर्यात संरचना में गैर–परम्परागत वस्तुओं की निर्यात मात्राा एवं मूल्य में सर्वाधिक वृद्धि थी।

विदेशी व्यापार की दिशा में परिवर्तन

व्यापार की दिशा से हमारा अभिप्राय उन देशों से है जिनके साथ हमारा व्यापार होता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के लेकर अब तक भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। 1950–51 में हमारा व्यापार मुख्य रूप से इंग्लैण्ड से होता था जिससे होने वाले व्यापार के प्रतिशत में अब भी कमी हो रही है। व्यापार के लिये नवोदित हिस्सेदारी में संयुक्त राज्य अमेरिका हिस्सेदारी में संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, पूर्वी यूरोपीय समाजवादी देश, एशिया के देश मुख्य रूप से जापान और यूरोपीय साझा बाजार के देश हैं।

भारत के विदेशी व्यापार की दिशा का अध्ययन करने के लिये विश्व को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है- प्रथम, अमेरिका महाद्वीप के देश, इस महाद्वीप में उत्तरी अमेरिका, जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा सम्मिलित हैं के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध हैं, लेकिन अमेरिका के इन देशों के साथ हमारे विदेशी व्यापार की मात्रा कम है। 1971 में भारत और पाकिस्तान युद्धों के पश्चात् अमेरिका के साथ हमारा व्यापार कम हो गया। उदाहरण के लिये 1950-51 में हमारे निर्यात-व्यापार में संयुक्त राज्य अमेरिका का भाग 28.5 प्रतिशत था जो कि 1974-75 में घट कर 12.6 प्रतिशत रह गया था। इसी प्रकार आयात पक्ष की ओर अमेरिका का अंश घटा है। भारत संयुक्त राज्य अमेरिका से मशीनें, दवाइयां और रसायनिक पदार्थ आदि का आयात करता हैं यहां से विगत वर्षों तक खाद्यान्नों का भी भारी मात्रा में आयात किया गया।

दूसरी श्रेणी में यूरोप महाद्वीप के देश हैं। 1950-51 में होने वाले कुल भारतीय आयात में यूरोप से होने वाले आयातों का प्रतिशत 31.5 था। और मुख्य बात

यह है कि मुख्यतः यह समस्त आयात पश्चिमी यूरोप से हुआ था। पश्चिमी यूरोप से होने वाले आयात कुल आयातों के 30.5 प्रतितशत थे। विगत वर्षो में पूर्वीय यूरोप के देशों, जिनमें पोलैण्ड बल्गारिया आदि हैं का प्रतिशत बढ़ा है।

तृतीय श्रेणी में एशिया महाद्वीप के देशों विशेषकर सोवियत संघ से विदेशी व्यापार का सम्बन्ध बढ़ा है। सोवियत संघ में भारत की विभिन्न वस्तुओं का निर्यात बढ़ा है। इधर विगत कुछ वर्षो में सोवियत रूस से हमारा विदेशी व्यापार काफी तेजी से बढ़ा है जिसमें निर्यातों की प्रधानता रही है।

इसी प्रकार चतुर्थ श्रेणी के देशों जापान, श्रीलंका, एवं अन्य निकटवर्ती पूर्वी देशों से हमारा व्यापार बढ़ा है। इसके साथ ही साथ विकासशील देशों के साथ हमारा व्यापार बढ़ा है। इधर हाल के वर्षो में बंग्लादेश के साथ हमारे विदेशी व्यापार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। निर्यातों की आयातों की तुलना में वृद्धि दर अधिक थी। इसी प्रकार नेपाल के साथ भी हमारा निर्यात बढ़ा है। परन्तु चीन, श्रीलंका, एंव पाकिस्तान के अंश में कुछ कमी आयी है।

विदेशी व्यापार के निर्यात की दिशा में परिर्वतन का प्रमुख कारण यह रहा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का विविधीकरण हो रहा है। परिणाामस्वरूप कई नवीन वस्तुओं , जिन्हें अपरम्परागत वस्तुयें कहा जाता है, का उत्पादन बढा है जिनक निर्यात हेतु नवीन बाजारों की खोज आवश्यक थी। इसके अतिरिक्त अन्य विभिन्न देशों की संवृद्धि दर ब्रिटेन की संवृद्धि दर की तुलना में अधिक रही है, इसलिये वहां इन अपरम्परागत सामानों की मांग अधिक हुई है। भारतीय नियोजन समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना की परिकल्पना करता है, इस निहित तथ्य की भूमिका में भारत में समाजवादी देशों के बीच हुई व्यापार समझौते ने भारत की निर्यात व्यापार की दिशा में समुचित परविर्तन कर दिया है।

इसी प्रकार भारत के आयातों में ब्रिटेन का प्रतिशत कम हुआ है तथा समाजवादी देशों से हमारे आयात का प्रतिशत बढ़ रहा है। यहां भी आयात की दिशा में परिवर्तन का मुख्य कारण अर्थव्यवस्था का विविधीकरण ही है। विकास की प्रक्रिया में हमें कई नवीन वस्तुओं की आवश्कता हुई। जिसके लिये अन्य देशों में बाजारों की खोज आवश्यक हुई।

कई नवीन देशों से मिलने वाली आर्थिक सहायता तथा अनुदान के कारण यह आवश्यक हो गया कि उन देशों से सामान भी मंगाये जायें। भारत के विदेशी व्यापार की दिश के सम्बन्ध में मुख्य बात यह है कि इंग्लैण्ड अब भारत का प्रमुख आयातक एवं निर्यातक नहीं रहा है। भारत के विदेशी व्यापार में अब अमेरिका, जर्मनी, रूस, जापान आदि का मुख्य महत्व हो गया है। समाजवादी देशों से सम्बन्ध बढ़े हैं। इधर हाल के वर्षो में यूरोपीय आर्थिक समुदाय एशिया एवं औशनिका, तेल–निर्यातक तथा विकासशील देशों के साथ हमारे विदेशी व्यापार विशेषकर आयातों में 1970–71 एवं 1980–81 की तुलना में 1997–98 में अधिक हुई है। वर्तमान समय में भारत विश्व के करीब 90 देशों को अपने माल की निर्यात करता है। व्यापार को बढ़ावा देने के लिये विदेश स्थित भारत मिशनों में 68 वाणिज्य दूतावास भी काम कर रहे है। विकसित एवं विकासशील देशों के साथ आर्थिक एवं व्यापारिक सम्बन्धों को मजबूत बनाने के लिये भारत ने विभिन्न देशों के साथ संयुक्त उद्यम स्थापित करने की नीति अपनायी है। स्थापित किये गये संयुक्त उद्यमों में से 80

प्रतिशत संयुक्त उद्यम मलेशिया, सिंगापुर, श्रीलंका, नाइजीरिया, इंडोनेशिया, ब्रिटेन, थाईलैण्ड, नेपाल, कीनिया, तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थित है।

वर्ष 1988 को व्यापार योजना में सोवियत संघ से आयात करने वालीर कई नई मदों का पता लगाया गया था जिससे कि पांच वर्षों के भीतर भारत–सोवियत व्यापार के स्तर में ढाई गुना वृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। वर्ष 1990 को भारत–सोवियत व्यापार योजना में 6500 करोड़ रूपये का व्यापार किया गया जिसमें 4462 करोड़ रूपये का निर्यात 2038 करोड़ रूपये का आयात शामिल था। सोवियत संघ को निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में चाय, काफी, सूती वस्त्र, जूते के ऊपरी हिस्से, चिकित्सा और फार्मिसटिकल, सौन्दर्य प्रसाधन, इलेक्ट्रानिक उपकरण, टायर, रंगीन पिक्चर ट्यूब और मशीनी औजार शामिल है। सोवियत संघ से मुख्य रूप से कच्चे तेल का आयात किया जाता है। पोलैण्ड भारत से पर्याप्त मात्रा मं चाय, मूंगफली से तैयार उत्पाद, सूती ओर इंजीनियरिंग वस्तुओं का आयात करता है। रोमानिया को मुख्य रूप से कच्चे लोहे और अन्य उत्पादों का निर्यात किया जाता

है। उपर्युक्त विवेचन से अब यह स्पष्ट हो गया है कि भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में हुये परिवर्तन निश्चित ही लाभकारी है।

नौवीं योजना के ऐसा अनुमान लगाया गया है कि आयात की वृद्धि दर 10.8 प्रतिशत प्रतिवर्ष होगी तथा योजना के अन्त 2001–2002 में कुल आयात 2209860 नि0 रूपये का होगा। इस योजना में निर्यात को प्रोत्साहित करने वाले आयातों पर भी ध्यान दिया जायेगा।

इसी प्रकार उत्तरी अमेरिका एवं पूर्वीय यूरोप के देशों के साथ हमारा निर्यात व्यापार पिछले दशक की तुलना में इस दशक में अधिक बढ़ा है। विकासशील देशों के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध अधिक बढ़े हैं तथा भविष्य में और अधिक सुदृढ होगें। इन देशों में भारत ने केवल अपरम्परागत वस्तुओं का निर्यात करता है तथा उसके साथ ही साथ तकनीकी सेवा एवं ज्ञान का भी निर्यात करता है। विभिन्न आर्थिक संगठनों/समूहों के अनुसार देश का सर्वाधिक व्यापार ओ0ई0सी0डी0 राष्ट्रों से है जिसमें भी व्यक्तिगत रूप से सर्वाधिक व्यापार यूरोपीय समुदायों के राष्ट्रो से है। विभिन्न

समूहों/राष्ट्रों के साथ विगत वर्षों में भारत के विदेशी व्यापार की स्थिति को तालिका–8 में दर्शाया गया है :

तालिका–8

देश/क्षेत्र	2000–2001	
	आयात	निर्यात
(1) आर्थिक सहयोग विकास संगठ्न जिसमें:	92090(39.9)	107241(52.7)
(क) यूरोपीय संघ	45663(19.8)	46123(22.7)
1. बेल्जियम	13112(5.7)	6718(3.3)
2. फ्रांस	2928(1.3)	4660(2.3)
3. जर्मनी	8039(3.5)	8718(4.3)
4. नीदरलैण्ड	1999(0.9)	4021(2.0)
5. यूनाइटेट किंगडम	14472(6.3)	10502(5.2)
(ख) उत्तरी अमरीका	15588(6.8)	45509(22.4)
1. कनाडा	1814(0.8)	2999(1.5)
2. संयुक्त राज्य अमेरिका	13774(6.0)	42510(20.9)
(ग) एशिया तथा प्रशान्त महाद्वीप जिसमें	13634(5.9)	10341(5.1)
1. आस्ट्रेलिया	4855()2.1	1854(0.9)
2. जापान	8416(3.6)	8198(4.0)

(2) पेट्रोलियम निर्यातक देश संगठन जिसमें	11885(5.1)	22223(10.9)
1. ईरान	465(0.2)	1037()0.5
2. ईराक	32(नगण्य)	384(0.2)
3. कुवैत	515(0.2)	910(0.4)
4. सउदी अरब	2838(1.2)	3760(1.8)
(3) पूर्वी यूरोप जिसमें	2968(1.3)	4964(2.4)
1. जर्मन लोकतंत्रीय गणराज्य		
2. रोमानिया	99(नगण्य)	56(नगण्य)
3.रूस	2365(1.0)	4061(2.0)
(4) विकासशील देश जिसमें	40347(17.5)	54282()26.7
1. अफ्रीका	3838(1.7)	6489(3.2)
2. एशिया	33149(14.4)	43566(21.4)
3. लैटिन अमेरिका और कैरेबियन	3360(1.5)	4228(2.1)
4. अन्य	**83583(36.2)**	**14861(7.3)**
योग	**230873(100.0)**	**203571(100.0)**

हाल के वर्षो में भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा में वृद्धि के साथ -साथ इसकी दिशा में भी परिवर्तन के संकेत प्राप्त हो रहे हैं। पश्चिमी यूरोप में व्यापार कुछ कम होकर पूर्व एशिया व आर्शीनिया की ओर बढ़ रहा है। पूर्वी

एशियाई क्षेत्र में भारतीय निर्यातों में वृद्धि का मुख्य कारण जापान तथा एशियान राष्ट्रों में विकास दर अच्छी रहने के कारण मांग का ऊँचा बना रहता रहता है, जबकि यूरोपीय राष्ट्रों में फ्रांस, पुर्तगाल, स्पेन, व स्कैन्डिनेवियन राष्ट्रों में मंदी के कारण मांग शिथिल रही है। वित्तीय वर्ष 2000-2001 में भी संयुक्त राज्य अमरीका भारत के निर्यातों का अकेला सबसे बडा खरीददार रहा था। 2000-2001 में भारत के निर्यातों का 20.9 प्रतिशत अमरीका को निर्यात किया गया। 1991 तक भारत के निर्यातों के 18 प्रतिशत सोवियत संघ व पूर्वी यूरोप के अन्य समाजवादी देशों को लक्षित होते थे किन्तु सोवियत संघ के विघटन तथा पूर्वी यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं के स्वरूप में परिवर्तन के पश्चात् इन देशों को किये जाने वाले निर्यात 2000-2001 में घटकर 2.4 प्रतिशत ही रह गये हैं। रूस को किये जाने वाले निर्यात में हाल ही में कुछ वृद्धि की प्रवृत्ति परिलक्षित हुई है। दिशानुसार भारत का सर्वाधिक विदेशी व्यापार संयुक्त राज्य अमेरिका से है। यद्यपि विगत पांच वर्षो से अमरीकी व्यापार कानून की धारा सुपर-301 व स्पेशल-301 के कारण भारत अमरीकी व्यापार पर दबाव बना

हुआ है, फिर भी भारत सरकार ने अपनी व्यापारिक नीति में कोई परिवर्तन न करने की घोषणा की है। अनन्तिम आंकड़ों के अनुसार 2000-2001 में भारत ने अमरीका को 42510 करोड़ रूपये मूल्य का निर्यात किया, जबकि अमरीका से भारतीय आयातों का मूल्य 137774 करोड़ रूपये अनुमानित था।

नियोजन काल में भारत के विदेशी व्यापार के गठन में अनेक संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं, निर्यातों में गैर परम्परागत वस्तुओं का प्रतिशत निरन्तर बढ़ा है, रसायनों व इंजीनियरिंग वस्तुओं के निर्यातों में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। दस्तकारी का सामान (जिसमें रत्न व आभूषण भी शामिल है) विगत वर्षों में निर्यात की सबसे प्रमुख वस्तु के रूप में उभरा है, वित्तीय वर्ष 2000-2001 के लिए डालर मूल्य में निर्यातों में वृद्धि का लक्ष्य 18 प्रतिशत रखा गया था, किन्तु वास्तव में वृद्धि 21 प्रतिशत 27.6 प्रतिशत रही है, वित्तीय वर्ष 2000-2001 के दौरान इंजीनियरिंग उत्पादों के निर्यात 6976 अरब डालर के रहे, वर्ष 2000-2001 के दौरान देश के समुद्री उत्पादों का निर्यात मूल्य 6367 करोड़ रूपये

(1.394 अरब डालर) रहा है, इस वर्ष (2000-2001) रत्न एवं आभूषण का निर्यात 7.384 अरब डालर तथा सिले सिलाये वस्त्रों का निर्यात 3.509 अरब डालर का रहा है, वित्तीय वर्ष 2000-2001 में देश से रेशम का कुल निर्यात 334908 मिलियन डालर (1525.74 करोड़ रूपये) का रहा है। वर्ष 2000-2001 में इलेक्ट्रानिक हार्डवेयर सेवा निर्यात वर्ष 1999-2000 को समाप्त पांच वर्षों के दौरान लगभग 52.5 प्रतिशत वार्षिक दर से बढे थे वर्ष 2001-2002 के दौरान इनका निर्यात 9 विलियन डालर (44300 करोड़ रूपये) का रहा, जो पिछले वर्ष के 7 अरब डालर (32288 करोड़ रूपये) की तुलना में 37 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2000-2001 के दौरान देश के कुल टेक्सटाइल निर्यात 12.1 प्रतिशत अरब डालर के थे जिनका 2001-2002 के दौरान भी लगभग इतनी ही राशि के रने का अनुमान है, वर्ष 2002-2003 के लिए टेक्सटाइल के निर्यात का लक्ष्य 15 अरब डालर का रखा गया है, वर्ष 2001-2002 के दौरान देश से हस्त शिल्प का निर्यात 142.85 करोड़ डालर रहा था जिसमें वर्ष 2002-2003 में 160 करोड़ डालर हो जाने का

लक्ष्य निर्धारित किया गया है। वर्ष 2000-2001 में भारत के निर्यातों के आंकड़े तालिका 9 में प्रस्तुत है।

तालिका-9

वस्तु	निर्यात मूल्य (करोड़ रूपयों में)
(1). कृषि एंव सम्बद्ध उत्पाद	28536
1. काजू की गिरी	1883
2. काफी	1185
3. समुद्री उत्पाद	6363
4. खली	2045
5. कपास	224
6. चावल	2943
7. मसाले	1619
8. चीनी	511
9. चाय और मेट	1976
10. तम्बाकू	871
(2) अयस्क और खनिज	4139
11. लौह अयस्क	1634

(3) विनिर्मित वस्तुएं	160771
12. इंजीनियरिंग वस्तुयें	31870
13. रसायन	22850
14. टेक्सटाइल्स	49831
15. सिले सिलाये परिधान	25478
16. जूट से निर्मित	933
17. चमड़ा और चमड़ा उत्पाद	8914
18. हस्ततशिल्प	5097
19. हीरे और जवाहरात	33734
(4) खनिज एवं ईंधन, लुब्रीकेन्ट (कोयले सहित)	8821
(5) अन्य	1304
योग	**203571**

भारत के आयातों में पेट्रोलियम पदार्थों के अतिरिक्त पूंजीगत सामान, कार्बनिक व अकार्बनिक रसायन एवं औषधीय उत्पाद प्रमुख है, मोती एवं रत्नों का भी भारी मूल्य का आयात किया जाता है। किन्तु साज-सज्जा के पश्चात् इनका निर्यात कर दिया जाता है : 2000-2001 में

मूल्यानुसार भारत के प्रमुख आयातों के तालिका-10 में दर्शाया गया है :

तालिका-10

मद	आयात मूल्य (करोड़ रूपयों में)
(1). अनाज और अनाज के उत्पाद	90
(2) कच्चे माल और मध्यवर्ती विनिर्माण	NA
1. काजू की गिरी	962
2. कच्च रबर	695
3. रेशे (ऊनी)	2002
4. पेट्रोलियम तेल और लुब्रीकेन्ट	71497
5. खाद्य तेल	6093
6. उर्वरक	3034
7. रसायन	1542
8. रंगाई तथा रंगाई की सामग्री	874
9. चिकित्सीय तथा औषध उत्पाद	1723
10. प्लास्टिक सामग्री	2571

11. लुगदी और अवशिष्ट कागज	1290
12. कागज गत्ता	2005
13. मोती एवं रत्न	22101
14. लौह इस्पात	3569
15. अलौह धातुएं	2462
(3) पूंजीगत वस्तुएं	25281
अन्य	NA
योग	**230873**

भारत का विदेशी व्यापार (मिलियन डालर में)

सूचक	1998-99	1999-2000	2000-2001	2001-2002 (अप्रैल-दिसम्बर)
निर्यात	33218	36822	44560	32572
	(-5.1)	(10.8)	(21.0)	(0.6)
आयात	42389	49671	50536	38362
	(2.2)	(170.2)	(1.7)	(0.3)
व्यापार घाटा	9171	12849	5976	5790

अध्याय दो

विश्व व्यापार संगठन का संक्षिप्त इतिहास

विश्व व्यापार संगठन की स्थापना इसके पूर्ववर्ती और गैट की उरूग्वे चक्र की लम्बी वार्ता (1986-93) के परिणामस्वरूप हुई थी। इसकी स्थापना के लिए उरूग्वे चक्र के समझौते पर मोरक्को के मराकश नगर में अप्रैल 1994 में गैट के सदस्य राष्ट्रो ने हस्ताक्षर किये थे।

1 जनवरी 1995 से इसकी विधिवत् स्थापना हो गयी तथा इसने शिव व्यापार के नियमन के लिए एक औपचारिक संगठन के रूप में गैट का स्थान ले लिया। गैट एक अनौपचारिक संगठन के रूप में ही 1948 से विश्व व्यापार का नियमन करता चला आ रहा था।

गैट की अस्थायी प्रकृति के विपरीत विश्व व्यापार संगठन एक स्थायी संगठन है। इसकी स्थापना सदस्य राष्ट्रो की संसदों द्वारा अनुमोदित एक अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि के आधार पर हुई है। आर्थिक जगत में इसकी स्थिति आज अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व बैंक के तुल्य ही है। किन्तु मुद्रा कोष व

विश्व बैंक की भाँति यह संयुक्त राष्ट्र संघ की एक एजेन्सी नहीं है। डब्ल्यू0टी0ओ0 दरअसल गैट के स्थान पर बनाया गया एक स्थायी संस्था है। अतः डब्ल्यू0टी0ओ0 को ठीक प्रकार से समझने के लिए गैट के बारे में जानना नितान्त आवश्यक है।

विश्व व्यापार संगठन :

व्यापार और तटकर की विश्व स्तर पर एक स्पष्ट नीति निर्धारित करने के लिए सन् 1947 में गैट व्यापार, तट कर और मुक्त व्यापार की संधि पर स्वीकृति हुई थी। गैट की परिधि बढ़ती अर्थ व्यवस्था के साथ विस्तृत होती गयी। 1 जनवरी 1995 में गैट के स्थान पर विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू0टी0ओ0) की स्थापना हुई।

प्रशुल्क एवं व्यापार पर सामान्य समझौता – गैट :

1930 की विश्वव्यापी मन्दी के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विकास अस्त-व्यस्त हो गया था, और विभिन्न देशों ने अपने-अपने हितों की सुरक्षा के लिए आयात

नियन्त्रणों का सहारा लेना प्रारम्भ कर दिया था, परिणामतः विश्व व्यापार में कमी उत्पन्न हो गयी, इससे उभरने के लिए नवम्बर 1945 में अमरीका ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा रोजगार के विस्तार के उद्देश्य से अनेक प्रस्ताव प्रकाशित किये। अंततः 30 अक्टूबर, 1947 को जेनेवा (स्वीटजरलैण्ड) में 23 देशों द्वारा सीमा शुल्कों से सम्बन्धित एक सामान्य समझौते पर हस्ताक्षर किये गये, इसी समझौते को 'गैट' के नाम से जाना जाता है। यह समझौता 1 जनवरी 1948 से लागू हुआ, प्रारमी में गैट की स्थापना एक अस्थायी प्रबन्ध के रूप में की गयी थी, किन्तु कालान्तर में यह एक स्थायी समझौता बन गया, गैट का मुख्यालय जेनेवा में था, 12 दिसम्बर 1955 को गैट का अस्तित्व समाप्त कर दिया गया तथा इसकी जगह 1 जनवरी 1955 में स्थापित विश्व व्यापार संगठन ने ले ली है।

गैट के उद्देश्य :

गैट की स्थापना के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य थे–

1- व्यापारिक क्षेत्र से पक्षपात हटाकर सभी देशों को बाजार की प्राप्ति के लिए सामान अवसर प्रदान करना।

2- वास्तविक आय वृद्धि तथा वस्तुओं के लिए प्रभावशाली माँग को बढ़ाना।

3- पारस्परिक लाभ के लिए व्यापारिक तट करों एवं रुकावटों को कम करना तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से भेदभाव मिटाना।

4- अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी समस्याओं को पारस्परिक सहयोग व परामर्श द्वारा सुविधापूर्वक सुलझाना आदि।

5- विश्व में समग्र दृष्टिकोण के आधार पर सम्पूर्ण समाज के लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठानां

इन उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों की प्राप्ति स्वतन्त्र और बहुपक्षीय व्यापार को प्रोत्साहित करके अप्रत्यक्षरूप से की जाती थी, गैट चार्टर में यह स्पष्ट किया गया था कि गैट के किसी भी सदस्य देश द्वारा किसी दूसरे देश के उत्पादों के

लिए जो लाभ, अनुग्रह अथवा छूट जी जाये। वह बिना किसी शर्त के समस्त सदस्य देशों के सम्बन्धित उत्पादों के लिए स्वतः दी जायेगी, इस प्रकार सबसे अधिक प्रिय राष्ट्र का सिद्धान्त स्पष्ट करता है कि प्रत्येक राष्ट्र को सर्वाधिक अनुग्रह प्राप्त राष्ट्र समझा जाना चाहिए। सदस्य देशों के मध्य विपक्षीय आधार पर किये जाने वाले समझौते के अन्तर्गत जो रियायतें दी जाती है, वे सभी सदस्य देशों को दी जानी चाहिए, सीमा संधों तथा स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्रों की स्थापना की अनुमति इस शर्त पर दी जा सकती है कि उनके फलस्वरुप सम्बन्धित क्षेत्रों में व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ते हो।

वार्तादौर	वर्ष	स्थान	विषय एवं परिणाम
प्रथम	1947	जेनेवा (स्वीटजरलैण्ड)	प्रथम गैट समझौते पर हस्ताक्षर विशिष्ट उत्पादों प्रशुल्क में कटौती
द्वितीय	1949	अनेसी (फ्रान्स)	
तृतीय	1950-51	तोरके (इग्लैण्ड)	
चतुर्थ	1956	जेनेवा	
पंचम	1960-61	जेनेवा	यूरोपीय समुदाय का वार्ता में प्रथम बार आविर्भाव तथा प्रशुल्कों में औसतन 20% कटौती
षष्टम (केमेडी राउन्ड)	1964-67	जेनेवा	विनिर्मित वस्तुओं पर प्रतिबन्धों में ù की कमी की प्राप्ति

सप्तम (टोकियो राउण्ड)	1973-79	जेनेवा	गैट प्रशुल्क प्रतिबन्ध, राजसहायता प्राप्त निर्यात ऊष्ण कटिबन्धीय वस्तुओं से सम्बन्धित 11 समझौतों पर हस्ताक्षर
अष्टम (उरूग्वे राउण्ड)	1986-93	पुंता डेल एस्ते (उरूग्वे में प्रारम्भ व जेनेवा में समाप्त)	कृषि, सेवा, बौद्धिक सम्पदा अधिकार तथा विदेशी निवेश के विनियमन से सम्बन्धित विषयों का समावेश।

(2. जनरल एग्रीमेन्ट आफ ट्रेड एण्ड टैरिफ – एक संक्षिप्त इतिहास)

टैरिफ एवं व्यापार पर सामान्य सन्धि

टैरिफ एवं व्यापार पर सामान्य सन्धि सम्बन्धी संगठन जेनेवा में 1948 में स्थापित किया गया ताकि सभी सदस्य देशों की संवृद्धि और विकास के लिए निबार्ध व्यापार के लक्ष्य को बढ़ावा दिया जा सके। गैट का मुख्य उद्देश्य वस्तु व्यापार में प्रतिस्पर्धा को सुनिश्चित करने के लिए व्यापार अवरोधकों की समाप्ति या उन्हें कम करना था। गैट के आधीन बात-चीत के पहले सात रौदों का उद्देश्य व्यापार अवरोधकों को कम करके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करना था। इसके अतिरिक्त यह भी प्रयास किया गया कि सदस्य देशों द्वारा लगाये गये गैर टैरिफ प्रतिबन्ध भी कम

किये जायें। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मुद्दों पर बहस और वार्ता के लिए गैट एक लाभदायक मंच के रूप में उभरा।

1. वार्ता का उरूगुए दौर गैट का आँठवा दौर

बहुपक्षीय व्यापार वार्ता का आठवाँ रौद जिसे आम वाले चाल में उरूगुए कहा जाता है (चूंकि इसका आरम्भ में उरूगुए में हुआ) सितम्बर 1986 में गैट के सदस्यों में मंत्री स्तर पर वार्ता के रूप में एक विशेष अधिवेशन में शुरू हुआ। पिछले चार दशकों के दौरान विश्व व्यापार में 1948 के पश्चात् गैट की स्थापना के बाद संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं। 1950 में विश्व वस्तु व्यापार में कृषि का भाग 46 प्रतिशत था, जो कम होकर 1987 में 13 प्रतिशत रह गया, इसके साथ विकसित देशों के सकल देशीय उत्पाद के विभिन्न क्षेत्रों में योगदान और रोजगार के ढाँचे में गुणात्मक परिवर्तन हुआ है। विकसित देशों के सकल देशीय उत्पाद में सेवा क्षेत्र का भाग तेजी से बढ़ रहा है। यह 1986 में सकल देशीय उत्पाद की 50 से 70 प्रतिशत की अभिसीमा में था, रोजगार के भाग के रूप में भी सेवा क्षेत्र का महत्त्व बढ़ता जा रहा था। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका में सेवा क्षेत्र द्वारा सकल

देशीय उत्पाद में लगभग दो-तिहाई योगदान दिया गया और रोजगार के रूप में यह कुल श्रमशक्ति के 70 प्रतिशत से भी अधिक था। 1980 में संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा सेवाओं के रूप में 3500 करोड़ डालर का निर्यात किया गया। वस्तु क्षेत्र में तुलनात्मक लाभ जापान एवं कई अन्य नव-औद्योगीकृत देशों के पक्ष में परिवर्तित हो गया। इन सभी कारण तत्वों के परिणामस्वरूप यू0एस0ए0 के नेतृत्व में विकसित देशों ने सेवा क्षेत्र को व्यापारिक वार्ता के आधीन लाने की पहल की।

अतः उरूगुए दौर में 15 क्षेत्रों में वार्ता करने का आदेश दिया, भाग-1 के आधीन वस्तु व्यापार के सम्बन्ध में 14 क्षेत्रों में बातचीत करने का कार्य सौंपा गया और भाग-2 में सेवाओं सम्बन्धी व्यापार के बारे में बातचीत करने का कार्य सौंपा गया।

भाग-1 में निम्नलिखित को शामिल किया गया-

1- टैरिफ, 2- गैरटैरिफ उपाय, 3-ऊष्णकटिबन्धीय वस्तुएँ, 4- प्राकृतिक संसाधन- आधारित वस्तुएँ, 5- टैक्सटाइल एवं कपड़े, 6- कृषि, 7- गैट अनुच्छेद, 8- बचाव सम्बन्धी

उपाय, 9–बहुपक्षीय व्यापार वार्ता, 10– सन्धियाँ एवं व्यवस्थाएँ, 11–विवाद निपटारा, 12– बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के साथ सम्बन्धित व्यापारिक पहलू, 13– अर्थसाहाय्य और प्रतितुलनकारी उपाय, 14– व्यापार–सम्बन्धित निवेश उपाय, 15– गैट–प्रणालियों की कार्यविधि।

अतः गैट के पारस्परिक विषयों अर्थात् टैरिफ एवं टैरिफ–भिन्न अवरोधकों और अर्थसाहाय्यों और प्रति तुलनकारी उपायों, डम्पिंग विरोध उपायों आदि पर की नियमावली और अनुशासन के अतिरिक्त बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के साथ सम्बन्धित व्यापारिक पहलुओं व्यापार से सम्बन्धित निवेश के उपाय और सेवाओं में व्यापार पहली बार बातचीत में शामिल किये गये।

यह आशा की जाती थी कि यह वार्ता 4 वर्ष के अन्दर पूरी हो जायेगी, परन्तु सहयोगी देशों में मतभेद हो जाने के कारण, विशेषकर ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर जो कृषि, टेक्सटाइल्स, डम्पिंग विरोधी उपायों आदि से सम्बन्धित थे, यह अवधि लम्बी हो गयी। इस गतिरोध को तोड़ने के उद्देश्य से

श्री आर्थर डंकल, डायरेक्टर जनरल, गैट ने एक बहुत विस्तृत दस्तावेज प्रतिपादित किया जिसे आम भाषा में डंकल–प्रस्ताव कहकर पुकारा गया। उन्होंने इस दस्तावेज को सदस्य देशों के सामने एक समझौतावादी दस्तावेज के रूप में पेश किया। 15 दिसम्बर 1993 को डंकल–प्रस्तावों ने अन्तिम–अधिनियम का रूप धारण किया और भारत ने 47 देशों के साथ 15 अप्रैल 1994 को इस संधि पर हस्ताक्षर किये।

2. उरूगुए दौर का अन्तिम अधिनियम और इसके भारत के लिए गुह्यार्थ :

वामपंथी दलों, जनता दल और भारतीय जनता पार्टी ने डंकल प्रस्तावों को स्वीकार करने के विरोध में भारी संघर्ष चालू किया। इस आक्रमण का मुख्य बल इस बात पर था कि संयुक्त राज्य अमेरिका और बहुराष्ट्रीय निगमों के दबाव के अधीन भारत ने अपने प्रभुसत्ता समर्पित कर दी है। इसमें संदेह नहीं है कि कुछ अलोचनाओं की प्रेरणा राजनीतिक थी, परन्तु यह कहना सही होगा कि कुछ हद तक ये आलोचनाएँ गुमराह करने वाली है, इसके विरूद्ध भारत सरकार का यह

दावा कि गैट संधि के परिणाम स्वरूप हमारे निर्यात 200 करोड़ डालर की दर से प्रतिवर्ष बढ़ेंगे, अतिशयोक्ति है।

बुनियादी शुल्क और निर्यात साहाय्यों में कटौती :

टैरिफ के सम्बन्ध में भारत ने बुनियादी शुल्क को 30 प्रतिशत से घटाने का वायदा किया है। यह कटौती 6 वर्षो के दौरान लागू की जायेगी, और कच्चे मालों अर्न्तवर्ती वस्तुओं और पूँजीवस्तुओं पर लागू होगी। किन्तु इसमें कृषि वस्तुएँ, पेट्रोलियम पदार्थ उवर्रक कुछ अलौह धातुएँ जैसे जस्ता और तांबा शामिल नहीं की गयी है, ये टैरिफ कटौतियाँ भारत में चालू किये गये आर्थिक सुधारों का अंग भी है और इनकी सिफारिश चेलैय्या समिति ने की थी।

गैट सन्धि में यह तक किय गया है कि डम्पिंग-विरोधी कार्यवाही समाप्त कर दी जायेगी यदि किसी देश द्वारा आयात के रूप में डम्प की गयी वस्तुओं की मात्रा उस देश-विशेष के घरेलू बाजार के 1 प्रतिशत से कम है। इस सम्बन्ध के केवल एक अपवाद इस परिस्थिति में उत्पन्न होता है यदि डम्प करने वाले देश सामूहिक रूप में कुछ घरेलू

व्यापार के 2.5 प्रतिशत वस्तुएँ उड़ेल देते है। डम्पिंग विरोधी कार्यवाही इस हालत में भी समाप्त कर दी जायेगी यदि डम्पिंग से प्राप्त होने वाला लाभ 20% से कम हो। इन कण्डिकाओं से भारत को अपने निर्यात को डम्पिंग विरोधी जाँच के विरूद्ध संरक्षण के रूप में सहायता मिलेगी। भारत के लिए कहीं बेहतर होता यदि डम्प किये गये आयात की मात्रा का भाग घरेलू बाजार के 1 प्रतिशत से अधिक होता।

निर्यात-साहाय्यों की मनाही के सम्बन्ध में गैट सन्धि में यह निश्चय किया गया कि भारत जैसे देश जिनकी प्रतिव्यक्ति आय 1000 डालर से कम है को अपने उत्पादों पर अर्थ साहाय्य हटाने से छूट होगी यदि उनका विश्व व्यापार में भाग 3.25 प्रतिशत से कम है।

इस कसौटी का प्रयोग करने से पता चलता है कि भारत का भाग चाय, चावल, गर्म मसाले, कच्चे लोहे, चमड़े की निर्मित वस्तुओं, हीरे और जवाहारात में इस सीमा से अधिक है। ये सभी मदें मिलकर भारत के कुल निर्यात का केवल 22.8 प्रतिशत है, इसका अर्थ यह हुआ कि 77

प्रतिशत निर्यात गैट-संधि की परिधि में नहीं है। अतः निर्यात साहाय्यों में कमी या इन्हें पूर्णतः समाप्त कर देने से, जैसे कि आलोचकों का आरोप है, भारतीय निर्यात पर कोई विनाशकारी प्रभाव नहीं होंगे।

बौद्धिक-सम्पत्ति अधिकारों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव :

कुछ आलोचकों का विचार है कि बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों का जो गैट-संधि में सन्निहित है, भारतीय अर्थव्यवस्था पर सर्वनाशी प्रभाव होगा। ऐसा विशेषकर दो क्षेत्रों में होगा- औषधों एवं कृषि में। ये दोनों क्षेत्र जनकल्याण पर प्रभाव डालते है। व्यापार से सम्बन्धित बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के प्रभाव को जनने के लिए नयी पेटेन्ट प्रणाली के क्षेत्र को समझना होगा, इसके आधीन औद्योगिक टेक्नोलॉजी की सभी क्षेत्रों में किसी भी आविष्कार के लिए पेटेन्ट उपलब्ध होंगे, चाहे वे उत्पाद के बारे में या प्रक्रिया के बारे में।

पेटेन्ट संरक्षण का विस्तार सूक्ष्म जीवों, गैर जैविक और सूक्ष्म जैविक क्रियाओं या पौधों को विभिन्न किस्मों तक

किया जा सकता है, इसका अर्थ यह है कि समग्र औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र और एक हद तक जीव-टेक्नोलॉजी क्षेत्र पेटेन्ट की शर्तो के अधीन आ जायेगा।

पेटेन्ट संरक्षण में एक बहुत ही खतरनाक शर्त लगाई गयी है, और इसका सम्बन्ध पेटेन्ट प्रणाली के मूल दर्शन में परिवर्तन करना है जिसके अनुसार वस्तुएँ, चाहे वे आयात की जाये या देश में बनायी जायें, बिना किसी भेद भाव के पेटेन्ट के संरक्षण के आधीन होंगी। इसका तात्पर्य है कि पेटेन्ट प्रणाली न केवल उत्पादन-एकाधिकार स्थापित करना चाहती है बल्कि यह आयात-एकाधिकार भी कायम करना चाहती है, इस परिस्थिति में पेटेन्टधारी केवल आयात ही करेंगे, और राष्ट्रीय सरकार आयातित वस्तुओं पर किसी प्रकार का कीमत नियन्त्रण नहीं कर सकेगी। इस शर्त की सहायता से पेटेन्टधारी सभी प्रकार के कीमत नियन्त्रण के उपायों का उल्लंघन कर सकेंगे।

कृषि में पेटेन्ट या पेटेन्ट जैसा संरक्षण :

डंकन अन्तिम अधिनियम ने कृषि में पेटेन्ट जैसे संरक्षण प्रदान करने के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के अनुसार संरक्षण का विस्तार सूक्ष्म जीवों गैर-जैविक और सूक्ष्म जैविक क्रियाओं और पौधों की विभिन्न किस्मों तक किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 27 में यह उल्लेख किया गया है कि भारत को पौधों की किस्मों की संरक्षण देने के लिए या तो पेटेन्ट या एक प्रभावी स्वाजातिक प्रणाली या दोनों के सम्मिश्रण को आधार बनाना चाहिए। यह प्रणाली 10 वर्षो की संक्रमण अवधि के पश्चात् लागू की जायेगी।

इस बात पर बल देना जरूरी है कि गैट के आधीन अधिकतर पेटेन्ट प्रणालियों में कृषि, खाद्य और स्वास्थ्य को इनके क्षेत्र से बाहर रखा गया। कुछ विकसित देशों ने एक पृथक स्वजातिक प्रणाली कायम कर लिया जिसने पौधा-जनकों को बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार प्रदान किये। इसे 1961 में पौधों की नयी किस्मों के संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संघ ने

संहिताबद्ध कर दिया। 1978 में यू0एस0स0 को यह इजाजत दी गयी कि वह अपने कानूनों में तबदीली किये बिना अन्तर्राष्ट्रीय संघ का सदस्य बन जाय। परन्तु यह अन्तर्राष्ट्रीय संघ मुख्यतः विकसित देशों की ही संस्था बना रहा।

1978 के अन्तर्राष्ट्रीय संघ के सम्मेलन के अधीन, नई किस्म के पौधा-जनक को उस किस्म के बीजक को व्यापारिक मार्गो द्वारा इनके उत्पादन एवं विपणन का लगभग पूर्ण एकाधिकार था। बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के आधीन उसके अधिकार के केवल दो ही अपवाद थे-

(1) जनक द्वारा छूट जिसके आधीन किसी अन्य जनक को प्रजजन उद्देश्य के लिए संरक्षित किस्म के प्रयोग की इजाजत दी गयी हों।

(2) किसान को छूट जिसके आधीन किसी किसान को अपनी फसल में से संरक्षित बीजों को अपनी जगली फलस बोने के लिए रखने का अधिकार दिया गया हो। यह सम्मेलन 24 पौधों तक सीमित था और संरक्षण की अवधि 15 से 18 वर्ष की अभिसीमा में रखी गयी।

इस सम्मेलन को 1991 में संशोधित किया गया और संशोधित अन्तर्राष्ट्रीय संधि में पौधों–जनकों को संरक्षण के और ऊँचे स्तर उपलब्ध कराये गये और किसी नयी किस्म के जनकों के अधिकार और मजबूत कर दिये गये। 1991 की संधि के आधीन, जनक को पौधा जनक अधिकारधारी को रायल्टी अदा करनी होगी, यदि उनकी नयी किस्म संरक्षित किस्म से किसी भी लक्षण में मिलती–जुलती हो। इसी प्रकार, किसान को यह स्वाभाविक छूट नहीं दी गयी थी, कि वह संरक्षित किस्म के अपनी फार्म पर बचाये गये बीजों में नयी फसल में बो सके, उसे या त4ो बीजों के प्रयोग के लिए क्षतिपूर्ति देनी होगी या जनक से स्वीकृति प्राप्त करनी होगी। अधिकतर पौधाजनक विशाल बहुराष्ट्रीय निगम है जो अधिकतम लाभ कमाने के लक्ष्य से ही काम करते है। वे किसानों को स्वीकृति देने में आनाकानी कर सकते है फिर उन्हें बहुराष्ट्रीय निगमों से बीज खरीदने के लिए मजबूर किया जा सकता है।

स्वजातिक प्रणाली जिसके आधीन पौधा जनक को यह अधिकार सौंपा गया है, पेटेन्ट प्रणाली की अपेक्षा केवल

नाम में ही अन्तर नहै, इसके अतिरिक्त 1991 की संधि में यह निश्चय किया गया है कि जो स्वजातिक प्रणाली कायम की जाय वह प्रभावी होनी चाहिए ताकि पौधा जनकों को वास्तविक संरक्षण प्राप्त हो सके, परन्तु भारत द्वारा इस सम्बन्ध में बनाये गये कानून की प्रभाविता कौन परखेगा? इसका उत्तर यह है- वह परिषद जो व्यापार सम्बन्धी बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के आधीन बहुपक्षीय व्यापार संस्था के तत्वावधान में बनायी जायेगी। भारत सरकार की निरन्तर आलोचना की गयी है कि स्वजातिक प्रणाली-पौधा जनक अधिकार प्रणाली-किसनों के हितों के विरूद्ध है और यह नई पौधा किस्मों के विकास में बाधा बन जायेगी, भूतपूर्व वाणिज्य मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने इस सम्बन्ध में कहा है कि ''जब कि पौधा जनकों को जो संधि के अधीन नई किस्मों का विकास करते है, उचित संरक्षण मिलना चाहिए, किसानों और शोधकर्ताओं के अधिकारों को पूर्ण संरक्षण होना चाहिए। स्वजातिक विधान में जिसका ड्राफ्ट तैयार किया जा रहा है, किसानों के हित सुरक्षित किये जायेंगे।''

इस सम्बन्ध में सरकार जो कुछ भी कहती है और जो कुछ किया जा रहा है उसमें काफी अन्तर है। यह सरकार द्वारा पौधा-किस्म अधिनियम (1993) के तैयार ड्राफ्ट जो 1994 में जारी किया गया, से सिद्ध हो जाता है। राजीव धवन और अपर्णा विश्वनाथन ने अपने लेखा में इस वास्तविक कहानी का रहस्योद्घाटन किया है कि सरकार बहुराष्ट्रीय निगमों के दबाव के अधीन एकदम परास्त हो गयी है, लेखों ने जो मुख्य मुद्दे उठाये है वे है -

(1) बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार संधि के आधीन भारत के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह सन् 2000 तक या तो पौधा पेटेन्ट या पौधा जनक अधिकार प्रणाली को अपनाये, जिसे दूसरे शब्दों में स्वजातिक प्रणाली का नाम दिया गया है। पेटेन्ट प्रणाली को सन् 2005 तक स्थगित किया जा सकता है, पौधा-किस्म काननू (1993) का मसौदा पौधा जनकों को यह अधिकार तुरन्त देना चाहता है और बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के आधीन संक्रमण अवधि का भी त्याग कर देता है।

(2) जब कि अन्तर्राष्ट्रीय संघ (1978) का प्रयोग केवल 24 पौधों की किस्मों तक सीमित था इसे अन्तर्राष्ट्रीय संघ 1991 ने सामान्यीकृत कर सभी पौधों पर लागू कर दिया और भारत के प्रारूप अधिनियम में समग्र वनस्पति जगत को पौधा जनकों के अधिकारों के अधीन कर दिया। वास्तव में प्रारूप अधिनियम में दी गयी धाराओं को शब्दशः अन्तर्राष्ट्रीय संघ (1991) से नकल कर लिया गया है। इसमें केवल अन्तर यह है कि जहाँ प्रारूप अधिनियम में पौधा जनकों के अधिकार 15 से 18 वर्षों के लिए रखे गये है वहाँ अन्तर्राष्ट्रीय संघ (1991) ने इसका प्रावधान 20 से 25 वर्ष के लिए किया। सरकार की कड़ी आलोचना करते हुए राजीव धवन एवं अपर्णा विश्वनाथन ने साफ शब्दों में कहा है– "यह धोखाधड़ी इस प्रकार खुलकर सामने आती है। सर्वप्रथम सरकार का यह दावा है कि 'प्रभावी स्वजातिक संरक्षण' की जो अनिवार्यतायें बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के साथ सम्बन्धित व्यापारिक पहलुओं में जुड़ी हुई है उनके बारे में भारत अपने हितों की रक्षा के लिए कोई भी कानून बना सकता है। सरकार ने जानबूझ कर यह बात छिपाये रखी कि इस वाक्य

का अर्थ यह है कि यह कानून 1978 के अन्तर्राष्ट्रीय संघ 1991 के समतुल्य कानून पहले ही क्यों तैयार कर दिया गया जब कि इसकी बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के अधीन जरूरत ही नही थी।

गैट–सन्धि में यह तय किया है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली इस तरह लक्षित की जानी चाहिए कि उसका लाभ केवल ऐसे परिवारों को ही प्राप्त हो जो शोषण सम्बन्धी लक्ष्यों की स्पष्ट रूप में निर्धारित कसौटियों के अनुसार इसके लिए उपयुक्त माने जा सकते है, इसके साथ–साथ यह भी कहा जा सकता है कि गरीबों की पहचान ऐसे पोषणिक मानदण्डों द्वारा की जानी चाहिए जिनकी स्वीकृति गैट–फोरम से प्राप्त है।

कृषि से सम्बन्धित एक अन्य मुद्दा डंकल अन्तिम कानून का वह प्रस्ताव है जिसके अनुसार सभी देशों को 1986 के दौरान अपने कुल उपभोग के कम से कम 4 प्रतिशत के आयात की इजाजत देनी होगी इसमें केवल वे प्राथमिक वस्तुएँ छोड़ी जा सकी है, जिन्हे विकासशील देश

अपेन भोजन का मुख्य अंग समझता है। भोजन के मुख्य अंग की श्रेणी में आने वाली वस्तुओं (जैसे भारत के संदर्भ में चावल एवं गेहूँ) में अपने देशीय उपभोग का केवल 1 प्रतिशत आरम्भ में उपलब्ध कराना होगा। गैर मुख्य वस्तुओं के बारे में पहुँच के अवसर कार्यान्वयन के पहले और छठे वर्ष के दौरान 0.8 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़ाने होंगे। यदि कृषि को उदारीकृत बनाया जाता है तो आदानों की कीमतों में वृद्धि होगी परन्तु इसके विरूद्ध निर्यात की कीमतों में भी वृद्धि होगी परन्तु इसके विरूद्ध निर्यात बढ़ाये जाते है तो तिलहनों एवं गन्ने को छोड़कर, भारत को अपनी कृषि उपज के लिए ऊँची कीमतें उपलब्ध होगी। परन्तु इसके परिणामस्वरूप, भारत में उपभोक्ताओं को कृषि उत्पादों के लिए ऊँची कीमतें अदा करनी पड़ेगी। पहुँच अवसर कण्डिका का यह ऐसा पहले है जो भारत की जनता के हितों पर दुष्प्रभाव डालेगा।

<u>व्यापार सम्बन्धी निवेश उपाय और इनका भारत पर प्रभाव :</u>

व्यापार सम्बन्धित निवेश उपाय संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा 1980 में चालू किये गये चूंकि प्रतियोगिता में

वह जापान और पूर्वीय एशिया के नव–औद्योगीकृत राष्ट्रो में पिट रहा था और अपनी इस क्षति को पूरा करने के लिए सेवाओं में व्यापार को बढ़ावा देना चाहता था। चाहे गैट ने अपनी वार्ता के पहले सात दौरों में सेवाओं में व्यापार की कभी भी चर्चा नहीं की थी, संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस विचार को गैट के आंठवे दौर की वार्ता में आगे बढ़ाया। इसका मुख्य उद्देश्य बहुराष्ट्रीय निगमों को लाभ पहुँचाना था ताकि वे वित्तीय सेवाओं टेलीसंचार, विपणन में निवेश कर सके, जिससे विश्व व्यापार को प्रोत्साहन मिले।

व्यापार सम्बन्धित निवेश उपायों की विषय–वस्तु का मुख्य व्यवधान यह सुनिश्चित करता है कि सरकारे विदेशी पूंजी के साथ भेदभाव नहीं करेगी। दूसरे शब्दों में यह प्रावधान सदस्य देशों को विदेशी पूँजी के लिए राष्ट्रीय व्यवहार देने के लिए मजबूर करता है। इन उपायों के मुख्य लक्षण निम्नलिखित है –

(1) विदेशी पूंजी/विनियोक्ताओं/कम्पनियों पर लगाये गये सभी प्रतिबन्ध समाप्त कर देने चाहिए।

(2) विदेशी विनियोक्ता को विनियोग के बारे में वही अधिकार प्राप्त होंगे जो कि राष्ट्रीय विनियोक्ता को प्राप्त है।

(3) निवेश के किसी भी क्षेत्र पर कोई भी प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायेगा।

(4) न ही विदेशी निवेश के विस्तार पर कोई सीमा बन्धन होगा– 100 प्रतिशत विदेशी इक्विटी की भी इजाजत होगी।

(5) कच्चे माल और हिस्सों का आयात मुक्त रूप में करने की इजाजत होगी।

(6) विदेशी विनियोक्ताओं पर स्थानीय उत्पाद एवं सामग्री के इस्तेमाल करने की पाबन्दी नहीं होगी।

(7) लाभांश, व्याज और रायल्टी के देश–प्रत्यावर्तन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा।

(8) क्रमिक विनिर्माण प्रोग्राम जैसे प्रावधानों को जिसका उद्देश्य विनिर्माण में देशीय अंश को बढ़ावा देना है, पूर्णतया समाप्त कर दिया गया।

1991 के पश्चात् चालू की गयी नयी आर्थिक नीति और संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम के अधीन ही भारत सरकार विदेशी प्रत्यक्ष विनियेग को आकर्षित करने के लिए अत्यधिक झुक रही है और इसके परिणाम स्रूप विदेशी मुद्रा विनियमन कानून और औद्योगिक नीति में बहुत से परिवर्तन किये गये है। गैट–सन्धि के आधीन अन्तर यह है कि ये परिवर्तन बहुपक्षीय व्यापार–सन्धि का अंग बन गये है और भविष्य में विश्व व्यापार संगठ्न इस बारे में अनुशासन लागू कर सकेगा। इस दृष्टि से यह संधि विदेशी विनियोग के विभिन्न क्षेत्रों में हमें चयनात्मक रूप में कार्य करने की स्वतन्त्रता को समाप्त कर देती है। यह हमारे आत्मनिर्भरता के लक्ष्य के प्रतिकूल है, यह कहीं बेहतर होता यदि व्यापार सम्बन्धित निवेश सन्धि में कुछ ऐसा प्रावधान कर दिया जाता। श्री एन0के0 चौधरी और जे0सी0 अग्रवाल इस सम्बनध में लिखते है– ''पेप्सी फूड जैसे विदेशी निवेश को इस उम्मीद और शर्त पर बढ़ावा दिया गया कि कम्पनी अपने उत्पादों के निर्यात द्वारा भारत के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करेगी और साथ–साथ अपने उत्पादन कार्यक्रम में देशी माल का क्रमशः

अत्यधिक प्रयोग करेगी यदि देश गैट 1994 पर हस्ताक्षर कर देता है।" इससे साफ जाहिर है कि एक बार यदि किसी क्षेत्र में विदेशी विनियोग की इजाजत दे दी जाती है तो देश इसके अर्थव्यवस्था और स्थानीय उद्योग पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को रोकने के लिए स्वतन्त्र नहीं रह जाता। इस दृष्टि से आलोचकों का मत है कि विदेशी विनियोग को निर्वाध स्वतन्त्रता हमारी आर्थिक प्रभुसत्ता के साथ समझौता है।

टेक्सटाइल्स और वस्त्र :

गैट–सन्धि में टेक्सटाइल्स एवं वस्त्रों के व्यापार को उदार बनाने के लिए कुछ प्रस्ताव किये गये है। ये प्रस्ताव विकासशील देशों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यह बड़ी अजीब बात है कि विकसित देश जो अपने आप को स्वतंत्र व्यापार के सबसे बड़े प्रवक्ता मानते है, ने बहुतंत-सन्धि के आधीन व्यापक कोटा प्रतिबन्ध लगाते है। इस अधिनियम में यह प्रस्ताव किया गया है कि इन कोटा प्रतिबन्धों को 10 वर्षो (1993–2003) की अवधि के दौरान क्रमिक रूप से समाप्त

कर दिया जाय और 10 वर्षों के पश्चात् टेक्सटाइल्स के क्षेत्र को पूर्णतया उदार बनाया जाय।

डंकल अन्तिम अधिनियम में 10 वर्षों की अवधि को तीन चरणों में विभाजित किया जाता है। पहले चरण में विकसित देशों के टेक्सटाइल्स के निर्यात के 16% को उदार बनाया जायेगा। इसके बाद दूसरे चरण में 17% को और तीसरे चरण में 18% को। अतः 10 वर्षों के पश्चात् टेक्सटाइल्स बाजार में 51% को उदार बनाया जायेगा। इस प्रकार टेक्सटाइल्स बाजार के महत्व को पूर्व भाग (49 प्रतिशत) को सन् 2003 के पश्चात उदारीकरण की दूसरी लहर की प्रतीक्षा करनी होगी। इसमें सबसे अजीब बात यह है कि एक टेक्सटाइल की परिभाषा इस प्रकार की गयी है कि टेक्सटाइल क्षेत्र में ऐसी मदें शामिल की गयी है जो अभी विकसित देशों में कोटा प्रतिबन्धों के आधीन नहीं है। अतः वास्तविक उदारीकरण करने की अपेक्षा और टैरिफ भिन्न प्रतिबन्ध हटाने की बजाय, उदारीकरण का मिथक कायम किया जा रहा है। इस बात को वाणिज्य मंत्रालय ने स्पष्ट किया है

– "यह एक सत्य है कि टेक्सटाइल सन्धि आरम्भिक वर्षो में समानरूप में सन्तुलित नहीं है। इस अवधि में न्यूनतम उदारीकरण का प्रस्ताव है और उदारीकरण के लिए महत्वपूर्ण कदम अन्तिम तीन वर्षो में उठाये जायेंगे। यह भारत के लिए असन्तोष का एक मुख्य कारण है और हम आयात करने वाले देशों से प्रबल आग्रह करते है कि वह उदारीकरण की प्रक्रिया को और आगे बढ़ाये।"

3. गैट में सामाजिक कण्डिका :

मार्च 1994 के अन्त में गैट–सन्धि को अन्तिम रूप देने में सबसे आश्चर्यजनक प्रस्ताव पेश किया गया। इस प्रस्ताव को जिसे आम भाषा में 'सामाजिक कण्डिका' कहा जाता है, का प्रस्ताव संयुक्त राज्य अमेरिका ने किया ताकि इसे माराकेश घोषणा में शामिल किया जा सके। संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतिनिधि ने यह प्रस्ताव किया कि सामाजिक कण्डिका के आधीन विकासशील देशों के किये जाने वाले आयात पर प्रतितुल्य शुल्क लगाना होगा ताकि इन देशों में विद्यमान निम्न श्रम लागत के प्रभाव को दूर किया जा सके।

साधारण भाषा में इस प्रस्ताव का अर्थ यह था यदि भारत में एक कमीज की कीमत 50 रूपये है और अमरीका में 200 रूपये तो इस अन्तर का मुख्य कारण श्रम लागत में अन्तर है। इस तुलनात्मक लाभ को दूर करने के लिए भारत को संयुक्त राज्य अमेरिका के निर्यात पर शुल्क अदा करना होगा ताकि इस लागत लाभ को निष्प्रभावी बनाया जा सके। यह उल्लेख किया गया है कि सामाजिक कण्डिका का उद्देश्य मानवीय चिन्तायें है ताकि विकासशील देश अपने श्रमिकों को बेहतर मजदूरी दे सके और उनका जीवन स्तर उन्नति हो सके।

विकासशील देशों के विशेषज्ञों को इस प्रस्ताव से भारी धक्का पहुँचा क्योंकि यह प्रस्ताव तीसरीं दुनिया के देशों की प्रतिस्पर्धा शक्ति को दूर करने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया गया। विशेषज्ञों ने मानववादी तर्क को एक जर्जर एवं ओसीदा उपाय माना। तीसरीं दुनियां के मजदूरों की हालत में अचानक चिन्ता उत्पन्न होने के छल के पीछे गहरी चाल थी और इसका वास्तविक उद्देश्य विकासशील देशों को प्राप्त प्रतिस्पर्धा लाभ

से वंचित करना था। वे जानते है कि जहां तक टेक्नोलॉजी का सम्बन्ध है ये देश ऐतिहासिक दृष्टि से पिछड़े ही है। विकासशील देशों को विकसित देशों से टेक्नोलॉजी प्राप्त करने के लिए भारी कीमत अदा करनी पड़ती है। यदि यह कण्डिका लागू कर दी जाती है तो भारतीय वस्तुएँ संयुक्त राज्य अमेरिका और अन्य यूरोपीय समुदाय के देशों में अविक्रेय बन जायेंगी। व्यंग्यात्मक रूप में इसका अर्थ यह है कि गरीब देशों को इस बात के लिए अधिक कीमत अदा करने के लिए मजबूर किया जा रहा है क्योंकि वह गरीब है।

आलोचकों का मत है कि यह चाल हारकिन बिल की ही एक कड़ी है। जो संयुक्त राज्य के श्रम विभाग पर इस बात के लिए आग्रह करता है कि ऐसी वस्तुओं की हर वर्ष पहचान की जाये जो बाल श्रम से बनायी जाती है और उन देशों की भी पहचान की जाय जो कि इनका निर्यात करते है यदि यह विधयक पास हो जाता है तो संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार ऐसी वस्तुओं के आयात पर प्रतिबन्ध लगा देगी और इस प्रकार भारत द्वारा निर्यात किये जाने वाले कालीनों,

हीरे एवं जवाहारात, टेक्सटाइल्स, सिले-सिलाये कपड़ों आदि पर गहरा दुष्प्रभाव पड़ेगा। अतः सामाजिक कण्डिका का मुख्य लक्ष्य भारत जैसे देश है। ताकि इनको प्राप्त प्रतिस्पर्धा लाभ को नष्ट कर दिया जाय और इनकी निर्मित वस्तुओं के निर्यात की क्षमता को अपंग बना दिया जाय, अतः इसके परिणाम के तौर पर अंत में इन देशों को कच्चे माल अर्थात रूई कच्चे लोहे की निर्यात की इजाजत दी जाय और इन्हें सिले-सिलाये कपड़ो और इस्पात के आयात के लिए मजबूर किया जाय। श्री प्रणव मुखर्जी भूतपूर्व केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने सामाजिक नीति सम्बन्धी जैसे श्रम के बारे में मानदण्ड और व्यापार में सीधे सम्बन्ध का कड़ा विरोध करते हुए 13 अप्रैल 1994 को साफ-साफ कहा- ''मैं यह बात बिल्कुल स्पष्ट रूप से कहना चाहता हूँ कि जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय श्रम मापदण्डों के लिए पूर्णतया वचनबद्ध है, हम इस प्रयास को बिल्कुल सही नहीं मानते। जो ऐसे क्षेत्रों में चेष्टा करता है जहाँ वे विद्यमान नहीं है, व्यापार नीति को सभी चिन्ताओं की न्यायकर्ता नहीं माना जा सकता।''

सामाजिक कण्डिका प्रस्ताव जी- 15 राज्यों के लिए एक साझा मुद्दा बन गया और मलेशिया के प्रधानमंत्री महाथीर मुहम्मद ने इस प्रावधान के विरूद्ध विवाद खड़ा कर दिया। जी-15 देश इस बात पर एक मत थे कि सामाजिक कण्डिका प्रस्ताव का उनकी अर्थव्यवस्थाओं पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और इससे भुगतान शेष की समस्या और विकट बन जायेगी। इसके बजाय कि यह भुगतान शेष के घाटे को पाटने में मदद दे। जी-15 देशों की सामूहिक शक्ति के कारण संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार को पीछे हटना पड़ा और इस मुद्दे को स्थापित कर दिया गया।

निर्गुट एवं अन्य विकासशील देशों के श्रम मंत्रियों के पांचवें सम्मेलन में जो जनवरी 1995 को दिल्ली में हुआ। 'सामाजिक कण्डिका' को पूर्णतया अस्वीकार कर दिया गया। यह बात साफ शब्दों में कही गयी- "प्रस्तावित सम्बन्ध से व्यापार उदारीकरण के लाभ समाप्त हो जायेंगे और बेरोजगारी एवं वेदना की समस्याये बढ़ जायेंगी।" दिल्ली घोषणा ने इस प्रस्तावित सम्बन्ध में दबाव डालने वाले पक्ष की आलोचना की

और उल्लेख किया श्रम मानदण्डों के मुद्दे पर किसी प्रकार का दबाव अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के संविधान का उल्लंघन है। इस घोषणा में इस बात पर बल दिया गया कि ''एक पक्षीय दबाव के आर्थिक उपायों का प्रयोग करके विकसित देश तीसरी दुनिया के देशों से आर्थिक या राजनीतिक लाभ प्राप्त करना चाहते है और यह बात अस्वीकार्य है।''

एक और प्रस्ताव पर्यावरण सुरक्षा कण्डिका को लागू करना है ताकि विकासशील देशों के पर्यावरण के विनाश के लिए हर्जाना देने के लिए मजबूर किया जा सके। विशेषज्ञों का मत है कि इससे अधिक विभेदकारी शर्त की कल्पना करनी सम्भव नहीं क्योंकि विश्व परिवेश सम्बन्धी पर्यावरण के तीन–चौथाई के क्षति के लिए पिछली दो शताब्दियों में विकसित देश जिम्मेदार है। यह वस्तुतः एक विडम्बना है कि विकसित देश इन तथ्यों के प्रकाश में किस मुंह से विकोसशील देशों को अपने गुनाहों की सजा देना चाहते है।

विकसित देशों द्वारा नयी–नयी चालों द्वारा अपने प्रस्तावों के प्रति विकासशील देशों को घुटने टेकने के लिए

मजबूर करने की अनेक कोशिशें की जा रही है। सामाजिक कण्डिका की अस्थायी रूप में वापसी को विकासशील देशों की जीत नहीं समझना चाहिए। यह बात बिल्कुल सम्भव है कि विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के पश्चात इस प्रस्ताव को पुनः जीवित कर दिया जाय। इसके विरुद्ध जो प्रश्न उठाने की जरूरत है वह यह है कि मानवीय चिन्ताओं के आधार पर क्या विकासशील देश संयुक्त राज्य अमेरिका की वस्तुओं पर प्रतितुल्य शुल्क उस समय तक क्यों न लगा दे। जब तक कि संयुक्त राज्य अमेरिका में काली जाति के नागरिकों को सामान्य मानवीय व्यवहार प्राप्त नहीं हो जाते? क्या काले लोगों के श्रम मानदण्ड महत्वपूर्ण नहीं है? यदि व्यापार नीति को सामाजिक चिन्ताओं के साथ जोड़ कर इसके तार्किक परिणामों तक प्रबल रूप में ले जाया जाय। अतः तीसरी दुनिया के देशों को निगरानी रखनी होगी और एकजुट होकर इन प्रस्तावों का विरोध करना होगा। ताकि गैट के विस्तारित क्षेत्र का उनके विरुद्ध प्रयोग न किया जाय। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि असमान सहयोगियों की दुनिया में बहुपक्षवाद द्विपक्षवाद से बेहतर है और यदि संयुक्त राज्य

अमेरिका और यूरोपीय समुदाय से सम्बन्धित किसी बड़े सहयोगी से कुछ रियायतें प्राप्त करनी है तब विकासशील देशों की संगठित शक्ति अपने पक्ष में अधिक प्रभावी दबाव डाल सकती है। गैट का एक सराहनीय लक्षण है कि यह एक देश, एक वोट के सिद्धान्त पर कार्य करता है किन्तु विकसित देश विकासशील देशों पर कई प्रकार से विशेषकर भौतिक सम्पत्ति अधिकार एवं व्यापार सम्बन्धित निवेश उपायों द्वारा दबाव डालते है, चाहे भारत सरकार यह दावा कर रही है कि गैट–सन्धि के परिणाम स्वरूप देश को महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त होने की सम्भावना है। किन्तु अभी ऐसे निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचना ठीक नहीं। डंकल अन्तिम कानून एक बड़ा प्रलेख है और इसके अन्दर बहुत सी ग्रन्थिया विद्यमान है और इस कानून का झुकाव तो निश्चय ही विकसित देशों की ओर है। इण्डिया इण्टरनेशनल सेण्टर के श्री आर0के0 खुराना ने सही स्थिति प्रस्तुत की है "इस बात पर आम सहमति है कि उरूग्वे दौर ऐसा खेल बना रहा है जिसमें अधिक शक्तिशाली देश नियम निर्धारित करते है दुर्भाग्यवश भारत उन शसक्त व्यापार करने वाले देशों में से एक नहीं है और यह बहुत

संदेहजनक है कि इस देश द्वारा इससे अधिक महत्वपूर्ण प्राप्ति संभव नहीं हो सकती थी जो कि इस वार्ता से देश प्राप्त कर सका है।''

गैट के इतिहास से यह बात स्पष्ट हो गयी है। जबकि नवऔद्योगीकृत देशों ने विकसित देशों की प्रतिस्पर्धा शक्ति को चुनौती दी है तो विकसित देशों ने तुरन्त ही बदले की भावना से टैरिफ और गैर टैरिफ प्रतिबन्ध लगा दिये।

गैट वार्ताओं के दौर :

गैट के स्थापना वर्ष 1947 से उसके अन्त तक इसकी वार्ताओं के आठ चक्र/दौर आयोजित किये गये इनमें से प्रथम छः चक्रों का सम्बन्ध मुख्य रूप से प्रशुल्क दरों में कमी करने से रहा था, गैट वार्ता के सातवे दौर में गैर-प्रशुल्क बाधाओं को हल करने का मुद्‌दा सम्मिलित किया गया, गैट का आंठवा चक्र अपने पूर्व सम्मेलनों से पूर्णतः भिन्न रहा है क्योंकि इस वार्ता में अनेक नये विषयों को सम्मिलित किया गया, उरूग्वे चक्र नाम से प्रसिद्ध इस वार्ता दौर के परिणामस्वरूप ही गैट के स्थान पर एक अधिक शक्तिशाली

संगठन 'विश्वव्यापार संगठन' 1 जनवरी, 1995 से अस्तित्व में आ गया।

उरूग्वे राउण्ड तथा डंकल प्रस्ताव :

गैट के आठवें राउण्ड अर्था उरूग्वे राउण्ड का प्रारम्भ सितम्बर 1986 में हुआ, इस दौर की वार्ता की विभिन्न बैठकें मांट्रियल, जेनेवा, ब्रूसेल्स आदि देशों में सम्पन्न की गयी, इस वार्ता की समाप्ति के लिए चार वर्षो की अवधि (1986-1990 तक) निर्धारित की गयी थी। इस प्रकार उरूग्वे राउण्ड के दिसम्बर 1990 की ब्रूसेल्स बैठक में अपने निष्कर्ष देने थे किन्तु यह वार्ता अनेक विवादों के कारण लम्बी चलती गयी। अन्ततः गैट के तत्कालीन महा निदेशक आर्थरडंकल को इस समस्या के समाधान का दायित्व सौंप दिया गया, 20 दिसम्बर 1991 को आर्थरडंकल ने नये सिरे से सदस्य देशों के सामने आपसी सहमति के लिए एक विस्तृत दस्तावेज प्रस्तुत किया, उन्होंने यह स्पष्ट किया कि इन प्रस्तावों को एक साथ इनके मूलरूप में स्वीकार कर लिया जाना चाहिए, यद्यपि अधिकांश सदस्य देशों ने इन्हें एक रूप

में स्वीकार कर लेने में कठिनाई जाहिर की तथापि उरूग्वे दौर की वार्ता को इन प्रस्तावों पर आधारित करके जारी रखना स्वीकार किया गया, इन प्रस्तावों को ही डंकल प्रस्ताव अथवा 'ड्राफ्ट फाइनल एक्ट' कहा जाता है।

गैट का उरूग्वे दौर :

प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौते का प्रथम दौर यद्यपि अक्टूबर 1947 में जेनेवा, स्वीटरलैण्ड में आयोजित किया गया था, परन्तु व्यवहारिक रूप से यह 1 जनवरी 1948 से लागू हुआ। अक्टूबर 1947 में जेनेवा में आयोजित किये गये सम्मेलन से लेकर अब तक कुल 8 सम्मेलन आयोजित किये जा चुके है। गैट के तत्वावधान में अब तक आयोजित सम्मेलनों में प्रथम 5 का सम्बन्ध मुख्य रूप से प्रशुल्कों में कमी करने से सम्बन्धित रहा है। प्रशुल्क कटौती के प्रति केन्द्रित प्रथम पांच सम्मेलन क्रमशः जेनेवा (स्वीटजरलैण्ड) में 1947 में, दूसरा एन्नेसी (फ्रांस) में 1949 में, तीसरा टोरक्वाय (ग्रेट ब्रिटेन में) 1950-51 में, चौथा

जेनेवा (स्वीटजरलैण्ड) में 1955-56 में और पांचवा जेनेवा (स्वीटजरलैण्ड) में 1960-62 में आयोजित किया गया।

1991 तक भारत के निर्यातों के 18 प्रतिशत सोवियत संघ व पूर्वी यूरोप के अन्य समाजवादी देशों को लक्षित होते थे। किन्तु सोवियत संघ के विघटन तथा पूर्वी यूरोपीय अर्थ व्यवस्थाओं के स्वरूप में परिवर्तन के पश्चात् इन देशों को किये जाने वाले निर्यात 2000-2001 में घटकर 2.4 प्रतिशत ही रह गये, रूस को किये जाने वाले निर्यात में हाल ही में कुछ वृद्धि की प्रवृत्ति परिलक्षित हुई है। प्रस्ताव के निष्कर्षो के लिए अन्तिम रूप से 15 दिसम्बर 1993 की तारीख भी निर्धारित कर दी गयी थी, तदनुरूप सदस्य देशों द्वारा इसे 15 दिसम्बर 1993 को जेनेवा में स्वीकृति प्रदान कर दी गयी, 15 अप्रैल 1994 को मोरक्को में मराकशनगर में 124 सदस्य देशों द्वारा समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये गये।

गैट की आठवे दौर की वार्ता में कुल 15 क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया था जिन्हें दो भागों में विभाजित किया

गया। पहला भाग व्यापारिक वस्तुओं से सम्बन्धित था, जब कि दूसरा भाग सेवाओं से सम्बन्धित था।

पहले भाग में 14 मदे शामिल थी। (1) प्रशुल्क, (2) गैर प्रशुल्क, (3) उष्णकटिबन्धीय उत्पाद, (4) राष्ट्रीय संशाधनों पर आधारित उत्पाद, (5) वस्त्र एवं कपड़ा, (6) कृषि (7) गैट धाराएँ, (8) सुरक्षा, (9) बहुपक्षीय व्यापार समझौते तथा व्यवस्थाएं, (10) सब्सिडी, (11) विवाद निपटारे, (12) बौद्धिक सम्पदा अधिकार के व्यापार सम्बन्धी पहलू, (13) व्यापार सम्बन्धी निवेश उपाय (14) गैट कार्य पद्धति। द्वितीय भाग में सेवाओं के व्यापार को अलग से वार्ता हेतु सम्मिलित किया गया।

आगे चलकर उपर्युक्त वर्णित 14 क्षेत्रों को निम्नलिखित सात क्षेत्रों के अन्तर्गत पुनः विभाजित किया गया– (1) बाजार पहुँच, (2) कृष्टि, (3) वस्त्र, (4) ट्रिक्स, (5) ट्रिप्स, (6) सेवाओं का व्यापार, (7) संस्थागत मामले।

उपर्युक्त विषयों पर आपसी विचार–विमर्श के बाद आम सहमतति प्राप्त करनी थी, किन्तु ऐसा नहीं हो सका,

वस्तुतः बौद्धिक सम्पदा अधिकार के व्यापार सम्बन्धी पहलू और व्यापार सम्बन्धी निवेश उपायो तथा सेवाओं को गैट के अन्तर्गत ले आने के प्रश्न पर ही मुख्य विरोध उत्पन्न हो गया, आठवे दौर के पहले तक इन मुद्दों को गैट के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किया गया था। अमरीका द्वारा प्रस्तुत इस प्रस्ताव का भारत सहित अनेक विकासशील देशों ने विरोध किया। इन विषयों के सम्बन्ध में विकासशील देशों का दृष्टिकोण यह रहा था कि यदि सेवा निवेश, एवं प्रबन्ध जैसे क्षेत्रों में विकसित देशों को मुकत व्यापार करने की छूट दे दी जायेगी तो विकासशील देशों में इन क्षेत्रों का विकास रूक जायेगा किन्तु विकसित देश यह चाहते थे कि विकासशील देश उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में मुक्त व्यापार की सुविधा प्रदान करे, ताकि उनके देशों के ये अग्रणी क्षेत्र (सेवा, बौद्धिक सम्पत्ति तथा निवेश) विकासशील देशों के इन क्षेत्रों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से बाहर करके अपना पूर्ण एकाधिकार स्थापित कर सके।

अन्ततः 15 अप्रैल 1994 को मराकश में सदस्य राष्ट्रों ने गैट के उरूग्वे चक्र समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये व इसके परिणाम स्वरूप 1 जनवरी 1995 से विश्व व्यापार संगठन की स्थापना भी कर दी गयी। गैट के सभी सदस्यों द्वारा 1 जनवरी 1995 तक विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता ग्रहण न कर पाने के कारण यह निर्णय लिया या कि गैट का अस्तित्व अभी एक वर्ष और (1995 तक) बना रहेगा। अन्ततः लगभग पाँच दशक तक विश्व व्यापार की निगरानी करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सजग प्रहरी के रूप में विख्यात गैट को 12 दिसम्बर 1995 को खामोशी के साथ अलविदा कह दिया गया।

<u>गैट समझौते का भारतीय अर्थ व्यवस्था पर प्रभाव :</u>

1. समझौते से भारत के निर्यात में सालाना डेढ़ से दो अरब डालर वृद्धि होने की आशा।

2. भारतीय कृषि जिन्सों के लिए विदेशी बाजार में अच्छा प्रतिस्पर्धा का माहौल बनेगा।

3. भारत में कृषि पर दी जाने वाली सब्सिडी में कटौती नही होगी, बल्कि सब्सिडी बढ़ाने की गुंजाइश रहेगी।

4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली बिना बाधा के जारी रहेगी।

5. नई किस्म के पौधे तैयार करने वालों के हित में भारत में कानून बनेगा।

6. प्राकृतिक रूप से पैदा होने वाले जीन्स के पेटेन्ट की जरूरत नहीं पड़ेगी, लेकिन अगले दस साल के अन्र पेटेन्ट कानून बनाना पड़ेगा।

7. दवा, खाद्य, उत्पाद और रसायनों के लिए उत्पादन पेटेन्ट प्रणाली इस साल के अन्तर लागू करनी पड़ेगी।

8. पेटेन्ट दवाओं के मूल्य में अत्यधिक वृद्धि नहीं होगी और सरकार गैर वाणिज्यिक सार्वजनिक इस्तेमाल वाली दवाओं पर अनिवार्य लाइसेंस प्रणाली लागू कर सकेगी, दवाओं पर मूल्य नियंत्रण का आधार सरकार के पास रहेगा।

9. भारत में पूंजी निवेश करने वाली विदेशी कम्पनियों के साथ नियमों और नीति के मामले में स्वदेशी इकाइयों की तरह समान व्यवहार करना पड़ेगा।

10. सरकार के पास यह अधिकार बना रहेगा कि वह किस प्रकार के विदेशी पूंजी निवेश को अनुमति दें।

11. वस्त्र निर्यात के क्षेत्र में भारतीय कपड़ा आयात करने वाले देशों को दस साल बाद कोटा प्रणाली समाप्त करनी पड़ेंगी।

डब्ल्यू0टी0ओ0 का प्रशासन :

विश्व व्यापार संगठन के कार्य संचालन के लिए एक सामान्य परिषद है जिसमें प्रत्येक सदस्य राष्ट्र का एक स्थायी प्रतिनिधि होता है, इसकी बैठक सामान्यतः माह में एक बार जेनेवा में होती है।

प्रतियोगितादर्पण - उपकार प्रकाश, 2/11ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा - 282002

विश्व व्यापार संगठन में नीति निर्धारण करने हेतु सर्वोच्च अधिकार प्राप्त इसका मंत्री स्तरीय सम्मेलन है मंत्रिस्तरीय सम्मेलन का आयोजन प्रत्येक दो पर होता है।

दिन प्रतिदिन के प्रशासकीय कार्यो को सम्पन्न करने के लिए संगन का सर्वोच्च पदाधिकारी महानिदेशक होता हे, सामान्य परिषद द्वारा महानिदेशक का चुनाव चार वर्ष के लिए किया जाता है, न्यूजीलैण्ड के पूर्व प्रधानमंत्री माइकमूर को 1 सितम्बर 1999 से 3 वर्ष के लिए डब्ल्यू0टी0ओ0 का महानिदेशक बनाया गया है, इसके बाद 1 सितम्बर 2002 से तीन वर्षो के लिए यह पद थाईलैण्ड के उपप्रधानमंत्री सुपाचाई पानिचपाकड़ी को हस्तान्तरित कर दिया जायेगा।

मुख्यालय एवं सदस्यता :

अपने पूर्ववर्ती गैट की भांति विश्वव्यापार संगठन का मुख्यालय भी जेनेवा में ही है। सिंगापुर में पहला मन्त्रीस्तरीय सम्मेलन आरम्भ होने से पूर्व इसकी सदस्य संख्या 128 थी। सितम्बर 2001 तक इसकी सदस्य संख्या बढ़कर 144 हो गयी।

उपर्युक्त के अतिरिक्त विश्व व्यापार संगठन की अन्य महत्वपूर्ण समितियाँ- वस्तु व्यापार परिषद सेवा व्यापार परिषद तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के व्यापार सम्बन्धी पहलुओं पर परिषद आदि है।

विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्य :

विश्व व्यापार संगठन की प्रस्तावना में उसके उद्देश्यों को स्पष्ट किया गया है, जो निम्नलिखित है-

1. जीवन स्तर में वृद्धि करना।

2. पूर्ण रोजगार एवं प्रभावपूर्ण मार्ग में वृहत्तस्तरीय, परन्तु ठोस वृद्धि करना।

3. वस्तुओं के उत्पादन एवं व्यापार का प्रसार करना।

ये सभी गैट के भी उद्देश्य थे, इनके अतिरिक्त विश्व व्यापार संगठन की प्रस्तावना में निम्नलिखित अतिरिक्त उद्देश्यों की भी चर्चा की गई है-

4. सेवााओं के उत्पादन एवं व्यापार का प्रसाद करना।

5. विश्व के संसोधनों का अनुकूलतम उपयोग करना (गैट में विश्व संसाधनों के पूर्ण उपयोग की बात कहीं गई थी।)

6. अविरत विकास की अवधारणा को स्वीकार करना।

7. पर्यावरण का संरक्षण एवं उसकी सुरक्षा करना।

विश्व व्यापार संगठन के कार्य :

विश्व व्यापार संगठन के कुछ महत्त्वपूर्ण कार्यों का उल्लेख निम्नलिखित प्रकार किया जा सकता है–

1. विश्व व्यापार समझौता एवं बहुपक्षीय तथा बहुवचनीय समझौतों के कार्यान्वयन, प्रशासन एवं परिचालन हेतु सुविधायें प्रदान करना।

2. व्यापार एवं प्रशुल्क से सम्बन्धित किसी भी भावी मसले पर सदस्यों के बीच विचार-विमर्श हेतु एक मंच के रूप में कार्य करना।

3. विवादों के निपटारे से सम्बन्धित नियमों एवं प्रक्रियाओं को प्रशासित करना।

4. व्यापार नीति समीक्षा प्रक्रिया से सम्बन्धित नियमों एवं प्रावधानों को लागू करना।

5. वैश्विक आर्थिक नीति निर्माण में अधिक सांमजस्य भाव लाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक से सहयोग करना।

6. विश्व संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करना।

विश्व व्यापार संगठन का पहला मंत्रिस्तरीय सम्मेलन :

विश्व व्यापार संगठन का पहला मंत्रिस्तरीय सम्मेलन 9-13 दिसम्बर, 1996 को सिंगापुर में सम्पन्न हुआ। मंत्रिस्तरीय सम्मेलन ही इस संगठन की नीतियों के निर्धारण हेतु सर्वोच्च शक्तिशाली मंच है।

विश्व व्यापार संगठन के मंत्रिस्तरीय सम्मेलन

सम्मेलन	वर्ष	स्थान
पहला	9-13 दिसम्बर, 1996	सिंगापुर
दूसरा	18-20 मई, 2998	जेनेवा
तीसरा	30 नव0 - 3 दिस0, 1999	सिएटल
चौथा	9-14 नवम्बर, 2001	दोहा (कतर)
पाँचवा	2003	मेक्सिको (प्रस्तावित)

विकसित एवं विकासशील देशों के मध्य शीत युद्ध से ग्रसित इस सम्मेलन में दोनों ही पक्ष अपने हितों की सुरक्षा हेतु लॉविंग में संलग्न रहे सम्मेलन में विचारणीय प्रमुख मुद्दों में श्रम मानको, निवेश तथा प्रतिस्पर्धा को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी विचारणीय मुद्दों में थे। भारत सहित विकासशील राष्ट्र जहाँ श्रम मानकों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जोड़ने के विरोध में थे, वही अमरीका के नेतृत्व में विकसित राष्ट्र इन्हें सहसम्बन्धित करने के बड़े पक्षधर थे, भारत का कहना था कि श्रम मानक विश्व व्यापार संगठन की नही, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की विषय वस्तु है, निवेश

सम्बन्धी मामलों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जोड़ने का भी भारत द्वारा विरोध किया गया।

पाँच दिन तक चले इस सम्मेलन में विकसित व विकासशील, दोनों ही राष्ट्रो ने कुछ न कुछ उपलब्धियाँ हासिल करने में सफलता प्राप्त की थी, विकासशील राष्ट्रों के लिए संतोष की बात यह रही है कि घोषणापत्र में श्रम मानकों के उल्लेख के बावजूद इसे अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ का विष स्वीकार किया गया तथा स्पष्ट कहा गया कि विकासशील राष्ट्रों के व्यापार को प्रतिबन्धित करने के लिए श्रम मानकों का प्रयोग नहीं किया जायेगा। निवेश तथा प्रतिस्पर्धा के मुद्दों को व्यापार से जोड़ने के मामलों में विकसित राष्ट्रों का पकड़ा भारी रहा, घोषणा पत्र में यह कहा गया है कि निवेश तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध के विवाद को 'टिम्स' के तहत हल किया जायेगा, इसके लिए एक कार्यकारी दल के गठन की बात घोषणा-पत्र में कही गई है।

विश्व व्यापार संगठन का चौथा-मंत्रिस्तरीय सम्मेलन :

दोहा (कतर) में 9-13 नवम्बर 2001 को आयोजित विश्व व्यापार संगठन का चौथा मंत्रिस्तरीय सम्मेलन विभिन्न मुद्दों पर सदस्य राष्ट्रों की सहमति के लिए एक दिन आगे बढ़ाना पड़ा, अतः इसका समापन 14 नवम्बर, 2001 को हुआ, 142 सदस्य राष्ट्रो के वाणिज्य मंत्रियों के इस सम्मेलन में कृषि, सेवाओं व औद्योगिक उत्पादों के व्यापार के विस्तार एवं पर्यावरण सम्बन्धी मुद्दों पर नये सिरे से वार्ता का दौर प्रारम्भ करने को सहमति अन्ततः छठे दिन ही बन सकी, इसके एजेण्डे (दोहा डेवलपमेण्ट एजेण्डे) को स्वीकार किया जाना विकासशील राष्ट्रों की बजाय यूरोपीय संघ एवं अमरीका के लिए अधिक लाभदायक माना जा रहा है, इस मामले में भारत की मुख्य आपत्ति चार सिंगापुर मुद्दों को लेकर थी, इनमें विदेशी निवेश व प्रतिस्पर्धा नीति के सम्बन्ध में नये वैश्विक नियमों के निर्धारण, सरकारी परियोजनाओं के लिए सामान की खरीद में विदेशी मकाणियों को अवसर प्रदान करने तथा व्यापारिक नियमों को सरल बनाने के मुद्दे शामिल थे।

मंत्रिस्तरीय सम्मेलन में स्वीकार किये गये। दोहा घोषणा पत्र को भारत ने अपनी मंजूरी तभी प्रदान की, जब सम्मेलन के अध्यक्ष शेख यूसुफ हुसैन कमाल (कतर के वाणिज्य, वित्त एवं आर्थिक मामलों के मंत्री) ने यह स्पष्ट घोषणा की कि उपर्युकत चारों विवादित मुद्‌दों पर बातचीत सदस्य राष्ट्रों की सहमति हो जाने पर ही पाँचवे मंत्रिस्तरीय सम्मेलन के बाद शुरू होगी। 'दोहा डेवलपमेण्ट एजेण्डे' पर बात–चीत 2005 तक पूरी करने का लक्ष्य यद्यपि घोषणा–पत्र में निर्धारित किया गया है। तथापि यह आमतौर पर स्वीकार किया जा रहा है, कि यह 2007 से पहले पूरी नहीं हो सकेगी, यह बातचीत जनवरी 2002 में ही प्रारम्भ हो जायेगी।

सम्मेलन में भारत के नेतृत्व में विकासशील राष्ट्रों को एक बड़ी सफलता जनस्वास्थ्य सम्बन्धी औषधियों के उत्पादन एवं अधिग्रहण के मामले में मिली है, एच0आई0वी0/ एड्‌स टी0वी0 व मलेरिया आदि रोगों से जनसामान्य को सुरक्षा के लिए औषधियों के उत्पादन के मामले में विश्व व्यापार संगठन के ट्रिप्स एवं पेटेण्ट सम्बन्धी नियम अब आड़े

नहीं आ सकेंगे, इस मामले में दी गई छूट के परिणामस्वरूप कोई देश जनस्वास्थ्य के लिए पेटेन्ट शुदा दवाओं का सस्ता उत्पादन करने के लिए किसी भी कम्पनी को लाइसेंस दे सकेगा, कृषि के क्षेत्र में 'डोमेस्टिक सपोर्ट' तथा निर्यात सब्सिडी में कटौती का प्रस्ताव दोहा घोषणा पत्र में शामिल किये जाने से विकासशील राष्ट्रो के किसान कार्यान्वित हो सकेंगे, इससे भारत को भी लाभ होगा।

उल्लेखनीय है कि दोहा सम्मेलन में चीन व ताइवान को भी विश्वव्यापार संगठन का सदस्य बना लिया गया है, यह दोनों इस संगठन के क्रमशः 143वे व 144वे सदस्य है।

विश्व व्यापार संगठन का आगामी पाँचवां मंत्रिस्तरीय सम्मेलन सन् 2003 में मेक्सिकों में होगा। दुनिया के स्तर पर विभिन्न देशों के बीच व्यापार में अप्रत्याशिक वृद्धि उत्पादित वस्तुओं की बहुमूल्यता और जटिलता अत्यन्त विकसित और जटित प्रविधि, संचात क्रान्ति के कारण सिमटते समय और दूरी के सन्दर्भ में व्यापार तट कर,

करों में छूट और मुक्त तथा नियंत्रित व्यापार के लिए दुनिया के स्तर पर सर्वमान्य नियमों का होना एक सभा संसार के लिए अनिवार्य है, इस कारण विश्व व्यापार जैसे संगठनों की उपादेयता से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

"गैट के दिनों से ही अमेरिका, कनाडा तथा यूरोपीय संघ के देश मुख्य रूप से पाँच बातों, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम मानक को विकासशील देशों में भी लागू करने, विदेशी पूंजी निवेश और व्यापार की शर्तों की पारस्परिक रिश्तों, विश्व स्तर पर खुली प्रतिस्पर्धा, विकासशील देशों में अपनी उत्पादित वस्तुओं और बाजार के संरक्षण के लिए उठाये गये कदमों की समाप्ति, बीमा के क्षेत्र में विकासशील देशों में विकसित देशों की बीमा कम्पनियों के बिना रोकटोक प्रवेश तथा सरकारी नीतियों की पारदर्शिता पर जोर देते रहे हैं, सिंगापुर के विश्व व्यापार संगठन सम्मेलन में भी ये विकसित देश इनको स्वीकृत कराना चाहते थे।"[1]

---

[1] राष्ट्रीय सहारा (हस्तक्षेप) लखनऊ, 28 दिसम्बर 1996, पृष्ठ – 3

विकासोन्मुख देशों के पास कच्चा माल और सस्ता श्रम है। इसी कारण पहले कोरिया, ताइवान, मैक्सिको, ब्राजील, हांगकांग और सिंगापुर में विदेशी पूंजी निवेश विशाल पैमाने पर हुआ। उसके बाद इसकी शुरूआत चीन, फिलीपीन्स, थाईलैण्ड, मलेशिया और इन्डोनेशिया में हुई। अब इसकी शुरूआत भारत, पाकिस्तान, बाग्लादेश और आफ्रीका के कुछ देशों में हुई है, इन देशों को आधुनिकीकरण और औद्योगिक विकास के लिए विदेशी पूंजी और टेक्नोलॉजी की आवश्यकता है।

भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली के अध्यक्ष प्रो0 बी0राम चन्द्रैया, "नये बाजार ढूढ़ने में यह संगठन ही हमारी मदद करेगा। 1995-96 में 4475 अरब डालर की कुल विश्व व्यापार में भारत की भागीदारी केवल 0.65 प्रतिशत है। पहले हमारी भागीदारी 1 प्रतिशत तक हुआ करती थी लेकिन अब यह काफी घट गयी है।"[2] ,

[2] राष्ट्रीय सहारा (हस्तक्षेप) लखनऊ, 28 दिसम्बर, 1996, पृष्ठ 2

विश्व व्यापार संगठन से तालमेल बैठाकर ही भारत अपने निर्यात को बढ़ा सकता है। विकासशील देश होने के नाते अपने अधिकार के लिए लड़ना जरूरी है। लेकिन वहां से भागकर हम जायेंगे कहाँ? नई तकनीकि प्राप्त करने तथा अपने उत्पादन को विश्व व बाजार में खपाने के लिए जरूरी है कि भारत विश्व व्यापार संगठन के साथ जुड़ा रहे, और यथासम्भव तालमेल बैठाने का प्रयास करे। सन् 2000 तक हमारा जो 100 अरब डालर का निर्यात का लक्ष्य है उसे प्राप्त करने के लिए हमे नौवीं पंचवर्षीय योजना में 7 प्रतिशत वृद्धि का दर प्राप्त करना होगा। हमें ऐसे निर्यात को बढ़ावा देना होगा जिसकी जरूरत उपभोक्ता समाज को है तथा उसी ढंग से हमें नये बाजार भी ढूंढ़ने होंगे। इसमें विश्व व्यापार संगठन ही हमारी मदद कर सकता है।

वैश्विक आधारिक दूर संचार उदारीकरण समझौता :

दूर संचार के क्षेत्र में उदारीकरण हेतु समझौता के लिए विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के बाद से ही विचार-विमर्श हो रहा था। अन्ततः 15 फरवरी 1997 को

विश्व व्यापार संगठन के मुख्यालय जेनेवा में 'वैश्विक आधारिक दूर-संचार उदारीकरण समझौता' हुआ। इस समझौते पर 68 सदस्य देशों ने हस्ताक्षर किये। यह समझौता 1 जनवरी 1998 से विश्व व्यापार संगठन के सेवा व्यापार में सामान्य समझौता का अंग बन गया। इस समझौते के दो प्रमुख प्राविधान है-

(1) सदस्य देश अपने दूर संचार क्षेत्र का उदारीकरण करे ताकि अन्य देशों की दूर संचार कम्पनियों का प्रवेश हो सके तथा वे प्रतिस्पर्धात्मक रूप से कार्य कर सके।

(2) प्रत्येक देश में एक नियमन का अधिकरण बनाया जाय। जो निजी एवं सार्वजनिक उद्यमों से स्वतंत्र हो। इस समझौते के पक्ष में यह तर्क दिया गया है कि इससे दूर संचार क्षेत्र का विकास होगा और इसकी दक्षता बढ़ेगी। इससे अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने की पहुँच सरल, सुविधाजनक और सस्ती हो जायेगी।

वित्तीय सेवाओं पर समझौता :

वित्तीय सेवाओं पर समझौता करने के लिए विश्व व्यापार संगठन के तत्वावधान में कई वर्षो तक वार्ता चलती रही। इस वार्ता के परिणामस्वरूप 13 दिसम्बर 1997 को वित्तीय सेवाओं का समझौता हुआ। वित्तीय सेवाओं पर हुए समझौते के अनुसार वित्तीय सेवाओं में उदारीकरण कियागया है। ताकि बीमा, बैंकिंग और प्रतिभूति सेवाओं के क्षेत्र में निजी और विदेशी कम्पनियों का प्रवेश हो सकें। इसके पक्ष में यह तर्क दिया गया है कि इससे विकासशील अर्थ व्यवस्थाओं में पूंजी का प्रवाह बढ़ेगा। यह समझौता वर्ष 1999 से लागू होगा। जेनेवा में सम्पन्न हुए इस समझौते के लागू होने के बाद भारत विदेशी बैंकों को एक वर्ष में 12 शाखाएँ खोलने की अनुमति देगा, इस समय भारत एक वर्ष में विदेशी बैंकों की अधिकतम 8 शाखाओं के खोलने की अनुमति देता है।

वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री अरूण शौरी ने कहा है कि विश्व व्यापार संगठन के विभिन्न मुद्दों को लेकर भारत को दूसरे देशों के साथ गठबंधन स्थापित करने होंगे ताकि

अन्तर्राष्ट्रीय मचं पर समझौता प्रक्रिया में अपने हित में फैसले कराये जा सके। वह आज यहाँ मंत्रालय की संसदीय सलाहकार समिति की बैठक को सम्बोधित कर रहे थे। बैठक के दौरान मंत्रालय द्वारा विश्व व्यापार संगठन में चल रही समझौता वार्ताओं को लेकर मौजूदा स्थिति से सम्बन्धित एक दस्तावेज भी पेशस किया गया। शौरी ने कहा कि अब से लेकर मेक्सिकों में आयोजित होने वाले मंत्रिस्तरीय सम्मेलन तक विश्व व्यापार संगठन में घटना क्रम बहुत तेज रहेगा। भारत को विकासशील देशों द्वारा इस मामले में नेतृत्व प्रदान करने वाले देश के रूप में देखा जा रहा है।

उन्होंने कहा कि विकासशील देश आर्थिक विकास के विभिन्न चरणों से गुजर रहे है। इसलिए मुद्दों पर एक राय हो पाने का मसला और भी जटिल हो गया है। उन्होंने कहा कि विश्व व्यापार संगठन वार्ता में किसानों और लघु उद्यमियों के हितों का विशेष ध्यान रखा जायेगा।

सरकार इनसे जुड़े पहलुओं को लेकर गम्भीर है। उन्होंने कहा कि दीर्घावधि में विश्व व्यापार संगठन के स्वीकार

करने या अस्वीकार करने का सवाल अहम नहीं है। मुख्य बात यह है कि हमें अपनी प्रतिस्पर्धी क्षमता बढ़ानी होगी। [3]

अभी हाल में चीन के प्रतिनिधि ने जेनेवा में विश्व व्यापार संगठन ने स्पष्ट किया कि हमारे देश में किसानों की आबादी काफी अधिक है। हम उनके अधिकारों की अवहेलना करके विश्व व्यापार संगठन के नियमों को मानने के लिए बाध्य नहीं है।

1986 में राजीव गांधी ने तिलहन के उत्पादन को बढ़ाने के लिए तकनीकि मिशन बनाया। फलस्वरूप अगले 10 वर्षों में तिलहन के उत्पादन में दो गुनी वृद्धि हुई। मध्य प्रदेश में ऐतिहासिक उत्पादन बढ़ा, पर वर्तमान सरकार ने जेनेटिक इन्जीनियरिंग द्वारा तैयार सोयाबीन मंगाकर किसानों को बरबाद कर दिया।

नवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि की उत्पादकता प्राप्ति का लक्ष्य 3.82 फीसदी रखा गया। सरकार यह लक्ष्य नहीं पा सकी। बीते वर्ष कृषि उत्पादन ने 1 फीसदी से भी

---

[3] अमर उजाला, इलाहाबाद, 19 दिसम्बर 2002, पृष्ठ 5

कम की वृद्धि दर्ज हो सकी। इसी योजना में खाद्य तेलों के मामलों उत्पादन वृद्धि का लक्ष्य 5.25 फीसदी रखा गया जो कि तीन वर्षों में 16 फीसदी से ज्यादा होना चाहिए, उसमें उल्टे 16 फीसदी की गिरावट दर्ज की गयी।

विश्व व्यापार संगठन में यह प्रावधान किया गया है कि कृषि के प्राथमिक उत्पादों पर 100 फीसदी प्रसंस्कृत पदार्थों पर 150 फीसदी, खाद्य तेलों पर 300 फीसदी इम्पोर्ट ड्यूटी लगायी जा सकती है। इसी तरह एन्टी डम्पिंग का प्रावधान भी था। तो सरकार ने उनका इस्तेमाल क्यों नहीं किया? देश के गरीब किसानों पर पिछला केवल 1800 करोड़ रूपये बकाया है। जिसे वसूलने के लिए सरकार बड़ी कड़ाई से जुटी है। वहीं दूसरी तरफ पूंजीपतियों के 6000 करोड़ के बकाये को सरकार ने चुपचाप माफ कर दिया। आठ फसलों धान, गेहूँ, आलू, नारियल, टमाटर, तिलहन, कपास, रबर की फसलों की हालत काफी खराब है। इस फसलों की लागत भी किसानों को नहीं मिल पा रही है। धान की न्यूनतम समर्थन मूल्य 540 रूपये है। जबकि बिहार के

किसानों को अपना धान 300 रूपये में बेचना पड़ा। दक्षिण में रबर पैदा करने वाले किसान बरबाद हो चुके है और नारियल का कोई खरीददार नहीं है। सोयाबीन के 1050 रूपये न्यूनतम समर्थन मूल्य के बजाय मध्य प्रदेश के किसानों को 700 रूपये में बेचना पड़ा। एक तरफ तो लागत दिनों-दिन बढ़ रही है, ऊपर से भारतीय खाद्य निगम गेहूँ के समर्थन मूल्य में 60 रूपये प्रति कुंतल कम करने की सिफारिश कर रहा है। यह किसानों के साथ अन्याय है। यदि भारतीय खाद्य निगम के बाकी खर्चे अधिक है तो इसके लिए किसानों का क्या दोष है। 1994 में मैने अपने किसी मंत्रित्वकाल में लघु किसान किसी संघ की स्थापना की थी। जिसके उद्देश्य ने 8 पायलट प्रोजेक्ट शुरू किये गये, क्रेडिक कार्ड की योजना भी मेरे किसी मंत्रित्वकाल में बनी थी। उसके व्यवहारिक कार्यान्वयन की आवश्यकता है।

1995 में जो कृषि उत्पादों का आयात देश में किया जा रहा था वह आज 4 गुने से भी ज्यादा हो गया। यह देश को बहुत खतरनाक स्थिति की ओर ले जा रहा है।

नई किसी नीति भारतीय कृषि क्षेत्र के साथ खिलवाड़ कर रही है। यह देश की जनता पेट भरने के लिए आयात पर निर्भर कर देने वाली है।

वर्तमान समस्या का एक ही हल है कि किसानों की उत्पादकता को बढ़ाया जाय और इसके लिए सरकार को बिना किसी अन्तर्राष्ट्रीय दबाव की परवाह किये किसानों के हितों का ख्याल रखते हुए मदद के लिए हर प्रकार से प्रयासरत रहना चाहिए। उत्पादन बढ़ाने के लिए बीज उत्पादन गांव विकसित किये जाये, सिंचाई के साधन मुहैया कराये जाये, मिट्टी की जाँच सरकार की ओर से कराई जाये, रासायनिक खादों के इस्तेमाल के बजाय जैविक, हरित व कम्पोस्ट खाद्यों के इस्तेमाल को बढ़ावा दिया जाय। जल सतुंलन व उर्वरकों के जल संतुलन के बारे में किसानों को प्रशिक्षित किया जाय। वर्तमान कृषि नीति में कृषि उत्पादन में वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य 4 फीसदी रखा गया है परन्तु उसे प्राप्त करने का श्रोत नहीं बताये गये। जब मैने कृषि नीति

अपनाई थी तो उस पर प्रदेशों के किसी मंत्रियों, वैज्ञानिकों व किसान प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श कर बनाया था।[4]

विश्व व्यापार संगठन तो दरअसल सबसे ज्यादा व्यापार करने वाले देशों का संगठन बन कर रह गया है। इसके जितने नियम है उन्नत देशों के पक्ष में है पूंजीवाद हमेशा नये रास्ते तलाशता रहता है कि माल कैसे बिके और सस्ता बिके। अतः विश्व व्यापार संगठन के नियमों में इस बात पर सबसे ज्यादा जोर दिया गया है कि दोहरे कराधान को कम किया जाय, बाजार खुले हो, सभी बड़े देश व्यापार बढ़ाने के लिए कर सुधार में जुटे है। विश्व बाजार में हमारे समस्त व्यापार का हिस्सा तो केवल आधा फीसदी है। उसमें भी कृषि का योगदान तो बहुत ही कम है। कृषि के लिए भारतीय बाजार खुलने का मतलब साफ है कि इससे देश के खेती को भारी चोट पहुंचेगी क्योंकि दूसरे देश जहाँ खेती की पैदावाद में सुधार व वृद्धि के लिए विज्ञान की मदद ले रहे है। उच्च तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। भारी मात्रा में

[4] अनिरूद्ध शर्मा, अमर उजाला, इलाहाबाद, 27 फरवरी 2001 पृष्ठ 7

सब्सिडी दी जा रही है वहीं हम इस प्रतिस्पर्धा के लिए कतई तैयार नहीं है यहीं किसानों की लागत दिनोदिन बढ़ती जा रही है। विज्ञान के प्रयोग पर जोर नहीं दिया जा रहा है। सरकार गरीब किसानों की मदद के बजाय सब्सिडी कम कर रही है। देश की खेती से होने वाली कुल आमदनी लगातार गिरावट की ओर है वैसे भी भारत की बहुसंख्यक किसान गरीबी की रेखा से नीचे अपनी गुजर बसर करते है। अतः विश्व व्यापार के नियम कानून भारत पर लागू नहीं किये जा सकते। अपनी रक्षा के लिए भारत दृढ़ता से खड़ा हो सकता है जैसा कृषि वैज्ञानिक डॉ० एस० स्वामी नाथन का कहना है कि विश्व व्यापार संगठन के नियमों में जीविका ब्लाक भी खोला जाय। क्योंकि अगर किसी नियम को मानने से जीवकोपार्जन में ही व्यवधान आये तो उस नियम को मानने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए। इसके लिए विश्व व्यापी आन्दोलन की आवश्यकता है।

सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि एक तरफ भारत ने विश्व व्यापार संगठन की शर्तो को मान लिया है वहीं दूसरी

ओर भारतीय किसानों को विश्व प्रतियोगिता के लिए तैयार नहीं किया है, चीन व थाईलैण्ड आदि देशों में वैज्ञानिक खेती की शुरूआत हुई। फलतः कीमत में कमी आई। बड़े-बड़े देश तरह-तरह के नामों से किसानों को सब्सिडी दे रहे है। जापान 69 फीसदी, यूरोपीय संघ 42 फीसदी, कनाडा 20 फीसदी व अमेरिका 20 फीसदी सब्सिडी दे रहा है। अमेरिका का यह 16 फीसदी 23 मिलियन डालर है। जो वहा के लगभग 91000 किसानों को मिल जाता है। इतनी भारी सब्सिडी के कारण उनके देश में हमारा सामान मंहगा है जबकि इसके उलट उनका सामान हमारे बाजारों में सस्ता पड़ेगा। इस प्रतिस्पर्धा में हम आर्थिक रूप से सम्पन्न देशों से काफी पिछड़े है। हम इनके प्रतियोगिता नहीं कर पा रहे है, बार-बार कहा जाता है कि अगर आयात पर कर बढ़ा दिया जाये तो विदेश से आने वाले समान को भारतीय बाजारों में आने से रोका जा सकेगा। लेकिन इसका परिणाम होगा मूल्यवृद्धि। कुछ समय तक ऐसा किया जा सकता है पर लम्बे समय के लिए यह समस्या का हल नहीं है क्योंकि ऐसा करने पर दूसरे देश भी हमारे निर्यात पर कर बढ़ा देंगे।

दरअसल भारत में खेती की लागत अधिक व उत्पादकता काफी कम है, हमारे किसान गरीब है उन्हें सरकारी सहायता की आवश्यकता है, देश के बड़े हिस्से में अभी तक चकबन्दी नहीं हो पायी है। हमारे किसानों के पास छोटी-छोटी जमीनें है। इसीलिए मैंने अपने कृषि मंत्रित्व काल में सरकारी खर्च पर मिट्टी की जांच, हर जिले में कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना, उन्नत बीज बैंक, उन्नत बीज के विकास के लिए वार्षिक बजट, प्रति ट्रैक्टर समूह के लिए किसानों को सवा लाख की सब्सिडी, सरकारी खर्च पर फसल बीमा, किसान क्रेडिट कार्ड, बड़े पैमाने पर किसान समूहों को सिंचाई साधन व पूर्वी भारत में कृत्रिम गर्भाधान के जरिये नस्ल सुधारने के काम आदि की शुरूआत की थी। इसके अलावा आज इस बात की सख्त जरूरत है कि दूध, फल, सब्जी, अंडे व मछली और इन पर आधारित उत्पादन को बड़े पैमाने पर किया जाये ताकि किसानों के पारिवारिक घाटे के बजट की पूरक आमदनी हो। किसानों को भी धान-गेहूँ की ही नहीं बल्कि तरह-तरह की लाभदायक फसलों को लगाने की जरूरत है।

भारत में फसल की कटनी, तैयारी, बोराबन्दी, गोदामों का अभाव परिवहन की समस्या आदि में भारी बर्बादी होती है। फल सब्जी तो एक चौथाई से ज्यादा नष्ट हो जाता है, एक अनुमान के मुताबिक हमारे देश में आस्ट्रेलिया के कुल उपज के बराबर भारत में बर्बादी होती है। मेरे विचार में उद्योगपति आधुनिक तरीकों से किसानों की मदद करे तो किसानों को लाभ मिल सकता है, लेकिन वे भी खेत हासिल करना चाहते है।[5]

---

[5] अमर उजाला, 27 फरवरी 2001, पृष्ठ 7

अध्याय तीन

विभिन्न आयात-निर्यात नीतियाँ एवं भारतीय विदेशी व्यापार

किसी देश की भुगतान शेष की समस्याका समाधान बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि देश आयात व निर्यात क्षेत्रों में क्या नीति अपनाता है। हाल के वर्षो में (नब्बे के दशक) भारत सरकार ने व्यापार की क्या नीति अपनाई है या ऐसी कौन से कदम उठाये गये है जिनका आयातों व निर्यातों दोनों पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए अब आयात नीति व निर्यात नीति का अलग-अलग अध्ययन करना सम्भव नहीं है। वस्तुतः हाल के वर्षो में उठाये गये आयात उदारीकरण कदमों का एक मुख्य उद्देश्य निर्यात क्षेत्र को आसानी से आगत उपलब्ध कराना रहा है ताकि निर्यात आय में वृद्धि की जा सकें।

आयात नीति :

अस्सी के दशक से पूर्व भारत सरकार की आयात नीति के दो पहलू थे (1) आयात प्रतिबन्ध (2) आयात

प्रतिस्थापन। इस नीति का निर्धारण करते समय देश के सीमित विदेशी मुद्रा भण्डारों, आवश्यक उपभोग वस्तुओं की अर्थ व्यवस्था में कमी, औद्योगीकरण के लिए पूंजीगत वस्तुओं, मशीनरी, कलपुर्जो इत्यादि के आयात की आवश्यकता तथा देश में आयात प्रतिस्थापन की सम्भावकता का ध्यान रखा गया था। नौवे दशक में व्यापक आधार पर आयात उदारीकरण के कार्यक्रम शुरू किये गये। इसके पीछे देश के निर्यात क्षेत्र की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति बढ़ाने की इच्छा थी ताकि निर्यातों को बढ़ाया जा सके।

आजादी के तुरन्त बाद की अवधि में सरकार की आयात नीति उदार थी और उसका उद्देश्य दूसरे विश्व युद्ध के बाद पैदा होने वाली वस्तुओं की कमी की स्थिति से देश को उबारना था। परन्तु इस नीति के पालन के परिणामस्वरूप व्यापार शेष में भारी घाटा हुआ और सरकार को आयात नियन्त्रण लगाने पड़े। सितम्बर 1949 में रुपये का अवमूल्यन कर दिया गया। इस अवमूल्यन के बाद आयात नियन्त्रणों में काफी ढ़ील दी गयी। पूरी प्रथम पंचवषीय योजनाओं के दौरान

आयात नीति उदार थी क्योंकि सरकार के पास काफी स्टलिंग भण्डार मौजूद थे।

आयात प्रतिबन्ध :

1956-57 से शुरू होने वाली दूसरी पंचवर्षीय योजना में महलानोविस योजना युक्ति लागू की गयी जिसके अन्तर्गत व्याप्त औद्योगीकरण कार्यक्रम आरम्भ किये गये। इस युक्ति के परिणाम स्वरूप सरकार को भारी मात्रा में पूँजीगत वस्तुओं, मशीनरी, कलपुर्जो, मध्यवर्ती वस्तुओं, तकनीकी ज्ञान इत्यादि का आयात करना पड़ा जिससे विदेशी मुद्रा का खर्च बहुत बढ़ गया। खाद्यान्नों की कमी की स्थित से निपटने के लिए सरकार को बड़ी मात्रा में खाद्यानों का आयात भी करना पड़ा। इस सबके विपरीत, निर्यात आय ज्यो की त्यों बनी रही जिससे व्यापार शेष में भारी घाटा हुआ। इन परिस्थितियों में सरकार ने आयात व्यय को कम करने के लिए व्यापक आयात प्रतिबन्ध लागू किये। इस प्रकार कठोर आयात प्रतिबन्धात्मक नीति की शुरुआत 1956-57 से होती है। जैसे-जैसे विदेशी मुद्रा का संकट गम्भीर होता गया, सरकार और अधिक

वस्तुओं पर आयात प्रतिबन्ध लगाती चली गयी। आयातों को विभिन्न श्रेणियों में बांटा गया जैसे पूर्णतया प्रतिबन्धित, सरकारी एजेन्सियों के माध्यम से आयात की जाने वाली वस्तुएँ, खुले सामान्य लाइसेंस के माध्यम से आयात हो सकने वाली वस्तुएँ इत्यादि। गैर जरूरी वस्तुओं पर कड़े नियंत्रण लगा दिये गये ताकि पूंजीगत वस्तुओं और अन्य आवश्यक वस्तुओं के आयात के लिए विदेशी मुद्रा बचाई जा सके। आयात प्रतिबन्ध की नीति पूरे दो दशकों तक (लगभग 1977–78) तक लागू रही। परन्तु इस अवधि के दौरान आयात उदारीकरण का थोड़ा सा दौर आया था। जून 1996 में रूपये का स्वर्ण के अपेक्षा 36.5% अवमूल्यन किया गया था और उसके बाद आयातों में ढील दी गयी थी। इस नीति से लाभ के लिए 59 प्राथमिक उद्योगों को चुना गया जिनमें निर्यात उद्योग, पूँजीगत वस्तु उद्योग तथा आम उपभोक्ताओं की आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन करने वाले उद्योग (जैसे चीनी व सूती वस्त्र उद्योग) शामिल थे। 1966 में ही देश में हरित क्रान्ति की प्रक्रिया आरम्भ हुई और सरकार ने नई कृषि

युक्ति को सफल बनाने के उद्देश्य से भारी मात्रा में उर्वरकों और कीटनाशक दवाओं के आयात की व्यवस्था की।

आयात प्रतिस्थापन :

भारत में आयात प्रतिस्थापन कार्यक्रम के दो मुख्य उद्देश्य थे-

(1) विदेश मुद्रा की बचत करना ताकि अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तुओं का आयात किया जा सके।

(2) जितनी अधिक वस्तुओं के उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सके, उसे प्राप्त करना।

भारत में आयात प्रतिस्थापन नीति के तीन चरण रहे है-

(1) पहले चरण में आयात प्रतिस्थापन मुख्यतया उपभोक्ता वस्तुओं तक सीमित था।

(2) दूसरे चरण में पूँजीगत वस्तुओं के घरेलू उत्पादन पर जोर दिया गया।

(3) तीसरे चरण में आयातित प्रौद्योगिकी के स्थान पर घरेलू प्रौद्योगिकी के विकास एवं प्रयोग पर जोर दिया गया। पहले चरण में, नई औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए, देश विदेशी तकनीकी सहयोग पर निर्भर था। आयात प्रतिस्थापन नीति के परिणामस्वरूप, आयातों की संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। कई मदें जिनका पहले आयात किया जाता था अब देश में ही बनाई जाने लगी है। इस नीति के परिणामस्वरूप, देश कई औद्योगिक वस्तुओं जैसे लोहा व इस्पात, वाहन, रेल के डिब्बे, मशीन टूल्स, डीजल इंजन, पॉवर ट्रान्सफार्मर इत्यादि का उत्पादन करने लगा है तथा कई अन्य वस्तुओं के उत्पादन में तो आत्मनिर्भरता की स्थिति प्राप्त की जा चुकी है। आर0जी0 नाम्वियन ने 1955-56 से 1973-74 की अवधि के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था में आयात प्रतिस्थापन नीति की प्रगति का विवेचन किया है। उने अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि विनिर्मित वस्तुओं के प्रत्येक वर्ग में घरेलू उत्पादनों विदेशी वस्तुओं का प्रतिस्थापन किया है। 1955-56 तक उपभोक्ता वस्तुओं का आयात काफी कम हो चुका था और इस क्षेत्र में आयात प्रतिस्थापन

की प्रक्रिया लगभग पूरी हो चुकी थी। 1955-56 में उपभोक्ता के क्षेत्र में आयातित मदों का हिस्सा मात्र 3.7 प्रतिशत था जो 1973-74 तक कम होते-होते मात्र 1.1 प्रतिशत रह गया। मध्यवर्ती वस्तु क्षेत्र I (कच्चे माल से जनित) में आयातों का हिस्सा 1955-56 में 24.5 प्रतिशत से कम होकर 1973-74 में 8.6 प्रतिशत रह गया। मध्यवर्ती वस्तु क्षेत्र II (उच्च विरचना के स्तरों पर उत्पादित वस्तुएं) में आयातों का हिस्सा 1955-56 में 31.7 प्रतिशत से कम होकर 1973-74 में 12.0 प्रतिशत रह गया। सभी विनिर्मित वस्तुओं में आयातित मदों का हिस्सा इसी अवधि में 15.2 प्रतिशत से कम होकर 9.1 प्रतिात रह गया। जहाँ तक निवेश वस्तुओं का सम्बन्ध है, दूसरी व तीसरी योजना में औद्योगीकरण के लिए अपनाये गये व्यापक कार्यक्रमों के कारण, उनका भारी मात्रा में आयात करना पड़ा। इसलिए निवेश वस्तुओं के क्षेत्र में, कुल आपूर्ति में आयातों का हिस्सा 1955-56 में 25.9 प्रतिशत से बढ़कर 1963-64 में 42.9 प्रतिशत हो गया। परन्तु जैसे-जैसे इनके घरेलू उत्पादन में वृद्धि हुई, आयातों का हिस्सा कम होने लगा और

1973-74 में कुल उत्पादन में आयातों का हिस्सा 23.6 प्रतिशत रह गया।[1] इस विश्लेषण में नाम्बियर ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भारत में आयात प्रतिस्थापन की नीति अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल रही है। इसके परिणाम स्वरूप, न केवल आयातों की सरंचना में व्यापक परिवर्तन हुए है, अपितु 'हुये हुए विकास सम्भाष्य' को विकसित करने के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करने में भी सहायता मिली है।

यद्यपि भारत की आयात प्रतिस्थापन नीति का प्रत्यक्ष उद्देश्य विदेशी मुद्रा की बचत करना था तथापि उसका दीर्घकालीन उद्देश्य देश की औद्योगिक संरचना में दूरगामी परिवर्तन लाना था। यह उद्देश्य दूसरी योजना के मसौदें में साफ तौर पर नजर आता है, इसके परिणामस्वरूप, देश की औद्योगिक संरचना में काफी विवधीकरण हुआ और भविष्य में विकास की सम्भावनाओं को बल मिला।

जबकि अहमद के अनुसार, आयात प्रतिस्थापन से न केवल बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की बचत हुई है बल्कि आर्थिक

---

[1] आर0जी0 नाम्बियर भारतीय अर्थ व्यवस्था घरेलू व्यय, जून 11, 1977 पृ0 957

व औद्योगिक विकास प्रक्रियाओं को भी प्रोत्साहन मिला है। उदाहरण के लिए, 1950-51 से 1965-66 के बीच पन्द्रह वर्षों में कुल उत्पादन में वृद्धि का एक चौथाई हिस्सा तथा पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि करना था। आधा हिस्सा आयात प्रतिस्थापन का हिस्सा था। इसी प्रकार के निष्कर्ष एच0बी0 चेनरी, एस0 शिशिखडो तथा ही बतानवे ने जापान के अपने अध्ययन में प्राप्त किये थे। उन्होंने अनुमान लगाया था कि 1914 से 1954 के दौरान, जापान में विनिर्माण उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि का लगभग 40% आयात प्रतिस्थापन के कारण था।

आयात उदारतावाद :

1977-78 तक सरकार की आयात नीति में कभी ढील और कभी कड़ाई देखने को मिलती है। पहली योजना में आयात नियन्त्रण कम थे। दूसरी में अत्यधिक नियन्त्रण थे और तीसरी में इन्हें थोड़ा कम कर दिया गया था। यही स्थिति तीसरी योजना के बाद 1977-78 तक देखने के मिलती है। 1977-78 की आयात-नीति में उदारतावाद का

नया दौर शुरू होता है। बाद की आयात-नीति सम्बन्धी घोषणाओं में आयातों को और उदार बनाया गया है। 1980-81 से 1984-85 की वार्षिक आयात नीतियों में औद्योगिक क्षेत्र के लिए आवश्यक आगतों के आयात उदार किये गये। परन्तु आयात उदारतावाद के क्षेत्र में प्रभावी कदम पहली बार 1985 में उठाये गये जब तीन वर्षीय आयात-निर्यात नीतियों की घोषणा का क्रम शुरू हुआ पहली तीन वर्षीय नीति का काल 1985 से 1988 तक था। दूसरी का काल 1988 से 1991 रखा गया था, परन्तु केन्द्र में सरकार बदलने के साथ ही इस नीति को एक वर्ष पहले समाप्त कर दिया गया। तीसरी नीति की अवधि 1 अप्रैल 1990 से 31 मार्च 1993 रखी गयी। यह नीति भी पूरे तीन वर्ष तक नहीं चली। 31 मार्च 1992 को सरकार ने नई आयात-निर्यात नीति की घोषणा की जिसकी अवधि पाँच वर्ष की थी, और जिसका क्रियान्वयन आठवीं योजना की अवधि था। नौवीं योजना की अवधि के लिए सरकार ने नई आयात-निर्यात नीति की घोषणा 31 मार्च 1997 को की। यह नीति 1997-2002 के दौरान लागू रहेगी।

अस्सी के दशक की आयात–निर्यात नीति के प्रतिपादन में तीन सहकारी समितियों के सुझावों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ये समितियाँ थी– अलेक्जेंडर समिति (1978), टंडन समिति (1982) तथा हुसैन समिति (1984)। इन समितियों ने निर्यात प्रोत्साहन और आयात उदारीकरण पर जोर दिया। इस प्रकार नौवे दशक की आयात–निर्यात नीतियों में (खासतौर पर तीन दीर्घकालीन आयात–निर्यात नीतियों में) निम्न दशाओं में कदम उठाये गये– आयातों का उदारीकरण (विशेषतौर पर पूँजीगत वस्तुओं और कच्चे माल के आयात की व्यापक सुविधाएं) तथा निर्यातों को रियायतें व छूटे। यह बात भी स्पष्ट होने लगी कि खुले सामान्य लाइसेंस के आधीन और मदों को आयात करने की सुविधा दी जायेगी (नई मदों को शामिल करके तथा पूर्णतया प्रतिबन्धित वस्तुओं की सूची को कम करके) इस प्रकार सरकार की नई नीति में मात्रात्मक प्रतिबन्धों को कम करने की बात की गई। दूसरे ओ0जी0एल0 सूची में पूँजीगत वस्तुओं और कच्चे माल की और मदों को शामिल करके आयात उदारीकरण की प्रक्रिया में इन्हें प्राथमिकता दी गयी।

प्रशुल्क दरों को कम करने के लिए भी कदम उठाये गये। आखिर दो-तीन वर्षीय आयात-निर्यात नीतियों में निर्यातों की ओर अधिक ध्यान दिया गया तथा 1990-92 की नीति सर्वाधिक निर्यात उन्मुख थी। इन तीन-तीन वर्षीय नीतियों (1985-88, 1988-90 तथा 1990-92) में आयात उदारीकरण के लिए उठाये गये मुख्य कदम निम्नलिखित थे-

<u>पूँजीगत वस्तुओं का आयात :-</u> क्योंकि औद्योगिक क्षेत्र में विकास के लिये पूँजीगत उपकरणों का विशेष महत्त्व है, इसलिए इनके आयात को और आसान बनाया गया। इस उद्देश्य के लिए लाइसेसिंग शर्तो को सरल कर दिया गया। बहुत सी पूँजीगत वस्तुओं को खुले सामान्य लाइसेंस के अन्तर्गत लाया गया अर्थात उनका आयात बिना रोकटोक करने की सुविधा दी गयी। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में निर्यातकों की प्रतिस्पर्धा शक्ति बढ़ाने के उद्देश्य से इस नीति में पूँजीगत वस्तुओं के आयात की विशेष सुविधा दी गयी है। ऐसे उत्पाद का निर्यातको को जो अपने उत्पादन का 25% और कम से कम 1 करोड़ रूपये तक का निर्यात करते है या ऐसी

इकाईयां जो कम से कम 10 करोड़ रूपये का निर्यात करती है, उन्होंने पूँजीगत वस्तुओं के आयात के लिए विशेष रियायतें दी गयी। ऐसी पूंजीगत वस्तुएं यदि देश में उपलब्ध हो तो भी उनका आयात किया जा सकेगा। शर्त केवल यह थी कि इनका निर्यात की जाने वाली वस्तु से सीधा सम्बन्ध होना चाहिए।

<u>कच्चे माल का आयात :-</u> पूंजीगत वस्तुओं की तरह ही, बहुत सी कच्चे माल की वस्तुओं, कल-पुर्जो तथा उपभोज्य वस्तुओं को खुले सामान्य लाइसेंस के अधीन लाया गया ताकि वास्तविक प्रयोगकर्ता बिना लाइसेंसिग प्रणाली की कठिनाइयों से गुजरे हुए उनका आसानी से आयात कर सके। 1990-1992 की नीति में ओ0जी0एल0 की सूची में इस प्रकार की 870 वस्तुओं/वस्तु समूहों को शामिल किया गया। ओ0जी0एल0 आयातों के अलावा, औद्योगिक क्षेत्र के वास्तविक प्रयोगकर्ताओं को अनुपूरक लाइसेंसों के अधीन कच्चे माल, कल-पुर्जो तथा उपभोज्य वस्तुओं के आयात की सुविधा प्रदान की गयी।

<u>पंजीकृत निर्यातकों के लिए आयात नीति</u> :- देश की निर्यात आय को बढ़ाने की आवश्यकता का ध्यान रखते हुए आयात नीति को निर्यात उन्मुख बनाने के लिए कई कदम उठाये गये इनका उद्देश्य यह था कि पंजीकृत निर्यातकों की आवश्यक आगतों की सतत् व बिना रूकावट के लगातार आपूर्ति की जा सके ताकि उत्पादन में व्यवधान न पड़े। नवे दशक के शुरू से ही पंजीकृत निर्यातक नीति लाइसेंसी के उपयोग में लचीलापन रखा गया। आर०ई०पी० लाइसेंसों के तहत कच्चे माल का आयात बिना शुल्क दिये करने की व्यवस्था की गयी तथा पूंजीगत वस्तुओं के आयात की सुविधा भी दी गयी। 1988-90 की नीति में आयात पुर्नपूर्ति की सुविधा और निर्यात उत्पादों को उपलब्ध करायी गयी कच्चे माल तथा कलपुर्जो के आयात के लिए सभी आर०ई०पी० लाइसेंसों में आटोमेटिक सुविधा प्रदान की गयी। इस लचीलेपन के प्रावधान में 10 लाख रूपये से कम की पूंजीगत वस्तुओं को बिना सरकारी अनुमति के आयात करने की सुविधा दी गयी।

1990-92 की आयात नीति पंजीकृत निर्यातकों के लिए नीति और लचीली बनायी गयी। आर0ई0पी0 लाइसेंसों को पूरी तरह हस्तान्तरणीय कर दिया गया। आर0ई0पी0 लाइसेंसिंग योजना के लाभ उन वस्तुओं को छोड़कर जिनकी चर्चा नीति में की गयी थी, अन्य सब निर्यात वस्तुओं पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी। इसके अलावा घरेलू उद्योगों के लिए आवश्यक कच्चे माल तथा कलपुर्जो के आयात के लिए आर0ई0पी0 लाइसेंसों को पूरी तरह लचीला बना दिया गया। 1990-92 की नीति में आयात-निर्यात पास बुक योजना के स्थान पर बहुव्यापी अग्रिम लाइसेंस योजना शुरू की गयी। इस योजना के अन्तर्गत 10 करोड़ रूपये से अधिक की शुद्ध विदेशी मुद्रा कमाने वाले निर्यातकों को बिना शुल्क दिये 12 महीने की आयात आवश्यकताओं के बराबर आयात करने की अनुमति दी गयी।

1990-92 की नीति में पहली बार देश की निर्यात आय में सेवा, निर्यातों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार किया गया। इन निर्यातकों को अर्जित विदेशी मुद्रा के

10 प्रतिशत के बराबर पुर्नपूर्ति लाइसेंस देने की व्यवस्था दी गयी।

<u>निर्यात व व्यापार गृहों के लिए नीति :-</u> जो निर्यातक किसी दिये गये समय में निर्धारित न्यूनतम निर्यात लक्ष्यों को प्राप्त कर पाने में सफल होते है। उन्हें निर्यात गृह व्यापार गृह स्टार व्यापार, गृह तथा सुपर स्टार व्यापार, गृह का दर्जा दिया जाता है। इन्हें दो कसौटियों के आधार पर परिभाषित किया गया है- 1- फ्री ऑन बोर्ड कसौटी तथा 2- निवल विदेशी मुद्रा अर्जन कसौटी। पहली कसौटी के आधार पर सीमाएं इस प्रकार है- निर्यात गृह का दर्जा पाने के लिए निर्यातक ने पिछले तीन वर्षो में प्रत्येक वर्ष कम से कम 12.50 करोड़ रूपये मूल्य का अथवा पिछले वर्ष 18.75 करोड़ रूपये मूल्य का निर्यात किया हो। व्यापार गृह का दर्जा पाने के लिए निर्यातक ने पिछले 3 वर्षो में प्रत्येक वर्ष कम से कम 62.50 करोड़ रूपये मूल्य का अथवा पिछले वर्ष 93.75 करोड़ मूल्य का निर्यात किया हो। स्टार व्यापार गृह का दर्जा पाने के लिए निर्यातक ने पिछले तीन वर्षो में प्रत्येक

वर्ष 312.50 करोड़ रूपये मूल्य का अथवा पिछले वर्ष 468.75 करोड़ रूपये मूल्य का निर्यात किया हो। सुपर स्टार गृह का दर्जा पाने के लिए निर्यातक ने पिछले तीन वर्षों में प्रत्येक वर्ष 925 करोड़ रूपये मूल्य का अथवा पिछले वर्ष 1387.50 करोड़ रूपये मूल्य का निर्यात किया हो। एन0एफ0सी0 कसौटी के आधार पर सीमाएं इस प्रकार है- निर्यात गृह का दर्जा पाने के लिए निर्यातक को पिछले तीन वर्षों में प्रत्येक वर्ष 10 करोड़ रूपये मूल्य का अथवा पिछले वर्ष 15 करोड़ रूपये की निर्यात आय हुई हो। व्यापार गृह का दर्जा पाने के लिए यह सीमाएं क्रमशः 50 करोड़ रूपये 75 करोड़ तथा स्टार व्यापार गृह का दर्जा पाने के लिए क्रमशः 250 करोड़ रूपये तथा 375 करोड़ रूपये और सुपर स्टार गृह का दर्जा पाने के लिए क्रमशः 740 करोड़ रूपये तथा 1100 करोड़ रूपये है।[2]

---

[2] 31 मार्च 1999 को घोषित संशोधित आयात-नियार्त नीति में इन कटौतियों में थोड़ा सा परिवर्तन किया गया और वर्ष 1999-2000 के लिए सीमाओं को थोड़ा कम करके 2000-2001 के लिए बढ़ाया गया।

निर्यात क्षेत्र में निर्यात व्यापार गृहों की विशिष्ट भूमिका का ध्यान रखते हुए उसे कई प्रकार की आयात सुविधायें प्रदान की गयी। आर0ई0पी0 के अधीन प्राप्त होने वाले लाभ इन गृहों को भी दिये गये। इन गृहों को वास्तविक उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खुले सामान लाइसेंस के अन्तर्गत आने वाली व अन्य मशीनरी का आयात किया गया। और इन गृहों के अतिरिक्त आयात लाइसेंस भी प्रदान किये गये। ये लाइसेंस पूरी तरह हस्तान्तरणीय है। इन गृहों को इस उद्देश्य के लिए भी विदेशी विनिमय उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी कि वह निर्यात प्रोत्साहन के लिए कदम उठा सके।

<u>प्रौद्योगिकी आयात नीति :</u>– देश के निर्यातों को अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा योग्य बनाने के दृष्टिकोण से तथा देश में मजबूत तकनीकी आधार बनाने के दृष्टिकोण से हाल के वर्षों में सरकार ने प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उदार आयात नीति अपनाई है परन्तु इस सन्दर्भ में जोर इस बात पर दिया गया है कि आयात की गयी प्रौद्योगिकी का

भारतीयकरण किया जाय तथा देश की परिस्थितियों के अनुरूप उसे ढ़ाला जाय। तकनीकि में सुधार लाने के दृष्टिकोण से एक तकनीकि विकास खण्ड स्थापित किया गया जिसमें से तकनीक के आयात के लिए ड्राइंग व डिजायनों के लिए तथा विदेशी विशेषज्ञों की सेवायें उपलब्ध कराने के लिए विदेशी मुद्रा दी जाती है।

निर्यात नीति :

भारत सरकार की निर्यात नीति को विमल जालान ने तीन अलग-अलग चरणों में विभाजित किया है :- पहला चरण जो 1973 के तेल संकट तक माना जा सकता है, दूसरा चरण जो 1973 से शुरू होकर लगभग एक दशक तक चालू रहा, तथा तीसरा चरण जो उसके बाद शुरू हुआ। पहले चरण में निर्यात निराशावादी दृष्टिकोण पाया जाता था। राउल प्रैविस, सिंगर तथा रेग्नर, नर्क्से के प्रभाव के कारण सरकारी क्षेत्र में यह माना जाता था कि विकासशील देशों के निर्यातों को विश्व बाजार में बेलोच मांग का सामना करना पड़ता है इसलिए उन्हें बढ़ा पाना सम्भव नहीं है। यह दृष्टिकोण सुरेन्द्र

जे0 पटेल के लेख में स्पष्ट है जो 1959 में प्रकाशित हुआ। मनमोहन सिंह और बैजामिनआई कोहिन ने इसकी आलोचना की। कोहिन ने तर्क दिया कि यद्यपि निर्यात आय कम रखने में वाह्य कारकों ने भूमिका निभाई अवश्य है परन्तु मूल कारक आन्तरिक है। ये आन्तरिक कारक है :- उच्च उत्पादन लागतें, घटिया क्वालिटी, बढ़ती हुई घरेलू मांग तथा निर्यात युक्ति का न होना। कई बार सरकार की निर्यात नीति और घरेलू आर्थिक नीतियों में अन्तरविरोध था। जिसके परिणाम स्वरुप निर्यात प्रोत्साहन के लिए प्रभावकारी कदम नहीं उठाये जा सके। इसके अलावा निर्यात सम्बर्धन के लिए उठाये गये कदम तदर्थ थे और किसी व्यापक नीति का अंग नहीं थे। इसलिए अनिश्चितता का वातावरण सदैव बना रहा और कोई उपयुक्त निर्यात आयोजन नहीं हो सका।

चरण एक को दो अवधियों में विभाजित किया जा सकता है :- (1) 1952 से 1966 तक (2) 1966 से 1973 तक। पहली अवधि में पहली तीन योजनाओं का काल आता है। इस अवधि में निर्यात क्षेत्र की ओर उदासीनता का

रवैया रहा। हालांकि तीसरी योजना में निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ कदम अवश्य उठाये गये। कुछेक वस्तुओं (जैसे कच्चा लोहा) को छोड़ कर इस अवधि में निर्यात कम होने के कारण मुख्यतया घरेलू थे। अर्थात् घरेलू नीतियां इस प्रकार की थी। कि न तो हम परम्परागत निर्यातों में अपने देश के गिरते हुए हिस्से को रोक पाये और न ही गैर परम्परागत निर्यातों में वृद्धि कर पाये। भगवती एवं देसाई के अनुसार इस प्रकार की कुछ अवरोधक घरेलू नीतियां निम्नलिखित थी :-

(1) निर्यात नियंत्रण जो दूसरे विश्व युद्ध के दौरान शुरू किये गये थे और जिन्हें इस अवधि के अधिकतर समय में लागू रखा गया। इस प्रकार के निर्यात नियंत्रण कई प्रमुख विदेशी मुद्रा कमाने वाली वस्तुओं पर लगाये गये थे। जैसे- जूट, चाय, सूती वस्त्र, तिलहन, वनस्पति तेल, रूई, चमड़ा व खालें इत्यादि।

(2) निर्यातों पर शुल्क जिनकी वजह से निर्यातों की कीमत में वृद्धि हुई। और अन्य देशों के साथ प्रतिस्पर्धा करना कठिन हो गया।

(3) बढ़ती हुई घरेलू मांग जिसे कभी-कभी सरकारी नीतियों से और ज्यादा बल मिला।

चरण एक की दूसरी अवधि जून 1966 से शुरू होती है। जब रूपये का स्वर्ण के सापेक्ष 36.5 प्रतिशत अवमूल्यन किया गया। सरकार ने यह आशा व्यक्ति की कि अवमूल्यन से निर्यातों को प्रोत्साहन मिलेगा क्योंकि भारतीय वस्तुएं अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में सस्ती हो जायेंगी। दूसरी ओर आयातों में कमी होगी क्योंकि आयात की जाने वाली वस्तुओं की कीमतें बढ़ जायेंगी। इसके अलावा विदेशी पूंजी आकर्षिक होंगी। निर्यातों की कीमतों को कम करने का काम क्योंकि अब निर्यात रियायतों के स्थान पर अवमूल्यन ने किया था इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि अवमूल्यन के बाद के चरण में निर्यात रियायतों तथा छूट में कमी की जाय या उन्हें समाप्त किया जाय। वास्तव में ऐसा किया भी किया गया। कई अपरम्परागत निर्यातों पर निर्यात प्रोत्साहनों को हटा लिया गया और कुछ परम्परागत निर्यातों पर अवमूल्यन के प्रभाव को समाप्त करने के लिए आनुपातिक निर्यात शुल्क लगा दिये

गये। परन्तु निर्यात आय में वृद्धि न हो पाने के कारण बहुत जल्द ही निर्यात रियायतों व छूटों को पुनः लागू करना पड़ा कुछ अपरम्परागत वस्तुओं पर निर्यात रियायतें 1966 में पुनः लागू कर दी गयी और 1968 तक तो ये रियायते अधिकतर इंजीनियरिंग वस्तुओं, रासायनों, खेल के सामान, कागज के उत्पादों, इस्पात की छीलन, लोहा व इस्पात, सूती वस्त्र तथा कुछ अन्य वस्तुओं को दुबारा उपलब्ध करा दी गयी थी।

चरण दो को 1973 से आरम्भ हुआ माना जा सकता है। यह चरण लगभग एक दशक तक रहा। इस चरण में हांलाकि स्पष्ट रूप से यह कहा नहीं गया फिर भी यह स्वीकार किया गया कि केवल आयात प्रतिस्थापन की नीति से भुगतान से इसकी समस्या का समाधान नहीं हो सकता इसलिए निर्यातों को उच्च प्राथमिकता दी गयी। इसके अतिरिक्त जैसा कि दीपक नैय्यर ने कहा है- 70 के दशक में रूपये की मौद्रिक प्रभावी विनिमय दर में लगातार गिरावट आयी। क्योंकि देश में मुद्रा स्फीति की दर विश्व की तुलना में कम थी। इसलिए रूपये की वास्तविक प्रभावी विनिमय दर में

भी कमी हुई। वास्तव में वास्तविक प्रभावी विनिमय दर 1974 में 107.83 से गिरकर 1979 में 82.66 रह गयी। इसके परिणाम स्वरूप निर्यातों की सापेक्षिक लाभोत्पाकदता में वृद्धि हुई। वस्तुतः आठवें दशक के उत्तरार्द्ध में निर्यातों में वृद्धि बहुत अच्छी रही परन्तु इस प्रवृत्ति को ज्यादा देर बना कर रखा नही जा सका क्योकि निर्यात संवर्धन नीति को एक अलग नीति के रूप में अपनाया गया था और इसे सामान्य आर्थिक नीतियों का अंग नहीं बनाया गया था।

चरण तीन में निर्यात संवर्धन के प्रति अधिक सकारात्मक रवैया अपनाया गया है। एक ओर तो निर्यात उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए कई रियायतें व छूटे प्रदान की गयी तथा दूसरी ओर निर्यात नीतियों को औद्योगिक व विकास नीतियों का ही एक महत्वपूर्ण अंग स्वीकार किया गया।

मुख्य निर्यात प्रोत्साहन नीतिया :

सरकार द्वारा अपनाई गयी मुख्य निर्यात प्रोत्साहन नीतिया (विशेषकर 1991 से पूर्व की नीतिया) निम्नलिखित थी –

नकद मुआवजा सहायता :– निर्यातों के लिए नकद मुआवजा सहायता 1966 में शुरू की गयी। इसका उद्देश्य यह था कि निर्यातक आगतों पर जो कर देते है और जिनकी वापसी शुल्क वापसी की व्यवस्था के अन्तर्गत नहीं हो पाती है। उनके बदले में उन्हें नकद मुआवजा दिया जाय।

शुल्क वापसी की व्यवस्था :– शुल्क वापसी की व्यवस्था के अन्तर्गत निर्यात उत्पादन में इस्तेमाल होने वाले आयातित आगतों व मध्यवर्ती वस्तुओं पर निर्यातकों के द्वारा दिये गये शुल्क को उन्हें वापस कर दिया जाता है। इसी प्रकार घरेलू आगतों पर दिये गये उत्पादन शुल्क भी निर्यातकों को लौटा दिये जाते है। शुल्क वापसी की व्यवस्था के अन्तर्गत 1988–89 में 500 करोड़ रूपये तथा 1989–90 में 600 करोड़ रूपये का मुआवजा दिया गया।

आयात पुनः पूर्ति योजना :– निर्यातकों को निर्यात उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चे माल का आयात करने का सुविधा देने के लिए सरकार ने 1957 में आयात हकदारी योजना की शुरूआत की इस उद्देश्य के लिए

निर्यातकों को उनके द्वारा किये गये निर्यात के अनुपात में आयात लाइसेंस दिये गये। इन आयात लाइसेंसों पर 70 से 80 प्रतिशत प्रीमियम था। 1965-66 तक आई0ई0एस0 भारत के लगभग 80 प्रतिशत निर्यातों को उपलब्ध था। 1966 में रुपये का अवमूल्यन होने के बाद इसे समाप्त कर दिया गया। परन्तु जल्द ही एक नयी योजना के रूप में इसे दोबारा लागू कर दिया गया।

अग्रिम लाइसेंस तथा शुल्क से छूट की घोषणा :

अग्रिम लाइसेंस निर्यातकों को यह सुविधा प्रदान करते है कि ये बिना सीमा शुल्क दिये ही कुछ विशिष्ट कच्चे माल का आयात कर सकते है। इस प्रकार की सुविधा केवल आर्डर होने पर ही प्रदान की जाती है। मध्यवर्ती अग्रिम लाइसेंसिंग स्कीम के अन्तर्गत निर्यात उत्पादकों को मध्यवर्ती वस्तुए उपलब्ध कराने में सहायता दी जाती है।

घरेलू कच्चे माल पर सहायता : इस वर्ग में सबसे महत्वपूर्ण योजना इस्पात के लिए है। इसके अन्तर्गत घरेलू श्रोतों से प्राप्त इस्पात और आयातित इस्पात की कीमतों

में अन्तर के बराबर सहायता दी जाती है। इसका उद्देश्य यह है कि घरेलू साधनों से कच्चा माल खरीदने पर आयातों की अपेक्षा नुकसान न हो।

निर्यातों के लिए राजकोषीय रियायतें :- निर्यातों को दो प्रकार की राजनैतिक रियायतें दी जाती है- एक तो वह है जो अप्रत्यक्ष करों से सम्बद्ध है, तथा दूसरी वह है जो प्रत्यक्ष करों से सम्बद्ध है। जहाँ तक अप्रत्यक्ष करों से सम्बद्ध राजकोषीय रियायतों का सम्बन्ध है ये रियायतें शुल्क वापसी की व्यवस्था तथा नकद मुआवजा सहायता के रूप में दी जाती है। दूसरी प्रकार की रियायतें वह है जो प्रत्यक्ष करों से सम्बद्ध है। उदाहरण के लिए निर्यातों से होने वाली आय के कुछ अंश पर या तो आय कर लगाया ही नहीं जाता या फिर निर्यात से आय पर आयकर की दरें कम रखी जाती है। आय कर से इस प्रकार की छूट किसी न किसी रूप में बहुत समय से दी जाती रही है।

निर्यात साख और निर्यात सम्बर्धन परिषदों को सहायता :- नवें दशक के आरम्भि वर्षो में बाजार विकास

सहायता का लगभग 90 या 95 प्रतिशत नकद मुआवजा सहायता के रूप में प्रदान किया जाता था।

<u>ब्लैकट विनिमय परमिट योजना :-</u> ब्लैकट विनिमय परमिट योजना की घोषणा जून 1987 में की गयी। इस योजना का उद्देश्य देश के निर्यात सम्बर्धन प्रयासों को तेज गति प्रदान करना था।

<u>निर्यात सम्बर्धन के लिए संगठनात्मक संरचना :-</u> स्वतन्त्रता के बाद निर्यातों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कई परिषदों व संगठन स्थापित किये गये है इनमें मुख्य है - (1) निर्यात सम्बर्धन परिषदें (2) वस्तु बोर्ड (3) कृषि और संशोधित खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (4) निर्यात गृह (5) व्यापार की केन्द्रीय सलाहकार परिषद (6) भारतीय निर्यात संगठन संघ (7) भारतीय पैकिंग संस्थान (8) भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान।

नब्बे के दशक में व्यापार नीति में परिवर्तन :

पिछले कुछ वर्षों में व्यापार नीति के उदारीकरण के लिए कई कदम उठाये गये है। मुख्य कदम निम्नलिखित है-

रूपये की आंशिक परिवर्तनीयता :- 1992-93 के बजट में वित्त मंत्री ने उदारीकृत विनिमय दर प्रबन्ध प्रणाली की घोषणा की। इस प्रणाली में रूपये की आंशिक परिवर्तनीयता की व्यवस्था थी। इसके अन्तर्गत दोहरी विनियम दर लागू की गयी। जिसमें यह व्यवस्था थी कि कुल अर्जित विदेशी विनिमय आय का 40 प्रतिशत सरकारी विनिमय आय दर पर सरकार को देना होगा और बाकी का 60 प्रतिशत बाजार द्वारा निर्धारित दर पर परिवर्तित किया जायेगा। सरकारी दर पर दी गयी विदेशी मुद्रा का प्रयोग आवश्यक वस्तुओं जैसे तेल, पेट्रोलियम उत्पादन, उर्वरक, जीवनरक्षक दवाईयों इत्यादि के आयात के लिए किया जायेगा।

चालू खाते पर पूर्ण परिवर्तनीयता :- भारत ने चालू खाते पर पूर्ण परिवर्तनीयता की स्थिति 19 अगस्त 1994 को प्राप्त की और 20 अगस्त 1994 को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुच्छेद viii का दर्जा प्राप्त किया। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुच्छेद के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि चालू खाते पर पूर्ण परिवर्तनीयता प्राप्त करने वाले देशों को 1. चालू

भुगतानों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाना चाहिए। 2. भेद मूलक व्यवहार से बचना चाहिए।

चालू खाते पर परिवर्तनीयता को निम्नलिखित अन्तर्राष्ट्रीय लेन–देन के लिए विदेशी मुद्रा खरीदने अथवा बेचने की स्वतंत्रता के रूप में परिभाषित किया गया है। 1. विदेशी व्यापार चालू व्यवसायों व सेवाओं तथा अल्पकालीन बैंकिंग व ऋण सुविधाओं से जुड़े सभी भुगतान। 2. ऋणों पर ब्याज तथा अन्य निवेशों से निवल आय के रूप में देय भुगतान। 3. ऋणों को चुकाने अथवा प्रत्यक्ष निवेशों के मूल्य ह्रास के लिए मामूली राशि का भुगतान। 4. परिवारों के निर्वाह का खर्च पूरा करने के लिए मामूली प्रेषणाय।

वर्ष 1994–95 के बजट में वित्त मंत्री ने कहा था कि ''चालू खाते पर परिवर्तनीयता की ओर अब अगला कदम उठाने का वक्त आ गया है।'' बजट में की गयी इस घोषणा के अनुसरण में भारतीय रिजर्व बैंक ने 28 फरवरी 1994 को ही विदेशी विनिमय नियंत्रणों का एक निर्दिष्ट सीमा तक उदारीकरण कर दिया। निर्दिष्ट सीमा तक यह

उदारीकरण निम्नलिखित क्षेत्रों में किया गया। 1. मुद्रा अर्जक विदेशी मुद्रा खाता। 2. बुनियादी यात्रा कोटा। 3. विदेशों में अध्ययन। 4. उपहार प्रेषणाय। 5. दान। 6. विदेशी पक्षों द्वारा प्रदान की गयी विशिष्ट सेवाओं का भुगतान।

19 अगस्त 1994 को रिजर्व बैंक ने परिवर्तनीयता की दिशा में और कदम उठाये जब चालू खातों पर भुगतान पर छूट व रियायतें दी गयी। कुछ ऐसे अनिवाशी खातों पर ब्याज को अन्य देशों में ले जाने की छूट दी गयी। जिन पर पहले यह सुविधा उपलब्ध नहीं थी तथा अनिवाशियों द्वारा निवेश आय को तीन वर्ष की अवधि में चरणबद्ध रूप से प्रत्यावर्तनीय करने की सुविधा दी गयी। 1995-96, 1996-97 तथा 1997-98 में पूर्ण परिवर्तनीयता की दिशा में और कदम उठाते हुए विदेशी विनिमय नियंत्रणों और ढील दी गयी। उदाहरण के लिए विदेश भ्रमण के लिए विदेशी विनिमय की सीमा को बढ़ाया गया। अन्य देशों में पढ़ाई के लिए, चिकित्सा के लिए, उपहार या अनुदान के लिए तथा

अन्य देशों में जाकर काम करने के लिए विदेशी विनिमय के उपलब्धि को और आसान बना दिया गया।

मार्च 1993 में बाजार द्वारा निर्धारित एक विनिमय दर अपनाने के बाद से लगभग दो वर्ष तक रूपये में अच्छी स्थिरता दिखाई और लगभग 1 डालर बराबर 31.4 रूपये के आस पास रही। यह स्थिति अगस्त 1995 तक बनी रही। परन्तु उसके बाद रूपये का मूलय ह्रास फिर शुरू हो गया। फरवरी 1996 में विनिमय दर गिर कर 1 डालर बराबर 36.6 रूपये तक पहुंच गयी। रिजर्व बैंक के प्रभावी हस्तक्षेप से स्थिरता दोबारा लायी गयी और रूपये की कीमत अप्रैल 1996 में बढ़कर 1 डालर बराबर 34.2 रूपये हो गयी। लगभग 18 महीनें तक विदेशी विनिमय बाजार में स्थिरता की स्थिति बने रहने के बाद अगस्त 1997 में भारतीय रूपये ने पूर्वी एशिया में मुद्रा संकट से उत्पन्न प्रभाव का अनुभव किया। नवम्बर 1997 से रूपये पर दबाव बढ़ गया और जनवरी 16, 1998 तक आते-आते रूपये का मूल्य गिरकर 1 डालर बराबर 40.36 रूपये हो गया। परन्तु उसके बाद

रूपये ने मजबूती दिखाई और उसका विनिमय मूल्य मार्च 10, 1998 को 1 डालर बराबर 39.49 रूपये हो गया। सितम्बर 1998 से मार्च 1999 के अन्त तक लगभग स्थिरता की स्थिति बनी रही परन्तु अप्रैल 1999 से राजनैतिक परिवर्तनों से तथा कारगिल युद्ध से जनित अस्थिरता के कारण विनिमय दर पर असर पड़ा। अप्रैल 6, 1999 को डालर के सापेक्ष रूपये की विनिमय दर 1 डालर बराबर 42.51 रूपये थी। जो सितम्बर 1999 के अन्त तक गिरकर 1 डालर बराबर 43.60 रूपये तक पहुंच गयी परन्तु वह अक्टूबर 1999 के बाद से रूपये की विनिमय दर में फिर स्थिरता आयी। जनवरी 2000 के अन्त तक डालर के सापेक्ष रूपये की विनिमय दर 1 डालर बराबर 43.64 रूपये हो गयी।

सांकेतिक प्रभावी विनिमय दर जो कि मुख्य व्यापार सहभागियों की मुद्राओं की तुलना में विनिमय दरों का भारी औसत है ने 1993-94 से 1998-99 के बीच 23.7 प्रतिशत मूल्य ह्रास दर्शाया है। एन0ई0ई0आर0 का पांच देशों

का सूचकांक जिसका आधार 1995 बराबर 100 है, 1993-94 में 110.21 था जो 1998-99 में 84.04 रह गया। परन्तु भारत में मुद्रा स्फीति की दर विकसित देशों की तुलना में अधिक होने के कारण वास्तविक प्रभावी विनिमय दर में 1993-94 से 1997-98 के बीच 10.01 प्रतिशत की वृद्धि हुई। (एन0ई0ई0आर0 का पांच देशों का सूचकांक जिसका आधार 1995 बराबर 100 है, 1993-94 में 95.51 था जो 1997-98 में 105.19 हो गया) इसके परिणाम स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में भारत की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। मई 1998 में आर0ई0ई0आर0 103.31 था और उसके बाद उसमें गिरावट होने लगी। दिसम्बर 1998 में यह कम होकर 98.84 रह गया। 1999-2000 के प्रथम 9 महीनों में एन0ई0ई0आर0 और आर0ई0ई0आर0 ने सापेक्षिक रूप से स्थायित्व रहा। अप्रैल 1999 में एन0ई0ई0आर0 82.97 तथा दिसम्बर 1999 में 80.29 था। अप्रैल 1999 में आर0ई0ई0आर0 101.30 तथा दिसम्बर 1999 में 98.55 था। (आधार 1995 बराबर 100)।

नकद मुआवजा सहायता की समाप्ति :

व्यापार नीति में व्यापक उदारतावाद तथा रूपये के अवमूल्यन को देखते हुए सरकार ने तर्क दिया कि अब नकद मुआवजा सहायता की आवश्यकता नहीं रही। इसलिए 3 जुलाई, 1991 से इसे समाप्त कर दिया गया।

आयात कार्य प्रणाली का सरलीकरण :

भारतीय व्यापार नीति काफी लम्बे समय तक कई प्रशासनिक नियंत्रणों तथा लाइसेंस का जमघट रहा है। पंचवर्षीय आयात-निर्यात नीति 1992-97 में आयात कार्य प्रणाली को सरल बनाने का एक बड़ा प्रयत्न किया गया है। अब केवल दो प्रकार के आयात लाइसेंस रखे गये है। ये है अग्रिम लाइसेंस तथा विशेष आयात लाइसेंस। अन्य सभी आयात लाइसेंसों को समाप्त कर दिया गया है।

आसान आयात व निर्यात :

जुलाई 1991 की व्यापार नीति में अग्रिम लाइसेंसों की प्रणाली को और मजबूत बनाया गया। क्योंकि

इस प्रणाली के जरिये निर्यातकों को अपने जरूरत के आगत बिना सीमा शुल्क दिये मंगाने की अनुमति थी। पूंजीगत वस्तुओं के आयातों की कार्यप्रणाली को भी सरल बनाया गया। नई इकाईयों और विस्तार अधीन इकाईयों को पूंजीगत वस्तुओं के आयातों के लिए लाइसेंस प्रदान करने की व्यवस्था रखी गयी चाहे ये वस्तुयें घरेलू बाजार में उपलब्ध हो तो भी। शर्त केवल यह थी कि आयात आवश्यकता प्लान्ट व मशीनरी की कीमत का ज्यादा से ज्यादा 25 प्रतिशत तक (और अधिकतम 2 करोड़ रूपये तक) हो सकती है। 1992–97 की आयात निर्यात नीति में कुछेक वस्तुओं को छोड़ कर सभी वस्तुओं के आयात की अनुमति दी गयी। जिन वस्तुओं का आयात नहीं किया जा सकता उन्हें एक नाकारात्मक सूची में रखा गया। इस नाकारात्मक सूची को लगातार कम किया जा रहा है। उदाहरण के लिए सरकार ने 21 अगस्त 1996 को 40 मदों को इस सूची में हटा दिया तथा 14 मदों को विशेष आयात लाइसेंसों की सूची में हस्तान्तरित कर दिया। सितम्बर 1996 तथा फरवरी 1997 में जारी विज्ञप्ति में कुछ और

मदों को प्रतिबन्धित सूची से हटा लिया गया। अर्थात् उनके आयात की अनुमति दी गयी।

<u>केवल सरकार एजेन्सियों के माध्यम से व्यापार करने की शर्त को हटाया जाना :</u>

भारत ने कई वस्तुओं का आयात व निर्यात केवल सरकारी एजेन्सियों के माध्यम से किया जा सकता था। 13 अगस्त 1991 को घोषित अनुपूरक व्यापार नीति में इस सूची का विवेचन किया गया और 16 निर्यात मदों तथा 20 आयात मदों को इस सूची से मुक्त कर दिया गया।

1992-97 की नीति में डी0 सेण्ट्रलाइजेशन का और विस्तार किया गया। उदाहरण के लिए अखबारी कागज, अलौह धातुओं, प्राकृतिक रबड़, मध्यवर्ती वस्तुओं और उर्वरक उद्योग के कच्चे माल जैसे कई वसतुओं को डीकैनलाइज्ड कर दिया गया है। परन्तु 8 मदों पर कैनेलाइजेशन की शर्त लागू रहेगी। अर्थात् इनका आयात केवल सरकारी एजेन्सियों के माध्यम से ही किया जा सेगा। इन मदों में पेट्रोलियम उत्पाद, उर्वरक, खाद्य तेल, अनाज इत्यादि शामिल है।

शुल्क से छूट की योजना का विस्तार :

शुल्क से छूट की योजना का विस्तार किया गया है। मात्रा के अतिरिक्त लाइसेंसों के साथ अब मूल्य आधारित अग्रिम लाइसेंसों को भी शुरू किया गया है जिसका लाभ यह होगा कि अब कुछ मूल्य सीमाओं के अन्तर्गत तथा बिना मात्रात्मक प्रतिबन्धों के निर्यातकों को वस्तुओं का आयात निर्यात करने की छूट होगी।

निर्यात उन्मुख इकाईयों तथा निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्र को और सुविधायें :

1992-97 की नीति में 100 प्रतिशत निर्यात उन्मुख इकाईयों तथा निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्र की इकाईयों को घरेलू प्रशुल्क क्षेत्र से निर्यात करने वाली इकाइयों की तुलना में अधिक सुविधायें व रियायते दी गयी है। अब इन योजनाओं की नई गतिविधियों तक विस्तार किया गया है। जिनमें बागवानी, मछली पालन, मुर्गी पालन तथा पशुपालन और कई सम्बन्धित गतिविधिया व सेवायें शामिल है।

निर्यात गृहों और व्यापार गृहों को और सुविधायें :

1991 की नीति में निर्यात गृहों व्यापार गृहों तथा स्टार व्यापार गृहों को कई मदों के आयात की अनुमति दी गयी है। सरकार ने निर्यात को प्रोत्साहित करने की दृष्टिकोण से 51 प्रतिशत विदेशी इक्विटी के साथ व्यापार गृहों की स्थापना की अनुमति दी। इन व्यापार गृहों को घरेलू व्यापार गृहों को उपलब्ध सभी लाभों व रियायतों का आश्वासन दिया गया है।

1994-95 की नीति में सुपर स्टार व्यापार गृहों का एक नया वर्ग शुरू किया गया। जो निर्यातक पिछले तीन वर्षो में लगातार 750 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष का निर्यात करने में या फिर पिछले वर्ष 1000 करोड़ रूपये का निर्यात करने में सफल हुए, उन्हें सुपर स्टार व्यापार गृहों के वर्ग में रखा गया। 1997-2002 की आयात-निर्यात नीति में इन सीमाओं को बढ़ा कर क्रमशः 1500 करोड़ रूपये कर दिया गया। सुपर स्टार व्यापार गृहों को अतिरिक्त आयात लाइसेंस दिये जाएंगे, महत्वपूर्ण व्यापार प्रतिनिध मंछडलों में शामिल

किया जाएगा तथा व्यापार नीति व निर्यात प्रोत्साहन नीति बनाते समय विचार विमर्श के लिए आमंत्रित किया जायेगा।

सेवा क्षेत्र के लिए निर्यात संवर्द्धन योजना :

सेवा कें के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए एक नई योजना सेवा क्षेत्र के लिए निर्यात संवर्द्धन वसतु योजना शुरू की गई है। इस योजना के तहत व्यवसायिक सेवाएं प्रदान करने वाले व्यक्तियों को 15 प्रतिशत की रियायती शुल्क दर पर जूंजी उपकरणों के आयात की सुविधा दी गयी है। पश्रनतु यह सुविधा प्राप्त करने के लिए उनहें विदेशी मुद्रा कमानी होगी।

पूंजीगत वस्तु निर्यात प्रोत्साहन योजना :

1995-96 की नीति में सेवा क्षेत्र को पूंजीगत वस्तु निर्यात प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत वस्तुओं की आपूर्ति के समकक्ष कर दिया गया। इससे वित्तीय सेवाओं में लगी कंपनियों, बैंकों, होटल व हवाई सेवाओं, विज्ञापन सेवाओं,

कानूनी सेवाओं इत्यादि में लगी विभिन्न कंपनियों को बहुत लाभ होगा।

पूंजीगत वस्तु निर्यात प्रोत्साहन योजना को सरल कर दिया गया था। पहले निर्यात बाधता के साथ 15 और 25 प्रतिशत की दरें प्रशुल्क दरें थी। अब निर्यात–बाध्यता के साथ 15 प्रतिशत को केवल एक दर रखी गयी है। 1994–95 की नीति में यह सुविधा भी दी जा गई कि निर्यात–बाध्यता का अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए, कोई भी इकाई अन्य इकाइयों से माल खरीद का भी उसका निर्यात कर सकती है। 19965–96 की नीति में पूंजीगत वस्तु निर्यात प्रोत्साहन योजना का लाभ व्यापारी निर्यातकों तथा सेवाएं प्रदान करने वालों को भी देने की व्यवस्था की गई।

सीमा शुल्कों में भारी कटौती :

जनवरी 1993 में पेश की गई अपनी पिोर्ट में चेलाय्या समिति ने आयात शुल्कों में भारी कटौती की सिफारिश की थी। समिति के अनुसार, अस्सी के दशक और नब्बे के दशक के आरम्भिक वर्षो में रुपए के मूल्य में तेज

गिरावट हुई थी। समिति के अनुसार, अस्सी के दशक औरनब्बे के दशक के आरम्भिक वर्षो में रूपये के मूल्य में तेज गिरावट हुई थी जिससे भारतीय उद्योगों के लिए विदेशी प्रतियोगिता से संरक्षण काफी बढ़ गया था। उदाहरण के लिए, समिति ने अनुमान लगाया कि 1985-86 से 1992-93 के बीच की सात वर्षीय अवधि में रूपये की वास्तविक विनिमय दर में 57.45 प्रतिशत की गिरावट आई। इससे आयात काफी महंगक हो गए जिससे भारतीय उद्योगों के संरक्षण का स्तर काफी बढ़ गया। इसलिए समिति ने सुझाव दिया कि विद्यमान आयात शुल्कों को कम किया जाए और 1997-98 तक इतना कम कर दिया जाए कि उत्पादों की घरेलू कीमतों तथा अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में समानता लाई जा सके। समिति की सिफारिशें पर काय्रवाही करते हुए वित्त मंत्री ने आयात शुल्कों में भारी कटौती की। 1993-94 के बजट में कुछेक वस्तुओं को छोड़कर शुल्क की अधिकतम दर 110 प्रतिशत से कम करके 85 प्रतिशत कर दी गयी। 1994-95 के बजट में इसे कम करके 65 प्रतिशत और 1995-96 के बजट में 50 प्रतिशत कर दिया गया। 1997-98 के बजट में अधिकतम

आयात शुल्क की दर को और कम करके 40 प्रतिशत कर दिया गया। 2000-01 के बजट में अधिकतम आयात शुल की दर को और कम करके 35 प्रतिशत कर दिया गया परन्तु उस पर 10 प्रतिशत अधिभार लगाया गया।

आयात निर्यात नीति, 1997-2002 :

सरकार ने नौवीं योजना की अवधि के लिए 31 मार्च 1997 को नई आयात-निर्यात नीति की घोषणा की। इस नीति के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है-

(1) बढ़ते हुए विश्व बाजार से लाभ उठाने के लिए देश की अर्थव्यवस्था में आवश्यक परिवव्रन व गत्यात्मकता लाना।

(2) आवश्यक कच्चा माल, मध्यवत वस्तुओं, कलपुर्जो, उपभोग व पूंजीगत वस्तुओं की उपलब्धि निश्चित करना ताकि उत्पादन को बढ़ाकर आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया को और तेज किया जा सके।

(3) भारतीय कृषि, ड़ोग व सेवाओं की तकनीकी क्षमता व दक्षता में वृद्धि लाकर उनकी प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति में वृद्धि

लाना, नए रोजगार अवसर पैदा करना तथा विश्वमान्य क्वालिटी उत्पादों का उत्पादन प्रोत्साहित करना।

(4) उपभोक्ताओं को उचित कीमतों पर अच्छी किस्म की वस्तुएं उपलब्ध कराना।

इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इस नीति में जो कदम उठाये गये है उनके कुछ महत्वपूर्ण कदम निम्नलिखित है।

(1) प्रतिबंधित सूची को की कम कर दिया गया सरकार ने 542 मदों के आयात को प्रतिबन्धों से मुक्त कर दिया जिसमे 150 ऐसी मदें है जिनका आयात अब विशेष आयात लाइसेंसों के माध्यम से करने की अनुमति दी गयी। 60 मदों को विशेष आयात लाइसेंसों की श्रेणी से हटा कर खुले सामान्य लाइसेंस के वर्ग में रखा गया। 5 मदों पर पर्यावरण सुरक्षा, देश की सुरक्षा व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए प्रतिबन्ध लगाए गए।

(2) पूंजीगत वस्तुओं की निर्यात प्रोत्साहन योजना में संशोधन किए गये । पूंजीगत वस्तुओं पर आयात शुल्क 15 प्रतिशत से कम करके 10 प्रतिशत कर दिया गा। इस योजना के अधीन 20 करोड़ रूपये या उससे अधिक के आयातों को बिना शुल्क दिए मंगवाने की अनुमति दी गयी परन्तु कुछ निर्यात-बाह्यता की शर्तें रखी गयी। कृषि व संबद्ध क्षेत्रों के निर्यातों के लिए पूंजीगत वस्तुओं को 5 करोड़ रूपये तक बिना आयात शुल्क दिए मंगवाने की सुविधा प्रदान की गयी। इससे आशा है कि कृषि क्षेत्र के निर्यातों को प्रोत्साहन मिलेगा। इस योजना के अधीन सेवा-उद्योग जैसे अस्पताल, वायुयान द्वारा माल ढुलाई, होटल व अन्य पर्यटन संबंधित सेवाओं को भी शून्य शुल्क का लाभ दिया गया।

(3) वैल्यु बेस्ड एडवांस लाइसेंस तथा पुरानी पास बुक योनाओं के स्थान पर एक नई ड्यूटी इन्टाइटलमैंट पास बुक योजना शुरू की गई जिसमें इन दोनों योजनाओं के अच्छे तत्वों का समावेश था और जिसे लागू करना प्रशासनिक रूप से अधिक आसान था।

(4) कृषि व संबद्ध क्षेत्रों में काम कर रही निर्यात उन्मुख इकाइयों तथा निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्रों के लिए घरेलू बिक्री की अनिवार्य शर्तों में ढील दी गयी। इन कइकाइयों को यह छूट दी गयी कि वे घरेलू प्रशुल्क क्षेत्र में अपने उत्पादन का 50 प्रतिशत तक बेच सकती है।

(5) स्वर्ण आभूषण व जवाहरात के निर्यातों को प्रोत्साहित करने के दृष्टिकोण से नई नीति में उन एजेंसियों की संख्या में वृद्धि की गई जे स्वर्ण के भण्डार रख सकती है। एजेन्सियों की संख्या में वृद्धि होने से निर्यातकों को स्वर्ण की आपूर्ति ज्यादा आसानी से और अधिक मात्रा में हो सकेगी जिससे आभूषण निर्माण में कोई व्यवधान नहीं होगा।

(6) नई नीति के सौफ्टवेयर व हार्ड वेयर निर्यातों को प्रोत्साहन देने के लिए कदम उठाये गए है। इलेक्ट्रानिक हार्डवेयर उत्पादक अब केवल 50 प्रतिशत उत्पादन का निर्यात कर सकते है और 5 प्रतिशत उत्पादन की घरेलू प्रशुल्क क्षेत्र में बिक्री कर सकते हैं।

(7) इस बात को ध्यान में रखते हुए कि नियमों और कार्यप्रणाली को सरल बनाने की आवश्यकता है, नई नीति में कार्यप्रणाली को पारदर्शी और कम विवेकाधीन बनाने के प्रयास किए गये। उदाहरण के लिए एडवांस लाइसेंस के अधीन निर्यात बाध्यता और लाइसेंस की वेधता की अवधि 12 महीने से बढ़ाकर 18 महीने कर दी गयी।

आयात-निर्यात नीति में संशोधन :

आयात निर्यात नीति, 1997-2002 में अप्रैल 13, 1998, मार्च 31, 1999 तथा मार्च 31, 2000 को कुछ संशोधन किये गये। संशोधित नीति की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित है :

1. विश्व व्यापार संगठन की विवाद निपटाना व्यवस्था के अधीन भारत में नवम्बर 1997 में 2714 आयत शुल्क श्रृखलाओं पर से 6 वर्ष के अन्दर-अन्दर सभी मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने का वायदा किया। परन्तु अमेरीका को यह बात स्वीकार्य नहीं थी और उसने भारत के विरूद्ध विश्व व्यापार संगठन में शिकायत दर्ज की। विश्व

व्यापार संगठन ने भारत के विरूद्ध फैसला दिया जिसके परिणामस्वरूप भारत को अमेरीका के साथ द्विपक्षी समझौता करना पड़ा जिसके तहत अब भारत को अप्रैल 1, 2001 तक सभी मात्रात्मक प्रतिबन्धों को समाप्त करना है। मार्च 31, 2000 से पूर्व 1429 मदों पर आयात प्रतिबंध थे। इस दिन घोषित संशोधित निर्यात आयात नीति घरेलू मदों पर से आयात नियंत्रण हटा लिए गए। इस प्रकार अब केवल 715 मदों पर आयात प्रतिबन्ध रह गये है। इन्हें भी अप्रैल 1,2001 से पहले पहले हटाना होगा।

2. मार्च 31, 1999 को किए गए संशोधनों के अधीन, आयात-निर्यात नीति में एक नया अध्याय जोड़ा गया जिसमें सेवाओं के निर्यात के महत्व को तथा इसकी संभावनाओं को स्वीकार किया गया। सेवा क्षेत्र को सबसे महत्वपूर्ण रियायत यह दी गयी कि सेवा प्रदान करने वालों के लिए निर्यात गृह का दर्जा प्राप्त करने की न्यूनतम सीमा, वस्तु निर्यातकों के लिए निश्चित न्यूनतम सीमा की एक तिहाई रखी गई। इसके अलावा सेवाओं का निर्यात करने वालों को

यह भी सुविधा दी गई कि वे पिछले वर्ष में उनके द्वारा कमाई गई विदेशी मुद्रा के 10 प्रतिशत मूल्य तक प्रतिबंधित आयात वस्तुओं का भी आयात कर सकते हैं।

3. निर्यातकों द्वारा की गई राष्ट्र सेवा के बदले मार्च 1999 की संशोधित नीति में उन्हें प्रोत्साहित करने की एक योजना की घोषणा की गई। इसके तहत जो निर्यातक अपने कुल उत्पादन का 50 प्रतिशत निर्यात करते है उन्हें ग्रीन कार्ड दिये जाएंगे। ग्रीन कार्ड धारकों को कई सुविधाओं का प्रावधान है। इसी प्रकार, जिन निर्यातकों ने लगातार तीन अवधियों तक निर्यात गृह/व्यापार गृह/स्टार व्यापार गृह/सुपर स्टार व्यापार गृह का दर्जा प्रापत किया है उन्हें गोल्ड स्टेट्स सर्टिफिकेट दिये जाएंगे। इन सर्टिफिकेट धारकों को हमेशा के लिए सभी लाभ व रियायतें उपलब्ध होंगी जो यह दर्जा प्रापत निर्यातकों को होती है चाहे उनका निर्या-प्रदर्शन बाद के वर्षो में उतना अच्छा न भी रह पाए।

4. 1997-2002 की आयात-निर्यात नीति में मार्च 31, 1999 को किए गए संशोधन में कहा गया कि

जुलाई 1,999 से सभी निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्रों को मुक्त व्यापार क्षेत्रों में बदल दियाजाएगा। परन्तु इस नीति को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। मार्च 31, 2000 को घोषित नीति संशोधनों में अब चीन के उदाहरण को सामने रखते हुए विशेष आर्थिक क्षेत्रों स्थापित करने का सुझाव है। ये SEZ देश में अलग अलग स्थानों पर स्थापित किए जाएंगे। इन क्षेत्रों में कार्यरत उत्पादन इकाइयों को काम करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी तथा उनकी गतिविधियों में किसी भी प्रकार कोई सरकारी हस्तक्षेप नहीं होगा SEZs में स्थापित औद्योगिक इकाइयों को उत्पादन के लिए बिना आयात शुल्क दिये पूंजीगत वस्तुओं व कच्चे माल को आयात करने की छूट होगी और ये इकाइयां देश के भीतर घरेलू टैरिफ क्षेत्र से भी बिना उत्पादन शुल्क दिए इन वस्तुओं की खरीद सकेंगी। शर्त केवल यह होगी कि SEZs में स्थापित औद्योगिक इकाइयों को अपने पूरे उत्पादन का निर्यात करना होगा। देश के प्रथम दो SEZ गुजरात में पिपावव तथा तमिलनाडु में टूटीकोरिन में स्थापित किए जाएंगे। SEZs के लिए न्यूनतम आवश्यक क्षेत्र

400-500 हैक्टर के बीच होगा। परन्तु विद्यमान सभी निर्यात प्रोसैसिंग क्षेत्रों को SEZs में बदला जाएगा चाहे वे इस न्यूनतम क्षेत्र की शर्त को पूरा करते हो अथवा नहीं।

5. निर्यातकों और सरकारी अधिकारियों के बीच विवादों का निपटारा करने के लिए एक मध्यस्थ संस्था बनाने का विचार है। यह संस्था विवादों का तुरन्त निपटारा करेगी। इस प्रकार की पहली संस्था मुम्बई में स्थापित की जाएगी। सरकार को विवादों पर किए गए फैसले को तुरन्त स्वीकार करना होगा हांलाकि बाद में वह इसके खिलाफ अपील कर सकती है।

6. मार्च 31, 2000 को घोषित संशोधित निर्यात आयात नीति में निर्यात प्रयासों में राज्य सरकारों की भूमिका को और बढ़ाने की बात की गई है। इस उद्देश्य के लिए उन्हें आवश्यक निर्यात आधारिक संरचना का निर्माण करने के लिए250 करोड़ रुपये देने का प्रावधान किया गया है।

7. विशेष आयात लाइसेंसों को समाप्त कर दिया गया है क्योंकि मार्च 31, 2001 के बाद से कोई विशेष आयात लाइसेंस सूची नहीं होगी।

8. विश्व व्यापार संगठन को किये गये वायदे के मुताबिक कि भारत निर्यात प्रोत्साहन योजनाओं को चरणबद्ध तरीके से समाप्त कर देगा। वाणिज्य मंत्री ने मार्च 31, 2000 को जारी संशोधित निर्यात आयात नीति में घोषणा की कि 2000 तक ड्यूटी इन्टाइटलमेन्ट पास बुक स्कीम को समाप्त कर दिया जायेगा।

9. सरकार ने पुरानी पूंजीगत वस्तुओं के आयात की अनुमति दे दी है। शर्त यह है कि आयातित पूंजीगत वस्तु 10 वर्ष से ज्यादा पुरानी नहीं होनी चाहिए। इस आयात सुविधा से भारत के पूंजीगत वस्तु उद्योग पर बुरा प्रभाव पड़ने की आशंका है।

10. भारत से परियोजना को निर्यातों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से यह व्यवस्था की गयी है कि जिन परियोजना निर्यातकों, निर्माण क्षेत्र में लगी कम्पनियों व सेवा

दायित्वों का कुल घरेलू व्यवसाय 100 करोड़ रूपये से अधिक है वे इण्टरनेशनल सर्विस हाउस स्टेटस के लिए आवेदन कर सकते है। आवेदनकर्ताओं को अगले 3 वर्षों तक प्रतिवर्ष 15 करोड़ रूपये के परियोजना निर्यात करने होंगे। इसके बदले इन निर्यातकों को कई सुविधायें प्रदान की जायेंगी। जैसे– आवश्यक आयात वस्तुओं की जल्दी उपलब्धि होगी और लाइसेंसिंग की व्यवस्था इत्यादि।

भारतीय व्यापार नीतियों का मूल्यांकन :

आयात नीति :

जगदीश भगवती एवं पद्मा देसाई के अनुसार भारतीय आयात नीति के निम्नलिखित दुष्प्रभाव पड़ें है – 1. विलम्ब, 2.प्रसाशनिक, 3. बेलोचपन, 4. प्रतिस्पर्धा न होना, 5. विभिन्न एजेंसियों के बीच समन्वय न होना, 6. बिना लागतों पर ध्यान दिये उद्योगों को संरक्षण देने की व्यवस्था, 7. निर्यातों की अनदेखी, 8. राजस्व की हानि।

भगवती व देसाई के अनुसार विलम्ब के मुख्य कारण तीन है– 1. विदेशी मुद्रा की कमी के कारण प्राथमिकताओं का पता लगाना मुश्किल हो जाता है। इसलिए न्यायोचित आधार पर विभिन्न लोगों की मांग को पूरा करने का प्रयास किया जाता है। 2. बहुत बड़ा नौकरशाही तथा प्रशासनिक तंत्र जिसकी वहज से समय का बहुत अपव्यय होता है। 3. सभी स्तरों पर व्यापक भ्रष्टाचार जो जगह–जगह पर फाइलों पर निर्णय लेने में अड़चने खड़ी करता है।

क्योंकि जिन वस्तुओं के आयात की अनुमति है उनकी एक कठोर व अपरिवर्तनीय सूची बनाई गयी थी। इसलिए आयातों के प्रयोग के ढांचे में बेलोचपन आ गया न केवल विभिन्न उद्योगों के प्रति लाइसेंसों के हस्तान्तरण पर रो कथी अपितु एक ही उद्योग में विभिन्न इकाइयों के बीच लाइसेंसो के हस्तान्तरण पर भी रोक थी। जिसके परिणाम स्वरूप आयात लाइसेसों के क्षेत्र में बहुत बड़ा काला बाजार बन गया। आयातों के बारे में निर्णय लेने वाली विभिन्न एजेन्सियों के बीच समन्वय नहीं था। इसलिए कई अड़चने पैदा

हुई और आवेदकों को वांछित आयात करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

भगवती तथा देसाई के अनुसार आयात लाइसेंसों के वितरण में निष्पक्षता लाने के प्रयास में इनका आवंटन स्थापित क्षमता के आधार पर किया जाता था। इसका परिणाम यह हुआ कि कई उत्पादक वास्तविक आवश्यकता से कहीं अधिक स्थापित क्षमता का निर्माण करने लगे। फलस्वरूप स्थापित क्षमता के अल्प प्रयोग की समस्या पैदा हो गयी। भारतीय आयात नीति में लागत दक्षता तथा तुलनात्मक लाभ का ध्यान दिये बिना ही सभी को अंधाधुंध संरक्षण प्रदान किया गया। 1964 के अन्त तक आयात नीति का झुकाव घरेलू उत्पादन को बढ़ाने पर केन्द्रित था। इसलिए विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात के प्रति अनुकूल नहीं था। क्योंकि आयात-नियंत्रण नीति के द्वारा दुर्लभ आयातों पर होने वाले लाभ निजी क्षेत्र को प्रापत होते थे, इलिए इससे सरकार को राजस्व की हानि हुई।

आयात प्रतिस्थापन की नीति :

जेसा कि पहले कहा जा चुका है, भारत में आयात प्रतिस्थापन नीति का उद्देश्य न केवल विदेशी मुद्रा की बचत करना था अपितु अर्थव्यवस्था की संरचना में दीर्घगामी परिवर्तन लाना भी था। यह नीति इन उद्देश्यों को प्राप्त करने में काफी हद तक सफल रही है। परन्तु कुछ अर्शिशास्त्रियों का तर्क है कि आयात प्रतिस्थापन को बिना सोचे समझे हर क्षेत्र में लागू करने के प्रयास से हानि हुई है क्योंकि इससे लागते बढ़ी है साधनों को अपव्यय हुआ है तथा कहीं-कहीं वस्तुओं की क्वालिटी संतोषजनक नहीं है। इस संदीर्भ में जलील अहमद का यह कहना है कि यदि आयात प्रतिस्थापन को कुछ चुने हुए सामरिक महत्व के क्षेत्रो और उद्योगों तक सीमित रखा जाता तो मूल्यवान साधनों की बचत की जा सकती ीाि क्योंकि ऐसा करने पर पूरो प्रयासों व साधनों का जयादा दक्षतापूर्ण तरीकों से उपयोग सम्भव हो सकता था। विशेष रूप से भारी औद्योगिक क्षेत्र में बहुत से उद्योगों में एक साथ निवेश कर देने से हो सकता है कि बड़े पैमाने के लाभों से देश वंचित

रह गया हो और कुछ उद्योग न्यूनतम लाभप्रद आकार प्रापत कर सकने में असफल रहे हो। एक अन्य महत्वपूर्ण हालोचना यह है कि क्योंकि आयात प्रतिस्थापन की नीति के अन्तर्गत विलासिता की उपभोग वस्तुओं के आवास पर भारी मात्रा में में शुल्क लगाकार रोक लगाई गई थी इसलिए घरेलू बाजार में इन वस्तुओं की लीाप्रदता स्वतः बढ़ गई जिससे इनके घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहन मिला। इसके परिणामस्वरूप तथा शक्तिशाली वर्ग के राजनैतिक प्रभावधीन बहुत से ऐसे आयात प्रतिस्थापक उपभोक्ता वस्तु उद्योगों को उत्पादन को प्रोतसाहन मिला जिनकी अक्सर लागत अत्यधिक थी। इनमें से अधिकतर उद्योग एक छोटे से धनी वर्ग की आवश्यकताओं को पूरा करने में लगे हुए थे। क्योंकि इनकी मांग सीमित थी इसलिए कुछ समय बाद इनमें क्षमता अल्प प्रयोग की समस्यापैदा हो गई ता उत्पादन की औसत लागतें बढ़ गई।

आयात प्रतिस्थापन नीति की कई और आधार पर भी आलोचना की जाती है। कई देशों में इस नीति का अध्ययन करने के बाद जी.एम. मायर इस निष्कर्ष पर पहुंचते

है कि इन देशों की आयात प्रतिस्थापन नीति "किन्हीं विशिष्ट आर्थिक कसौटियों पर आधारित नहीं थीं। वास्तव में इसे अत्यन्त अव्यवस्थित रूप से अदक्ष तरीकों से तथा आवश्यकता से ज्यादा समय तक चालू रखा गया। व्यटि स्तर पर देखे तो बहुत से प्लांट बहुत थोड़ा सा उत्पादन करते थे वस्तुओं की क्वालिटी घटिया थी, पूंजी का अल्प प्रयोग होता था तथा औद्योगिक संरचना अधिकाधिक एकाधिकारिक या अल्पधिकारिक होती चली गयी। हांलाकि विदेश स्पर्धा से सुरक्षित फर्म की लाभ दर अधिक हो सकती थी तथापि घरेलू साधन कीमत ज्यादा थी तथा प्रति इकाई बचाई गई विदेशी मुद्रा के सापेक्ष लागत बढ़ती जाती थी। संरक्षण की उच्च प्रीावी दरों के कारण, कुछ स्थितियों में तो घरलू वर्धित मूल्य (विश्व कीमतों पर) ऋणात्मक था। ... जैसे जैसे आयात प्रतिस्थापन नीति का प्रसार होता गया तथा उपभोक्ता वस्तुओं के बाद और जटिल उत्पादन प्रक्रियाओं में आयात प्रतिस्थापन की चेष्टाएं की गई, उत्पादन लागतों में तेज वृद्धि हुई जिससे उत्पादन उतना लाभदायक नहीं रह गया, कुल उत्पादन में वृद्धि की द कम

हो गयी तथा आयात प्रतिस्थापन की बढ़ती हुई कठिनाइयों के कारण, रोजगार स्तरों में वृद्धि कर पाना मुश्किल हो गया।

आयात उदारीकरण की नीति :

अस्सी औरनब्बे के दशकों में आयात उदारीकरण की नीति बड़े पैमाने पर अपनाए जाने के कारण आयातों की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए, अयातों का मात्रा सूचकांक 1997-98 में 562.1 तक पहुंच गया (आधार 1978-79=100) अर्थात् लगभग दो दशक में इसमें साढ़े पांच गुणा से अधिक वृद्धि हुई।

हाल के वर्षो में विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह बात स्पष्ट होती है कि आयात उदारीकरण के कारण निर्यातों की आयात गहनता में काफी वृद्धि हुइ-है दीपक नैयर ने 1970 से 1985 की अवधि के लिए किए गए अपने अध्ययन में यह सिद्ध किया है कि निर्यातों की आयात-गहनता जो, कुल निर्यातों के रूप में, 1972-73 में 6.9 प्रतिशत थी, 1984-85 में बढ़कर 23.5 प्रतिशत था आर0ई0पी0 सुविधाएं पाने वाले निर्यातों के

अनुपात के रूप 1972-73 में 10.4 प्रतिशत से बढ़कर 1984-85 में 35.5 प्रतिश्ता हो गई। बाद की अवधि के लिए कुछ आकंड़े रिजर्व बैंक के सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों के वित्त सम्बन्धी अध्ययन में पाए जाते हैं। इसमें 1942 सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों का अध्ययन किया गया था। इससे निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए-

(1) सभी कंपनियों में कुल प्रयोग होने वाले कच्चे माल एवं कलपुर्जों में आयातित कच्चे माल एवं कलपुर्जों का हिस्सा जो 1984-85 में 12.79 प्रतिश्त था, 1986-87 में बढ़कर 16.65 प्रतिशत हो गया।

(2) परम्परागत रूप से देखा जाए तो सर्वाध्किा आयात गहनता इन्जीनियरिंग तथा रसायन उद्योगों में रही है। इनमें आयात-गहनता जो 1984-85 में 16.2 प्रतिशत थी। 1986-87 में बढ़कर 20.34 प्रतिशत हो गई। सभी उद्योगों का आयात गहनता में ऊपरन व्यक्त 23 प्रतिशत की वृद्धि की तुलना में इन्जीनियरिंग उद्योग में आयात-गहनता में वृद्धि 11 प्रतिशत अधिक थी।

(3) रासायनिक उद्योग में आयात-गहनता 1984-85 में 18.60 प्रतिशत अधिक वृद्धि दर्शाती थी जो 1986-87 से बढ़कर 24.01 प्रतिशत हो गई। यह सभी उद्योगों की ओसत 23 प्रतिशत वृद्धि की तुना में, 26 अधिक वृद्धि दर्शाती है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि तीन वर्ष की अवधि 1984-85 से 1986-87 के बीच आयात-गहनता में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

जहाँ आयातों में उदारवादी नीति का आयात-गहनता पर प्रीााव इस प्रकार पूरी तरह सिद्ध हो जाता है, वहाँ इस नीति का निर्यातों पर क्या प्रभाव पड़ा यह बता पाना बहुत कठिन है। इसका कारण यह है कि निर्यात संवर्द्धन में बहुत से कारकों का योगदान होता है और आयात उदारता उनमें से केवल एक है। परन्तु दीपक नैयर के अध्ययन से यह पता लगता है कि जहां एक ओर भारतीय निर्यातों की और आयात-गहनता 1977-78 में 13.7 प्रतिशत से बढ़कर 1984-85 में 23.5 प्रतिशत हो गई। वहाँ दूसरी ओर निर्यात आय में ओसत वृद्धि इस अवधि में मात्र 11 प्रतिशत

वर्ष रही। जहाँ 1970-71 से 1977-78 के बीच निर्यातों की मात्रा में 58 प्रतिशत तथा इकाई मूल्य में 122 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी वहां 1977-78 से 1984-85 के बीच निर्यातों की मात्रा में केवल 30 प्रतिशत की और इकाई मूलय में 68 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार उदारवाद के आरम्भिक काल में, आयातों में उदारवादी प्रवृत्यिों का निर्यात संवर्द्धन प्रयासों पर कोइ अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत, जेसे जैसे निर्यातों की आयात-गहनता बढ़ती गई, विदेशी मुद्रा की शुद्ध आय कम होती गई।

अभी हाल में प्रकाशित एक अध्ययन में आर0जी0 नाम्बियर, बी0एल0 मुंगेकर तथा जी0ए0 टाडास् ने घरेलू और रोजगार पर आयात उदारीकरण नीति के प्रभाव का अध्ययन किया है। उनके अध्ययन की सारणी 1 से पता चलता ह कि 1978-79 से 1989-90 के बीच भारत के विनिर्मित वसतुओं के निर्यात में लगभग 50 प्रतिशत मध्यवर्ती व पूंजी वस्तुएं है। 1991-92 के बादसे विनिर्मित निर्यात वस्तुओं में उपभोक्ता वस्तुओं का हिस्सा काफी बढ़ गया। 1989-90 में

यह हिस्सा 50.6 प्रतिशत था जो 1996–97 में बढ़कर 72.5 प्रतिशत हो गया। दूसरी ओर कुल विनिर्मित निर्यातों में मध्यवर्ती वस्तुओं का हिस्सा 1989–90 में 38.5 प्रतिशत से कम होकर 1996–97 में 12.6 प्रतिशत रह गया। जहाँ तक आयातों का संबंध है, पूंजीगत वस्तुओं के हिस्से में लगातारवृद्धि हुई है। विनितिर्मत आयात वसतुओं में पूंजीगत वस्तुओं का हिस्सा 1978–789 में 36.6 प्रतिशत से बढ़कर 1996–97 में 62 प्रतिशत तक पहुंच गया। इन लेखकों के मतानुसार आयात उदारीकरण का बुरा असर उपभोक्ता वस्तु उद्योगों पर कम तथा मध्यवर्ती एवं पूंजीगत वस्तु उद्योगों पर अधिक है। इन दोनों क्षेत्रों में भी पूंजीगत वस्तु उद्योगों पर अधिक बुरा असर पड़ा है। क्योंकि मध्यवर्ती एवं पूंजीगत वस्तु उद्योगों का आय व रोजगार सृजन अवसरों से सीधा संबंध है, इसलिए उनमें गिरावट होने का रोजगार व वर्धित मूल्य सृजन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ने की संभावना है। इसके अलावा, भारत के औद्योगिक आधार पर भी इन प्रवृत्तियों का बुरा असर पड़ने की आशंका है।

दीर्घकालीन निर्यात युक्ति का न होना :

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, चरण एक में निर्यात क्षेत्र के प्रति उदासीनता व्याप्त थी। पहली दो योजनाओं में निर्यात आय के कोई स्पष्ट लक्ष्य नहीं रखे गए थे और केवल संभावित निर्यात आय के आनुमान लगाए गये थे। न ही निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए कोई खास कार्यक्रम शुरू किए। दूसरी योजना का दृष्टिकोण तो यह था कि जब औद्योगीकरण की प्रक्रिया तेज हो जायेगी तभी निर्यातों को बढ़ा पाना सम्भव होगा। हालांकि तीसरी योजना में निर्यातकों को सहायता देने के कुछ कार्यक्रम अपनाए गए लेकिन कुल मिलाकर निराशावादी दृष्टिकोण ही छाया रहा। चरण दो में निर्यात संवर्द्धन पर ज्यादा ध्यान दिया गया क्योंकि यह बात अब स्पष्ट होने लगी थी कि केवल आयात प्रतिस्थापन की नीति द्वारा ही भुगतान शेष की समस्या सुलझाई नहीं जा सकेगी। इसलिए निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए बहुत से कदम उठाए गए। फिर भी, यह तो मानना ही पड़ेगा कि इस चरण में भी कोई दीर्घकालीन निर्या युक्ति नहीं थे। अधिकतर

निर्या क्षेत्रों में अस्थायी तथा अनिश्चिम कदम उठाए जाते रहे। अब तीसरे चरण में निर्यातों पर जोर दिया जा रहा है। वास्तव में औद्योगिक व व्यापार क्षेत्रों में हाल के वर्षों में किए जा रहे आर्थिक सुधारों का केन्द्र बिन्दु निर्यात है। परन्तु अभी भी निर्यात आयोजन का सम्पूर्ण आयोजन के साथ एकीकरण करने का कोई सार्थक प्रयास नहीं किया गया और न ही विभिन्न उद्योगों के निर्यातों के घरेलू अर्थ व्यवस्था के साथ अनुबन्धों को जानने की कोशिश की गई है।

प्राथमिकता निर्यातों से संबंधित समस्याएं :

बहुत लम्बे समय तक भारत की निर्यात आय का एक बहुत महत्वपूर्ण हंश प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात से प्राप्त होता था। परन्तु कई आन्तरिक व बाह्यय कारक निम्नलिखित थे – 1. अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में विनिमय शर्तों का लगातार प्राथमिक वस्तुओं के प्रतिकूल होते जाना, 2. प्राथमिक वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में लगातार उतार-चढ़ाव होना, 3. संश्लिष्ट प्रतिस्थापकों का बढ़ता हुआ प्रयोग, 4. टैक्नोलॉजी में परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उत्पादन में इस्तेमान होने वाले

माल के कम प्रयोग की आवश्यकता, 5. विकसित देशों में उपभोग पैदर्न में परिवर्तन, 6. औद्योगिक देशों द्वारा कुछ प्राथमिक वस्तुओं के आयात पर उच्च शुल्क लगाने की नीति तथा अन्य नियन्त्रण लगाने की नीति। भारत द्वारा निर्यात की जाने वाली बहुत सी प्राथमिक वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय मांग गतिहीन व स्थिर ही है। और उसमें भी उसे अन्य अल्प-विकसित देशों से बढ़ते हुए पैमाने पर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए इन वस्तुओं के निर्यात में अपना हिस्सा बनाएं रखना भारत के लिए लगातार और मुश्किल होता जा रहा है। उदाहरण के लिए चाय के निर्यात में भारत को श्रीलंका तथा पूर्वी अफ्रीका से कड़ी प्रतिस्पर्धा करना पड़ी जिसके परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में चाय निर्यात में भारत का हिस्सा 1950-51 में 50 प्रतिशत से गिरकर 1969-70 में मात्र 21 प्रतिशत रह गया। बांग्लादेश से कड़ी प्रतिस्पर्धा के कारण जूट निर्यात में भारत का हिस्सा 1950-51 में 95 प्रतिशत से कम होकर 1969-70 में 45 प्रतिशत रह गया।

ये प्रवृत्तियां उन सब प्राथमिक वस्तुओं में पाई जाती है जिनमें भारत एक प्रमुख पूर्तिकर्ता है और इसलिए उसे अल्पाधिकारिक बाजार स्थितियों में काम करना पड़ता है। परन्तु जिन वस्तुओं में भारत को लगभग एकाधिकारी स्थिति प्राप्त थी या भारत का हिस्सा बहुत कम था, उन वस्तुओं में निर्यात आय कम होने में घरेलू नीतियां भी काफी हद तक जिम्मेदार थीं। इस सन्दर्भ में बसे अधिक महत्वपूर्ण कारक है निर्यात योग्य वस्तुओं का बढ़ता हुआ घरेलू इस्तेमाल (उपभोग के लिए अथवा घरेलू उद्योगों में आगत के रूप में)। इसमें बहुत सी वस्तुओं का नाम लिया जा सकता है जेसे रूई, ऊन, तम्बाकू, चमड़ा व खाले इत्यादि या फिर अन्तिम विनिर्मित वस्तुएं जैसे सूती वस्त्र, चाय, काफी, खाद्य तेल इत्यादि। देश की वनस्पति तेल व तिलहनों की मांग को पूरा करने के लिए सरकार ने 1952 में अधिकतर तिलहनों के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा दिया और यह प्रतिबन्ध आज तक कायम है। देश में कीमत स्तर में तेज वृद्धि होने के कारण घरेलू बिक्री पर लाभ की दरें बहुत तेजी से बढ़ी है और इससे प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। घरेलू

बाजार में पाई जाने वाले इन दो प्रवृत्तियों के अलावा, सरकार द्वारा समय-समय पर जो निर्यात नियंत्रण लगाए गए तथा प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर जो शुल्क लगाए गए उनसे भी प्राथमिक उत्पादों के निर्यात में भारत का हिस्सा कम हुआ है।

अपरम्परागत निर्यातों के क्षेत्र में कठिनाइयां :

सरकार ने काफी पहले इस बात को समझ लिया था कि प्राथमिक वस्तुओं के विस्तार द्वारा निर्यात आय में कोई खास वृद्धि कर पाना सम्भव नहीं होगा। इसलिए उसने अपराम्परागत वस्तुओं के निर्यात पर जोर दिया। इन वस्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में तेज विस्तार हो रहा था, इसलिए इनके निर्यात में वृद्धि प्राप्त करना बहुत कठिन नहीं था। इसके अलावा इन वस्तुओं के निर्यात में भारत का हिस्सा इतना कम था कि उसकी नीतियों में परिवर्तन के द्वारा बड़े निर्यातक देश की नीतियों में कोई बदलाव होने की आशंका नहीं थी। उदाहरण के लिए यदि भारत किसी अपरम्परागत वस्तु की कीमत को कम भी कर देता है तो भी उसका बड़े

निर्यातक देशों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा और वे कीमतें नहीं गिराएंगे क्योंकि उस वस्तु के निर्यात बाजार में भारत का हिस्सा बहुत कम है। इसलिए जहां तक अपरम्परागत वस्तुओं से निर्यात आय का सम्बन्ध है, भारत सरकार की घरेलू नीतियां अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। बहुत सी निर्यात प्रोत्साहन नीतियां तथा निर्यात संवर्द्धन के उपाय इसी बात को ध्यान में रखकर अपनाएं गए हैं। इसलिए यह मात्र एक संयोग नहीं है। कि भारत की इंजीनियरिंग वस्तुओं का निर्यात जो 1960-61 में कुल निर्यात आय का मात्र 2.1 प्रतिशत था, 1998-99 में बढ़कर 13.0 प्रतिशत हो गया। आयात हकदारी योजना, आयात पुनःपूर्ति योजना, शुल्क वापसी की योजना, नकद सहायता, निर्यात के लिए वित्त की व्यवस्था, निर्यात उन्मुख औद्योगिक इकाइयों को अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों पर कच्चे माल की उपलब्धि, प्रत्यक्ष करों में रियायतें इत्यादि नीतियों से भारत को अपनी निर्यात आय बढ़ाने में बहुत मदद मिली है।

परन्तु गंभीर व्यापारिक व उत्पादन सम्बन्धी समस्याओं के कारण, दोषपूर्ण घरेलू नीतियों के कारण तथा अपर्याप्त प्रयासों के कारण विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात को बढ़ाने में भी कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है।

1. व्यापारिक समस्यायें :

जहां तक व्यापारिक समस्याओं का सम्बन्ध है, इनमें सबसे महत्वपूर्ण है विकसित देशों द्वारा अपनाई जाने वाली वे नीतियां जो भारतीय विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में अड़चने पैदा करती है। अधिकतर विकसित देश विनिर्मित वस्तुओं के आयात पर अत्यधिक शुल्क लगाते है जिससे विकासशील देशों द्वारा किये जाने वाले इन वस्तुओं के निर्यात हतोत्साहित होते है। विकसित देशों में प्रशुल्क व्यवस्था अक्सर ऐसी होती है कि जैसे जैसे कच्चे माल से विनिर्मित वस्तु की तरफ बढ़े वैसे वैसे शुल्क की दरें बढ़ती जाती है। इस प्रकार की प्रशुक्ल व्यवस्था होने से विकासशील देश विनिर्मित वस्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में विकसित देशों के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाते। विवेधात्मक शुल्क व्यवस्था के अलावा विकसित

देश कोटा नियंत्रण तथा अन्य कई प्रकार के और प्रतिबन्ध भी लगाते रहते है। एक और कठिनाई यह है कि विकासशील देश लगभग एक जैसे उद्योगों में ही आयात प्रतिस्थापन गतिविधयों को प्रोत्साहित कर रहे है। इससे उनमें परस्पर प्रतिस्पर्धा होती है। जिससे सभी को नुकसान होता है। इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है सूती वस्त्र उद्योग जिसे दूसरे विश्व युद्ध के बाद की अवधि में बहुत से विकासशील देशों ने सफलतापूर्वक विकसित किया है।

2. उत्पादन सम्बन्धी समस्यों :

इस सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण समस्या भारतीय उद्योग में 'तकनीकी गत्यात्मकता' का अभाव है। औद्योगिक व व्यापारिक नीतियों में परिवर्तनों के बावजूद अधिकतर भारतीय फर्में पुरानी व अदक्ष तकनीकों का प्रयोग करती चली आ रही है जिससे उत्पाद की उत्तम क्वालिटी प्राप्त नहीं की जा सकती। तकनीकि गतिहीनता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि प्रौद्योगिकी पर भारतीय उद्योग बहुत कम खर्च करता है उदाहरण के लिए 1981 से 1991 के दौरान

भारतीय निजी व सार्वजनिक फर्मों ने अपनी बिक्री का 0.8 प्रतिशत से भी कम अनुसंधान व विकास कार्यक्रम पर खर्च किया। बहुत सी फर्मों में 20 वर्ष पुराने सयंत्रों से ही काम चलाया जा रहा है। पुराने होने के कारण ये सयंत्र न तो अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन कर पाते है और न ही सतत रूप से एक योजनाबद्ध ढंग से काम कर पाते है। इसके अलावा उनके उपयोग से ऊर्जा का भी अपव्यय होता है। इस सबसे विपरीत विकसित देशों ने नई उन्नति व दक्ष तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जिससे बेहतर किस्म का उत्पादन प्राप्त होता है। व साधनों का भी अनुकूलतम प्रयोग होता है। इस प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में भारत विनिर्मित निर्यातों से आय बढ़ाना चाहता है तो उसे प्रौद्योगिकी में लगातार सुधार करना होगा। इसके लिए अनुसंधान व विकास तथा सयंत्र आधुनिकीकरण पर भारी निवेश करने की आवश्यकता है।

1991 की नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन :

इस नीति में आरम्भ किये गये व्यापार नीति सुधारों ने विदेश व्यापार क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन ला दिये है और अब सरकारी नीति अर्न्तमुखी न होकर बाह्यउन्मुख है। अस्सी के दशक में यह हिस्सा 15 प्रतिशत के आस पास था। जो 1995-96 में बढ़कर 24 प्रतिशत से भी अधिक हो गया। देश में उदारीकरण का जो व्यापक दौड़ जारी है उसके परिणामस्वरूप भारतीय उद्योगों को जो संरक्षण मिलता रहा है। उसमें तेज कमी हुई है। क्योंकि भारत सरकार ने सीमा शुल्कों में काफी कटौती की है तथा ऐसी कई वस्तुओं के आयात को बहुत उदार बना दिया है। जिनका आयात तो पहले किया ही नही जा सकता था या जिनके आयात पर कई तरह के प्रतिबन्ध थे। अपने अध्ययन में मेहता ने भारतीय अर्थ व्यवस्था के लिए 55 क्षेत्रों पर आधारित 1989-90, 1994-95 तथा 1995-96 के लिए मौद्रिक तथा प्रभावी संरक्षण दरों की गणना की है। उनके अध्ययन से पता चलता है कि प्रभावी संरक्षण दर जो 1989-90 में 87 प्रतिशत थी

1993-94 में कम होकर 62 प्रतिशत तथा 1995-96 में कम होकर मात्र 30 प्रतिशत रह गयी। इसी प्रकार मौद्रिक संरक्षण दर 1989-90 में 89 प्रतिशत से कम होकर 1993-94 में 63 प्रतिशत तथा 1995-96 में और कम होकर 31 प्रतिशत रह गई। कोटा या गैर व्यापार अवरोधों का जहां तक संबंध है। उनके बारे में उदारीकरण की अवधि से पहले के सही अनुमान उपलब्ध नहीं है परन्तु मेहता ने अनुमान लगाया है कि लगभग 90 प्रतिशत आयातों पर इस प्रकार की कोई न कोई प्रतिबन्ध अवश्य थी। इसके विपरीत 1995-96 में किसी न किसी प्रकार के गैर व्यापार अवरोधों के अधीन भारत की 44 प्रतिशत आयात वस्तुएं थी। अर्थात् उदारीकरण के कारण गैर व्यापार अवरोधों में भी तेज कमी आयी है।

हाल के वर्षो में विदेश व्यापार नीति में उदारीकरण की जो व्यापाक प्रक्रिया चल रही है उससे कई सरकारी व गैर सरकारी क्षेत्रों में यह विश्वास जागने लगा है कि भारत के विकास में अब विदेश व्यापार क्षेत्र 'अग्रगामी क्षेत्र' की भूमिका

अदा करेगा और इसके परिणाम स्वरूप भारतीय अर्थ व्यवस्था तेज गति से प्रगति कर सकेगी। परन्तु इस जोश व विश्वास में हमें तीन मुद्दों को नहीं भूलना चाहिए जो दीपक नैयर के अनुसार औद्योगीकरण के आयोजन में मूलभूत महत्व रखते है– घरेलू बाजार का सापेक्षिक महत्व, सरकारी हस्तक्षेप का स्वरूप व उसकी मात्रा तथा प्रौद्योगिकी की अन्य देशों से प्राप्ति या उसका स्वयं विकास।

जहां तक घरेलू बाजार के सापेक्षिक महत्व का प्रश्न है दीपक नैयर के अनुसार भारत जैसे बड़े देशों में जिनमें घरेलू बाजार बहुत व्यापक व महत्वपूर्ण है। सतत औद्योगीकरण केवल घरेलू बाजार के विकास पर ही निर्भर हो सकता है। इन परिस्थितियों में या तो घरेलू बाजार के लिए आयात प्रतिस्थापन की नीति की मदद से उत्पादन करने की जरूरत है या फिर विदेशी बाजारों को निर्यात करने के लिए उत्पादन किया जा सकता है।

जहां तक औद्योगीकरण की प्रक्रिया में सरकारी हस्तक्षेप का प्रश्न है। 20वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इस बात का

प्रमाण है कि देर से औद्योगीकरण करने वाले देशों के सफल विकास का मूल आधार सरकार के दिशा निर्देश तथा उसकी समर्थक भूमिका रहे है। यह बात न केवल पूर्वी यूरोप के सामुदेशीय देशों के लिए सही है अपितु पूर्वी ऐशियों के तेजी से विकास कर रहे देशों के लिए भी सही है। दीपक नैय्यर के अनुसार जहां तक सरकारी हस्तक्षेप का सम्बन्ध है। आयात प्रतिस्थापन और निर्यात संवर्धन में कोई खास अन्तर नहीं है। आयात प्रतिस्थापन की स्थिति में सरकार घरेलू उत्पादकों की घरेलू बाजार में विदेशी प्रतिस्पर्धा से रक्षा करती है जबकि निर्यात संवर्धन की स्थिति में सरकार घरेलू उत्पादकों की विश्व बाजार में विदेशी उत्पादकों से सुरक्षा करती है। महत्वपूर्ण बात है सरकारी हस्तक्षेप का 'स्वरूप'। औद्योगीकरण के कार्यक्रमों का आयोजन करते समय विदेशी व्यापार क्षेत्र में इस सरकारी हस्तक्षेप का स्वरूप क्या होगा और हस्तक्षेप किस सीमा तक किया जायेगा? ये बाते निर्णायक सिद्ध होगी। ''भारतीय अनुभव यह दर्शाता है कि सरकारी हस्तक्षेप द्वारा एक प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में अल्पाधिकारी की स्थिति पैदा की जा सकती है ठीक उसी प्रकार जैसे कि कोरिया गणराज्य का

अनुभव यह दर्शाता है कि सरकारी हस्तक्षेप द्वारा एक अल्पाधिकारी वातावरण में प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति पैदा की जा सकती है।

जहां तक प्रौद्योगिकी के मुद्दे का प्रश्न है नैयर का तर्क है कि मौजूदा बाजार संरचना और नीति ढांचा मिलकर कोई ऐसा वातावरण पैदा नहीं कर सके जिसमें आयातित प्रौद्योगिकी का घरेलू अर्थ व्यवस्था में आसानी से विलयन हो सके तथा घरेलू प्रौद्योगिकी के विकास को प्रोत्साहित किया जा सके। या जो नई खोजों और विसरण के लिए सहायक बन सके। यहां इस बात पर जोर देना आवश्यक है कि विभिन्न क्षेत्रों व समयावधियों में प्रौद्योगिकी विकास के आयोजन में सरकार की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि प्रौद्योगिकी के आयात के लिए एक ऐसी नीति बनाई जाय जिसमें प्रौद्योगिकी के आरम्भिक आयात से लेकर देश में उसके पूर्णतया उपयोग तथा विसरण के लिए उपयुक्त कदम उठाने की आवश्यकता हो। अनुसंधान और

विकास के लिए संसाधनों का आंवटन किया जाय तथा राज्य द्वारा प्रौद्योगिकी की खरीद के लिए निश्चित दिशा निर्देश हो।

दीपक नैयर के इन सब तर्कों से यह सिद्ध होता है कि देश के विदेशी व्यापार क्षेत्र और औद्योगीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया के बीच 'समष्टि अन्तःसम्बन्ध' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। और उनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था की समस्याओं का समाधान केवल विदेशी व्यापार क्षेत्र में परिवर्तनों द्वारा नहीं किया जा सकता। दूसरी ओर यह बात सच है कि विदेश व्यापार क्षेत्र की समस्याओं का काफी हद तक समाधान देश की अर्थ व्यवस्था के बेहतर निष्पादन व बेहतर प्रबन्धन से किया जा सकता है। [3]

निर्यात-आयात नीति 2002-2007 :

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक (मार्च 2007 तक) देश के कुल निर्यात को 80 अरब डालर के सालाना लक्ष्य तक पहुँचाने तथा विश्व व्यापार में भारत की हिस्सेदारी

---

[3] भारतीय अर्थ व्यवस्था, एस0के0 मिश्र और बी0के0 पुरी, संस्करण 2000, प्रकाशक हिमालिया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई 400004, पृष्ठ 547

को 0.67 प्रतिशत के मौजूदा स्तर से बढ़ाकर 1.0 प्रतिशत करने नये प्रावधानों एवं प्रोत्साहनों के साथ 2002-2007 के लिए नई आयात-निर्यात नीति की घोषणा केन्द्रीय वाणिजय एवं उद्योगमंत्री मुरासोलीमारन ने 31 मार्च 2002 को की थी।

इस नीति की निम्नलिखित विशेषताएँ है :

1. कृषिगत निर्यातों को विशेष प्रोत्साहन।
2. निर्यातों पर से परिभाषात्मक प्रबन्धों की समाप्ति।
3. प्रसंस्कृत फलों व सब्जियों, पोल्ट्री व डेयरी उत्पादनों तथ गेहूँ व चावल उत्पादों को ट्रान्सपोर्ट सब्सिडी।
4. विशेष आर्थिक क्षेत्रों में रियायतों में वृद्धि, ऐसे क्षेत्रों में समुद्र पारीय बैंकिंग के तुल्य सुविधाएं।
5. एक्सपोर्ट प्रमोशन कैपिटल गुड्स व ड्यूटी एंटाइटेलमेंट पास बुक योजनाएँ अधिक आकर्षक बनायी गयी।

6. कॉटेज सेक्टर व हैंडिक्राफ्ट्स पर विशेष फोकस।

7. 'औद्योगिक क्लस्टर्स' से निर्यात सम्बर्धन हेतु अतिरिक्त सुविधाएँ।

8. इलेक्ट्रानिक हार्डवेयर तथा रत्नों एवं आभूषणों के निर्यात सम्बर्द्धन हेतु विशेष पैकेज।

9. निर्यात बाजार के विस्तार हेतु अफ्रीका पर फोकस।

10. 2002-2007 की अवधि में देश के वार्षिक निर्यात स्तर को 46 अरब डालर से बढ़ाकर 80 अरब डालर करने का लक्ष्य। इसके लिए निर्यातों में 11.9 प्रतिशत प्रतिवर्ष की औसत वृद्धि का लक्ष्य।

11. विश्व व्यापार में भारत की हिस्सेदारी 0.67 प्रतिशत के मौजूदा स्तर से बढ़ाकर 5.0 प्रतिशत (2007तक) करने का लक्ष्य।

विशेष आर्थिक क्षेत्रों की योजनाओं को श्ठमेज वि वनत क्तमंउ च्तवरमबजेश बताते हुए इनमें स्थापित इकाइयों

और अधिक सुविधाएं प्रदान करने की घोषणा भी इस नई नीति में की गयी है। इन क्षेत्रों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा बनाने के लिए इनमें स्थापित बैंक–शाखाओं को 'ओवरसीज बैंकिंग यूनिट' की तरह माना जायेगा तथा इस रूप में नकद आरक्षण अनुपात, सांविधिक तरलता अनुपात व प्राथमिकता क्षेत्र के ऋण दायित्व आदि के बन्धनों से यह शाखाएँ मुक्त होंगी। इससे यह शाखाएँ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की नीची ब्याज दरों पर ही ऋण क्षेत्र में स्थापित इकाइयों को उपलब्ध करा सकेंगी जिससे इन क्षेत्रों में स्वदेशी के साथ–साथ विदेशी निवेशकों को भी बढ़ावा मिलेगा, इन क्षेत्रों में स्थापित इकाईयों को सीमा शुल्क व उत्पाद शुल्क की छूटों के साथ–साथ आयकर में भी छूट अब प्रदान की जायेगी। ढाँचागत व नीतिगत सुविधाओं के मामले में भारत के विशेष आर्थिक क्षेत्र चीन के ऐसे क्षेत्रों के तुल्य ही बना देने की बात नई नीति में कहीं गयी है।

<u>कुछ महत्त्वपूर्ण गदम उठाये गये है :</u>

(1) इस नई नीति में कुछ संवेदनशील वस्तुओं (प्याज, जूट, नाइजरसीड, लौ आयस्क, व कुछेक रसायन) को छोड़कर

कृषिगत उत्पादों सहित सभी वस्तुओं के निर्यात पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटा लिये गये है।

(2) कृषिगत निर्यातों को विशेष प्रोत्साहन देते हुए रुपया ऋण पुर्नभुगतान योजना के तहत् रूप को किये जाने वाले गेहूँ व गेहूँ उत्पाद, मोटे अनाज, काजू, मूंगफली के तेल व मक्खन आदि के निर्यात को पंजीकरण की आवश्यकता, नयूनतम निर्यात मूल्य व राज्य सरकार एजेन्सियों के माध्यम से ही निर्यात की अनुमति आदि बन्धनों से मुक्त कर दिया है।

(3) ताजा एवं प्रसंस्कृत सब्जियों व फलों, फूलों, डेयरी उत्पादों तथा गेहूँ व चावल के उत्पादों को निर्यात के लिए परिवहन सब्सिडी प्रदान करने की घोषणा इस नयी नीति में की गयी है।

(4) गेहूँ व चावल के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए विश्व व्यापार संगठन के मानकों के अन्तर्गत ही एक नई निर्यात योजना का कार्यरूप तैयार किया जा रहा है।

(5) इस सबके साथ अब तक स्वीकृत 20 कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना से कृषि क्षेत्र के निर्यात में भारी वृद्धि की अपेक्षा इस नीति में की गयी है।

निर्यातों को बढ़ावा देने के लिए पहले से लागू निर्यात सम्बर्द्धन पूँजीगत समान योजना को और अधिक आकर्षक व लोचदार बनाते हुए इसके तहत निर्यात दायित्व को पूरा करने के अवधि को ऐसे मामलों में 12 वर्ष तक के लिए बढ़ा दिया गया है। जिनमें ई0पी0सी0जी0 आयात 100 करोड़ रूपये अथवा अधिक के हो, इसके साथ ही निर्यातकों को बढ़ावा देने वाली अन्य योजनाओं– ड्यूटी संटाइटिलमेंट पास बुक योजना अग्रिम लाइसेंस व निर्यात संवर्द्धन दर्ज गारण्टी योजना को भी अधिक आकर्षक बनाया गया है।

देश के निर्यातों में लघु उद्योग क्षेत्र की 50 प्रतिशत भागीदारी के परिप्रेक्ष्य में काटेज सेक्टर व हैंडिक्राफ्ट्स पर विशेष फोकस के तहत खादी एवं ग्रामोद्योग के अन्तर्गत हस्त शिल्प निर्यात को बढ़ावा देने के लिए 5 करोड़ रूपये का कोष निर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त हस्त शिल्प

निर्यात की इकाईयाँ 'मार्केट एक्सेस इनीशिएटिव' योजना के तहत उपलब्ध कोष का लाभ भी उठा सकेगी।

होजिएरी के निर्यात के लिए तिरूपुर, की वस्त्रों के निर्यात के लिए लुधियाना व कम्बलों के निर्यात के लिए पानीपत के भूमिका को देखते हुए ऐसे इण्डस्ट्रियल क्लस्टर्स के निर्यातकों के लिए आकर्ष सुविधाओं की घोषणा इस नयी नीति में की गयी है। इसके अतिरिक्त खुर्जा से पाँटरी निर्यात बढ़ाने के लिए एक अध्ययन कराने की घोषणा इस नीति के तहत की गयी है।

साफ्टवेयर क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारत की अच्छी पहचान बनने के बाद अब इलेक्ट्रानिक हार्डवेयर के क्षेत्र में भी मौजूदगी दर्ज करने के लिए एक विशेष पैकेज इस क्षेत्र के लिए घोषित किया गया है, इसके तहत 'इलेक्ट्रानिक्स हार्डवेयर टेक्नोलॉजी पार्क' योजना में ऐसे संशोधन किये जा रहे है ताकि इस क्षेत्र की ईकाइयों विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के तहत ही शून्य प्रशुल्क व अन्य लाभ उपलब्ध हो

सके। इसी प्रकार रत्नों एवं आभूषणों के निर्यात को बढ़ाने के लिए पैकेज की घोषणा की इस नीति में की गयी है।

देश के कुल निर्यातों में वृद्धि के लिए नई एक्जिम नीति में अफ्रीका को निर्यात बढ़ाने की बात कही गयी है 'फोकस अफ्रीका' की इस रणनीति के तहत पहले चरण में सात देशों–नाइजीरिया, दक्षिण अफ्रीका, मारीशस, कीनिया, इथोपिया, तंजानिया व धाना को शामिल किया गया है, इन देशों में निर्यात के लिए जिन जिंसों की पहचान की गयी है, इनमें कपास व धागा, कपड़ा व सिलेसिलाए वस्त्र, दवाएं, मशीनी उपकरण तथा दूर संचार व सूचना प्रौद्योगिकी उपकरण शामिल है। [4]

---

[4] प्रतियोगिता दर्पण (अतिरिक्तांक) 2/11, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा, पृ0 124

अध्याय चार

पूर्व सहत्राब्दी के नब्बे के दशक में उदारीकरण एवं विश्व व्यापार संगठन

आजादी से पहले भारत के विदेशी व्यापार की दिशा तुलनात्मक लागत लाभ स्थितियों के द्वारा निर्धारित न होकर ब्रिटेन और भारत के बीच औपनिवेशिक सम्बन्धों द्वारा निर्धारित थी। दूसरे शब्दों में भारत किन देशों से आयात करेगा और कहाँ पर अपना माल बेचेगा यह बिट्रिश शासन अपने देश के हित में तय करते थे यही कारण है कि स्वतन्त्रता से पहले भारत का अधिकांश व्यापार ब्रिटेन, उसके उपनिवेशों और उसके मित्र राष्ट्रो के साध था। यही प्रवृत्ति आजादी के बाद कुछ वर्षो में भी देखने को मिलती है, क्योंकि तब तक भारत को अन्य देशों के साथ व्यापार सम्बन्ध स्थापित करने में कोई विशेष सफलता नहीं मिल पाई थी। उदाहरण के लिए 1950-51 में भारत की निर्यात आय में इंग्लैण्ड और अमेरिका का हिस्सा 42 प्रतिशत था, उसी वर्ष भारत के आयात व्यय में उनका हिस्सा 39.1 प्रतिशत था, अन्य पूंजीवादी देशों जैसे फ्रान्स, पश्चिमी जर्मनी, इटली, जापान इत्यादि और समाजवादी देशों

जैसे सोवियत रूस, रोमानिया, पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया इत्यादि के साथि बहुत थोड़ा व्यापार था। जैसे-जैसे इन देशें के साथ राजनैतिक सम्बन्धों का विकास हुआ। वैसे-वैसे आर्थिक, सम्बन्ध भी मजबूत होने लगे। इस प्रकार बहुत से देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों के विकास करने के अवसर खुलने लगे। अब स्थिति काफी बदल चुकी उससे सम्बद्ध वस्तुओं का महत्व घटता गया है तथा विनियम वस्तुओं का महत्व बढ़ता ही गया है, उदाहरण के लिए कुल निर्यातों में कृषि व सम्बद्ध वस्तुओं का हिस्सा 1960-61 में 44.2% से कम होकर 1998-99 में मात्र 18.5% रह गया, इसके विपरीत इसी अवधि में विनिर्मित वस्तुओं का हिस्सा 45.3% से बढ़कर 78.7% हो गया।

स्वतंत्रता के तुरन्त ाद भारत के निर्यातों में तीन प्रमुख मदें जूट, चाय तथा सूती वस्त्र थी। इन तीनों का निर्यात आय में हिस्सा 50 प्रतिशत से अधिक था। जैसे-जैसे देश के औद्योगिक संरचना में विविधीकरण व मजबूती आती गई, नये निर्यात अवसर पैदा होते गये और जूट, चाय तथा

सूती वस्त्र का निर्यात आय में हिस्सा कम होकर 1970-71 में 31 प्रतिशत तथा 1998-99 में 10 प्रतिशत के लगभग रह गया। इसके विपरीत इंजीनियरिंग वस्तुओं का निर्यात आय में हिस्सा जो 1960-61 में मात्र 3.4 प्रतिशत था, 1998-99 में बढ़कर 13.0 प्रतिशत हो गया।

1960-61 में सबसे महत्वपूर्ण निर्यात जूट थी और इसका निर्यात आय में हिस्सा 21 प्रतिशत था, इसके हिस्से में लगातार कमी आई है, तथा 1970-71 में यह 12.4 प्रतिशत तथा 1998-99 में मात्र 0.4 प्रतिशत था।

जूट के बाद 1960-61 में दूसरे सबसे अधिक महत्वपूर्ण वस्तु चाय थी। चाय का निर्यात आय में हिस्सा 19.3 प्रतिशत था, इसमें भी लगातार कमी आई है। 1970-71 में कुल निर्यात आय में चाय का हिस्सा 9.6 प्रतिशत रह गया जो 1998-99 में कम है और 49 वर्षो के आयोजन के बाद व्यापारिक सम्बन्ध काफी कुछ बदल चुके है।

आयातों की दिशा :

1960-61 से 1997-98 के दौरान, आर्थिक सहयोग विकास संगठन का हमारे आयात व्यय में हिस्सा कम हुआ है। 1960-61 में यह हिस्सा 78 प्रतिशत था जो 1998-99 में 51% रह गया। तेल निर्यातक देशों के हिस्से में काफी वृद्धि हुई है, 1960-61 में भारत के आयात-व्यय में इस वर्ग का हिस्सा मात्र 4.6 प्रतिशत था जो 1980-81 में बढ़कर 27.8 प्रतिशत हो गया। 1998-99 पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन का भारत के आयात व्यय में हिस्सा 18.7% था। इसका कारण यह है है कि भारत के इस वर्ग के देशों से भारी मात्रा में पेट्रोलियम तेल का आयात करना पड़ता है। समाजवादी देशों के साथ बढ़ते हुए आर्थिक सम्बन्धों के परिणामस्वरूप, भारत के आयात व्यय में पूर्वी यूरोप का हिस्सा जो 1960-61 में केवल 3.4 प्रतिशत था, 1980-81 में बढ़कर 10.3 प्रतिशत हो गया।

निर्यातों की दिशा :

भारत के निर्यातों का एक बड़ा हिस्सा आर्थिक सहयोग विकास संगठन के देशों को जाता है। आर्थिक सहयोग विकास संगठन का भारत के निर्यातों में हिस्सा 1960-61 में 66.1 प्रतिशत तथा 1998-99 में 58.0 प्रतिशत था। इनमें से 45 प्रतिशत निर्यात यूरोपीय संघ के देशों को किये जाते है। तेल निर्यातक देशों के संगठन को 1960-61 में 4.1 प्रतिशत निर्यात भेजे गये जो 1998-99 में बढ़कर 10.5 प्रतिशत हो गये, सबसे अधिक महत्वपूर्ण वृद्धि पूर्वी यूरोप के देशों तथा विदेश तौर पर सोवियत संघ को निर्यात में हुई। उदाहरण के लिए कुल निर्यात में पूर्वी यूरोप का हिस्सा 1960-61 में मात्र 7 प्रतिशत था। 1980-81 तक बढ़ते-बढ़ते यह 22.1 प्रतिशत तक पहुँच गया, 1998-99 में पूर्वी यूरोप का भारत के निर्यातों में हिस्सा मात्र 2.7 प्रतिशत रह गया। अफ्रीका, एशिया तथा लैटिन अमेरिका के विकासशील देशों का भारत की निर्यात आय में हिस्सा का लगभग एक-चौथाई। इस वर्ग में सबसे महत्त्वपूर्ण एशिया के

देश है। वस्तुतः 1998-99 में एशियाई देशों का भारत की निर्यात आय में हिस्सा 19 प्रतिशत था जो कुल निर्यात आय का लगभग पाँचवा था।

नब्बे के दशक में भारत के विदेश व्यापार में संरचनात्मक परिवर्तन :

1991 से भारत सरकार ने विदेशी व्यापार क्षेत्र में खुलेजन की नीति अपनाई है और व्यापक व्यापार उदारीकरण कदम उठाये है। महत्वपूर्ण उदारीकरण कदम है- जुलाई 1991 में रूपयों का अवमूल्यन रूपये की पहले व्यापार खाते पर और तत्पश्चात् सम्पूर्ण चालू खाते पर परिवर्तनीयता, आयात शर्तों का उदारीकरण, सीमाशुल्क दरों में भारी कटौती, कई वस्तुओं को खुले आयात करने की अनुमति इत्यादि वस्तुतः 1991 में शुरू किये गये विदेशी व्यापार सुधारों व उदारीकरण के कारण विदेश व्यापार क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए है, और इनके परिणामस्वरूप अन्तमुर्ख नीति के स्थान पर अब वाह्य उन्मुखनीति को अपनाया जा रहा है।

विदेश व्यापार का प्रसार :

उदारीकरण के बाद से भारतीय व्यापार में तेज वृद्धि हुई है, 1991–92 में कुल व्यापार की मात्रा 37.3 विलियन डालर थी, जो 1998–99 के बढ़कर 75.6 विलियन डालर हो गयी परन्तु 1992–93 के बाद से (1993–94 को छोड़कर) आयातों की संवृद्धि दर लगातार निर्यातों की संवृद्धि दर से अधिक रही है, इसके परिणामस्वरूप व्यापार शेष में घाटे में तेजवृद्धि हुई है और यह 1991–92 में 1.5 विलियन डालर से बढ़कर 1997–98 में 6.5 विलियन डालर तथा 1998–99 में 8.2 विलियन डालर तक पहुँच गया।

रिजर्व बैंक की 1998–99 में नब्बे के दशक में विदेश व्यापार क्षेत्र के निष्पादन और उसमें हुए संरचनात्मक परिवर्तनों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, इस अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष निम्नलिखित है :–

(1) जहाँ अस्सी के दशक के दौरान भारत के निर्यात में औसतन 8.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष वृद्धि हुई वहाँ नब्बे

के दशक में वृद्धि 9.8 प्रतिशत प्रतिवर्ष थी, इसी प्रकार जहाँ भारत के आयातों में अस्सी के दशक के दौरान 7.8 प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि हुई, वहाँ नब्बे के दशक के दौरान यह वृद्धि बढ़कर 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष तक पहुँच गयी।

(2) नब्बे के दशक को दो अवधियों में बांटा जा सकता है उदारीकरण के बाद के पहले चार वर्ष (अर्थात 1992–93 से 1995–96 की अवधि) और उसके बाद के तीन वर्ष (1996–97 से 1998–99 की अवधि)। पहली अवधि में भारत के निर्यातों और आयातों में क्रमशः 15.7% तथा 17.5% की औसतन वृद्धि हुई जो अस्सी के दशक में दर्ज की गयी वृद्धि (क्रमशः 8.2% तथा 7.8%) की तुलना में काफी ज्यादा थी। परन्तु नब्बे के दशक के बाद की अवधि (1996–97 से 1998–99) में निर्यातों और आयातों की औसत वृद्धि दर गिरकर क्रमशः मात्र 2.0 प्रतिशत और 4.5 प्रतिशत रह गयी।

(3) विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा जो 1984 से 1987 के बीच 0.52 प्रतिशत से कम होकर 0.47

प्रतिशत रह गया था, 1992 में बढ़कर 0.53 प्रतिशत हो गया। हांलाकि 1996 के बाद भारत की निर्यात संवृद्धि दर में गिरावट आई तथापि विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा 1997 में बढ़कर 0.62 प्रतिशत तक पहुंच गया जो इस बात का द्योतक है कि भारत का निर्यात प्रदर्शन विश्व की तुलना में, सापेक्षिक रूप से बेहतर रहा।

(4) अस्सी के दशक के तुलना में नब्बे के दशक में भारत के व्यापार सकल घरेलू उत्पाद अनुपात में सुधार हुआ है। अस्सी के दशक में निर्यात सकल घरेलू उत्पाद अनुपात औसतन 5.0 प्रतिशत था जो नब्बे के दशक में बढ़कर 8.2 प्रतिशत हो गया। इसी दौरान आयात सकल घरेलू उत्पाद अनुपात भी औसतन 7.7 प्रतिशत से बढ़कर 9.4 प्रतिशत हो गया। रिजर्व बैंक के अनुसार इन अनुपातों में वृद्धि इस बात का प्रमाण है कि नब्बे के दशक में भारतीय अर्थ व्यवस्था में और खुलापन आया है।

(5) व्यापार सकल घरेलू उत्पाद अनुपात में वृद्धि के साथ-साथ एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत के

व्यापारशेष-सकल घरेलू उत्पाद अनुपात में कमी आई है, अस्सी के दशक के दौरान व्यापार शेष सकल घरेलू उत्पाद अनुपात 2.7 प्रतिशत (=7.7 प्रतिशत-5 प्रतिशत) से कम होकर नब्बे के दशक के दौरान 1.2 प्रतिशत (=9.4 प्रतिशत-8.2 प्रतिशत) रह गया। इतना ही नहीं जहाँ अस्सी के दशक में निर्यात आयात अनुपात 65.1 प्रतिशत था। वहाँ नब्बे के दशक में यह अनुपात बढ़कर 87.0 प्रतिशत हो गया।

निर्यातों में संरचनात्मक परिवर्तन :

नब्बे के दशक में निर्यातों और आयातों में होने वाले संरचनात्मक परिवर्तन रिपोर्ट के अनुसार, नब्बे के दशक में निर्यातों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन हुए है :-

(1) स्वतंत्रता के बाद व्यापक आधार पर विविधीकृत औद्योगीक संरचना के निर्माण के कारण, भारत मुख्यतया प्राथमिक वस्तुओं का निर्यातक देश न रह कर मुख्यतया विनिर्मित वस्तुओं का निर्यातक देश बन गया है। अस्सी के दशक के मध्य तक आते-आते विनिर्मित वस्तुओं का कुल

निर्यात में हिस्सा दो तिहाई तक पहुंच चुका था। जो 1991-92 में और बढ़कर 73.6 प्रतिशत हो गया (1991-92 में प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात आय में हिस्सा कम होकर मात्र 23.1 प्रतिशत रह गया)। नब्बे के दशक में इन प्रवृत्तियों को और बल मिला। यह इस बात से स्पष्ट है कि जहाँ 1987-88 से 1990-91 के बीच, विनिर्मित वस्तुओं का निर्यात आय में हिस्सा औसतन 71.2 प्रतिशत था, वहाँ 1992-93 से 1998-99 के बीच इन वस्तुओं का निर्यात आय में हिस्सा बढ़कर औसतन 75.4 प्रतिशत हो गया। इसी दौरान, प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात आय में हिस्सा 24.1 प्रतिशत से कम होकर 21.8 प्रतिशत रह गया।

(2) अस्सती और नब्बे के दशकों के बीच निम्न 6 वस्तुओं के निर्यात प्रदर्शन में अभूतपूर्व सुधार हुआ है- काफी परिष्कत खाद्य पदार्थ, जूस और विविध परिष्कृत वस्तुएं चावल, मसालें, कला वस्तुएं तथा अन्य मदें (जैसे चीनी, शीरा, कपास इत्यादि) जहाँ अस्सी के दशक में इन 6 मदों से निर्यात आय में 2.9 प्रतिशत की गिरावट आई थी, वहाँ नब्बे के दशक में

इनकी संवृद्धि दर 20.5 प्रतिशत रही। दूसरी ओर, हाथ से बुने कालीन व गलीचे (रेशमी गलीचों को छोड़कर) अन्य अयस्क व खनिजों तथा रबड़, शीशा, पेंट इनमेल व उत्पादों का निर्यात प्रदर्शन खराब रहा। जहाँ अस्सी के दशक में इनकी निर्यात संवृद्धि दर औसतन 18.1 प्रतिशत थी, वहाँ नब्बे के दशक में यह मात्र 6.5 प्रतिशत रह गयी।

(3) कृषि व संबद्ध पदार्थो की निर्यात संरचना में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। उदाहरण के लिए जहाँ 1990-91 में तीन मदों- काफी, चावल तथा परिष्कृत खाद्य पदार्थो, जूसों व विविध परिष्कृत मदों का कृषि से निर्यात आय में हिस्सा 15.4 प्रतिशत था। वहाँ 1998-99 में यह दुगुने से भी अधिक होकर 34.2 प्रतिशत हो गया। दूसरी ओर, भारत के परम्परागत कृषि निर्यातों जैसे चाय, काजू, गिरि, खली और तम्बाकू के सापेक्षिक हिस्से में कमी आई। जहाँ 1989-90 में इन चार कृषि वस्तुओं का कृषि से कुल निर्यात आयमें हिससा 43.6 प्रतिशत था, वहाँ 1998-99 में यह हिस्सा कम होकर मात्र 26.2 प्रतिशत रह गया।

(4) विनिर्मित वस्तु-समूहों की निर्यात संरचना में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। उदाहरण के लिए इंजीनियरिंग वस्तुओं की निर्यात संरचना में अस्सी व नब्बे दशकों के दौरान मशीनरी व उपकरणों का हिस्सा 30.6 प्रतिशत से कम होकर 21.7 प्रतिशत रह गया जब कि प्राथमिक व अर्धनिर्मित लोहे व इस्पात का हिस्सा 2.9 प्रतिशत से बढ़कर 11.9 प्रतिश्ता हो गया। रसायन व सम्बद्ध उत्पाद समूह में मूलभूत रसायनों, दवाइयों व प्रसाधन सामग्री का हिस्सा कम हुआ जब कि पस्टिक व लिनोलियम के हिस्से में वृद्धि आई। वस्त्र उत्पाद समूह में मानव निर्मित सूत, तन्तु व वस्त्रों के हिस्से में बढ़ोत्तरी हुई। जब कि जूट टैक्सटाइल के हिस्से में कमी हुई।

(5) कुछ वस्तुओं की निर्यात संरचना में परिवर्तन हुआ है और कच्चे माल के स्थान पर अब निर्मित माल का अधिक निर्यात किया जा रहा है, उदाहरण के लिए लोहा व इस्पात उद्योग में कच्चे लोहे के निर्यात में कमी हुई और प्राथमिक व अर्द्धनिर्मित इस्पात के निर्यात में वृद्धि। कुल निर्यात आय में, अस्सी व नब्बे के दशकों के बीच, अयस्कों व

खनिजों का हिस्सा औसतन 5.5 प्रतिशत से कम होकर 3.5 प्रतिशत रह गया।

(6) 1993-94 से 1995-96 के बीच भारत के विनिर्मित निर्यातों का प्रदर्शन उत्साहवर्धक रहा। वस्तुतः कुछ रसायन व वम्बद्ध उत्पादों तथा वस्त्र मदों को छोड़कर सभी मुख्य विनिर्मित निर्यात वस्तुओं का प्रदर्शन इस अवधि में अस्सी के दशक के तुलना में बेहतर रहा। हांलाकि 1996 के बाद विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में वृद्धि रूक गयी औरसंरचनात्मक परिवर्तन की प्रक्रिया में भी रूकावट आई तथापि कुल निर्यात आय में कुछ विनिर्मित उत्पादों जैसे मानव-निर्मित सूत, तन्तु व वस्त्रों, इन्जीनियरिंग वस्तुओं, रसायन व सम्बन्ध उत्पादों तथा प्लास्टिक व लिनोलियम के हिस्से में नब्बे के दशक के दौरान अस्सी के दशक की तुलना में काफी वृद्धि हुई, दूसरी ओर, इसी अवधि में चमड़ा व चमड़े स निर्मित उत्पादों तथा जवाहरात व आभूषणों के हिस्से में गिरावट आई।

(7) विनिर्मित वस्तुओं के उत्पाद समूहों को देखे तो यह बात सामने आती है कि जिन समूहों की आतंरिक संरचना में परिवर्तन नहीं हुआ उनका निर्यात निष्पादन निराशाजनक रहा जब कि जिन उत्पाद समूहों की आन्तरिक संरचना में परिवर्तन हुए, उनका निर्यात निष्पादन अपेक्षाकृत बेहतर रहा।

(8) रिपोर्ट के अनुसार, अस्सी के दशक में भारत के निर्यात ढांचे में बहुत सी ऐसी वस्तुओं का हिस्सा काफी अधिक था जिनके लिए अन्तर्राष्ट्रीय मांग में वृद्धि अत्यधिक कम थी। इस प्रकार विदेशी बाजारों की बढ़ती हुई मांग आवश्यकताओं और भारत की निर्यात वस्तुओं की संरचना में उचित तालमेल नहीं था। यह कठिनाई भारत के निर्यात प्रयासों में एक बहुत बड़ी बाधा थी, परन्तु नब्बे के दशक में इस बाधा को दूर करने में काफी सहायता मिली और उन निर्यात वस्तुओं की सम्वृद्धि दर में सुधार आया जिनकी अन्तर्राष्ट्रीय मांग में वृद्धि हो रही है। विश्व मांग के अनुरूप, निर्यात

वस्तुओं की संरचना में होने वाला यह परिवर्तन भविष्य में भारतीय निर्यातों के बेहतर प्रदर्शन की आशा जगाता है।

आयातों में संरचनात्मक परिवर्तन :

जहाँ तक अयातों में होने वाले संरचनात्मक परिवर्तनों का सम्बन्ध है Report on Currency and finance, 1998-99 में निम्नलिखित तथ्यों की चर्चा की गई है :-

(1) 1992 से 1999 के दौरान भारत के कुल औसत वार्षिक आयात (सोने और चांदी के आयातों को छोड़कर) 31692 मिलियन डालर थे जो 1987 से 1991 के बीच होने वाले औसत वार्षिक आयातों की तुलना में 54.7 प्रतिशत अधिक थे इन दो अवधियों के बीच औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए आयातित मदों में 46.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई जब कि अन्य वस्तुओं (जिनमें मुख्यतया अन्तिम उपभोग वस्तुएं आती है) के आयातों में 71.9 की वृद्धि हुई।

(2) जहाँ तक उद्योग सम्बन्धित आयातों का प्रश्न है पूंजीगत वस्तुओं के आयातों में 56.9 प्रतिशत की तेज वृद्धि हुई जबकि कच्चे माल और मध्यवर्ती वस्तुओं के आयातों में 39.7 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई। जहाँ तक पूंजीगत वस्तु समूह का सम्बन्ध है, उन पंजीगत वस्तुओं के आयातों में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हुई जिनका उपयोग धातुओं मशीन टूल्स व बिजली की मशीनरी इलेक्ट्रानिक व कम्प्यूटर समेत) के उत्पादन में किया जाता है और इन पूंजीगत वस्तुओं के आयातों में अपेक्षाकृत कम वृद्धि हुई। जिनका उपयोग गैर बिजली मशीनरी और परिवहन उपकरणों के उत्पादन में किया जाता है। यद्यपि कच्चे माल और मध्यवर्ती वस्तुओं के कुल आयातों में वृद्धि अपेक्षाकृत कम रही तथापि निर्यात गतिविधयों से जुड़ी हई आयात वस्तुओं (जैसे काजू, गिरि, वस्त्र, सूत, तागे इत्यादि) तथा रसायनों के आयातों में तेज वृद्धि हुई।

(3) अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में तेल की कीमतों में तेज उतार-चढ़ाव के कारण, पेट्रोलियम तेल व लुब्रीकेन्ट पर आयात व्यय में भी तेज उतार चढ़ाव दिखाई देते है।

1988–91 के दौरान पेट्रोलियम तेल व लुब्रीकेन्ट पर आयात व्यय की औसत वार्षिक संवृद्धि दर 12 प्रतिशत थी। 1992–97 में 33.4% और न्यूनतम 1998–99 में पेट्रोलियम तेल और लुब्रीकेन्ट पर अयात व्यय में 21.2 प्रतिशत की कमी हुई) यद्यपि 1992–99 के दौरान इस मद पर आयात व्यय में अपेक्षाकृत कम (4.6 प्रतिशत) की वार्षिक संवृद्धि दर रही तथापि इस पर 1992–99 के दौरान 7.123 मिलियन डालर वार्षिक का आयात व्यय हुआ जो 1987–91 के दौरान इस पर होने वाले औसतन वार्षिक आयात व्यय 3,981 मिलियन डालर की तुलना में 79.2 प्रतिशत अधिक था। इसके परिणाम स्वस्वरुप पेट्रोलियम तेल व लुब्रीकेन्ट का कुल आयात में हिस्सा 1987–91 में 19.4 प्रतिशत से बढ़कर 1992–99 में 22.5 प्रतिशत हो गया।

(4) इसी प्रकार 1987–91 की अपेक्षा, 1992–99 में विनिर्मित उर्वरकों पर ओसत आयात व्यय 77.7 प्रतिशत अधिक था। हांलाकि इस मद पर वार्षिक आयात

संवृद्धि दर 1992–99 में मात्र 9.5 प्रतिशत थी जबकि 1987–91 में यह दर 79.5 प्रतिशत थी।

(5) उपभोग वस्तुओं पर आयात व्यय में वृद्धि अपेक्षाकृत कम (27.3 प्रतिशत) रही और कुल आयात में इनका हिस्सा जो 1987–91 में 403 प्रतिशत थी, 1992–99 में कम होकर 3.6 प्रतिशत रह गया। परन्तु इस वर्ग में खाद्य तेलों के आयात में 55.9 प्रतिशत और चीनी के आयात में 269.3 प्रतिशत वृद्धि हुई।

(6) हाल के वर्षों में सरकारी नीति के परिणामस्वरूप सोने और चांदी के आयात में वृद्धि हुई है। 1991 में स्वर्ण नियन्त्रण आदेश को निरस्त करने के बाद, सोने के आसयातों के उदारीकरण की दिशा में कई कदम उठाये गये है। उदाहरण के लिए जनवरी 1997 में लौट रहे अनिवासी भारतीयों को 10 किग्रा0 तक सोना लाने की अनुमति दी गयी है। विशेष आयात लाइसेंस जरिए भी सोने का आयात किया जा सकता है। इसके अलावा अक्टूबर 1997 से कुछ अधिकृत एजेन्सियों को खुले सामान्य लाइसेंस

के अधीन सोना आयात करने की अनुमति दी गई है ताकि जौहरियों और घरेलू उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

रिपोर्ट के अनुसार, भारत के आयातों के संरचना में उपरिलिखित परिवर्तनों के लिए निम्न कारक उत्तरदायी है। (1) अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में होने वाले परिवर्तन (2) व्यापार नीति में परिवर्तन (3) घरेलू मांग पैटर्न। उदाहरण के लिए पेट्रालियम तेल व लुब्रीकेन्ट पर आयात व्यय उतार-चढ़ाव का कारण अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में परिवर्तन थे। इसी प्रकार विनिर्मित वसतुओं की अन्तर्राष्टीय कीमतों में हाल के वर्षों में काफी कमी हुई जिससे उन पर आयात व्यय में वृद्धि अपेक्षाकृत कम रही। दूसरी ओर सोन व चांदी खाद्यतेलों और उर्वरकों के आयातों में वृद्धि के लिए मुख्य उत्तरदायी कारक सरकार की व्यापार नीति रही। इसी प्रकार पूंजीगत वस्तुओं पर आयात प्रतिबन्धों में कमी के कारण 1992-99 में इन पर आयात व्यय काफी बढ़ गया। जहाँ तक तीसरो कारक घरेलू मांग पैटर्न का सम्बन्ध है, भारत में औद्योगिक संवृद्धि और

आयातों में स्पष्ट सम्बन्ध दिखाइ देता है। वस्तुतः भारत के आयातों का एक बड़ा हिस्सा औद्यागिक सेक्टर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए है।

व्यापार दिशा में परिवर्तन :

निर्यात :- उपरिलिखित दो अवधियों (1987-88 से 1990-91 तथा 1992-93 से 1998-99) के बीच भारत के निर्यातों की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। जहाँ जापान, अमेरिका और योरोपीय संघ का भारत की कुल निर्यात आय में हिस्सा अस्सी के दशक और नब्बे के दशक के दौरान लगभग 50 प्रतिशत पर स्थिर रहा, वहाँ परिवर्तनशील अर्थव्यवस्थओं और विकासशील देश के हिस्से में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए जैसा कि निम्नलिखित विवेचन से स्पष्ट है -

(1) भारत की निर्यात आय में यूरोपीय संघ का हिस्सा 1987-91 की अवधि में औसतन 25.6% था जो 1992-99 की अवधि में थोड़ा बढ़कर 26.7% हो गया। इसी दौरान, अमेरिका का हिस्सा 16.7% से बढ़कर 19.3

प्रतिशत और जापान का हिस्सा 10% से कम होकर 6.5% हो गया।

(2) सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तनों में से एक परिर्वन यह हे कि पूर्वी यूरोप के हिस्से में तेज गिरावट आई है। 1987-91 मे पूर्वी यूरोप का निर्यात आय में हिस्सा 17.7 प्रतिशत था जो 1992-99 में कम होकर मात्र 3.8 प्रतिशत रह गया। इस गिरावट का मुख्य कारण सोवियत संघ का विघटन था (सोवियत संघ का नर्यात आय में हिस्सा 1987-91 में 14.7 प्रतिशत था जबकि 1992-99 में रूस का निर्यात आय में हिस्सा मात्र 3.1 प्रतिशत था।

(3) भारत की निर्यात आय में तेल निर्यातक देशों का हिस्सा 1987-91 में 6.1 प्रतिशत से बढ़कर 1992-99 में 9.9 प्रतिशत हो गया। इसका मुख्य कारण इंडोनेशिया और संयुक्त अरब इमिरात को निर्यात वृद्धि था।

(4) भविष्य में निर्यात सम्भावनाओं के दृष्टि कोण से सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत की निर्यात आय में विकासशी देशों के हिस्से में वृद्धि हो रही है।

1987–91 की अवधि में विकासशील देशों का भातर की निर्यात आयय में हिस्सा औसतन 16 प्रतिशत था जो 1992–99 के दौरान बढ़कर 27.8 प्रतिशत हो गया। कुछ ऐशियाई देशों जैसे बॉग्लादेश, श्रीलंका, हांगकांग, मलेशिया, सिंगापुर तथा थाईलैण्ड को निर्यातों में उत्साहजनक वृद्धि हुई है।

(5) जहाँ तक वस्तु अनुसार विभिन्न देशों को निर्यातों का सम्बन्ध है, 1987–91 से 1992–99 की अवधियों के दौरान अमेरिका का महत्व काफी, तम्बाकू, मसाले, काजू, चमड़ा व चमड़े से निर्मित पदार्थ, इंजीनियरिंग वस्तुओं, सिले सिलाये कपड़ो तथा गलीचों जैसी कई वस्तुओं के लिए बढ़ा है। जहाँ तक अन्य औद्योगिक देशों का सम्बन्ध है, इटली का महत्व काफी और इन्जीनियरिंग वस्तुओं के लिए जर्मनी का महत्व काफी के लिए, बेल्यिम का महत्व तम्बाकू के लिए, इंग्लैण्ड क महत्व काजू के लिए और जापान का महत्व गलीचों के लिए और जापान का महत्व गलीचों के लिए बढ़ा है। जहाँ तक विकासशील देशों का सम्बन्ध है संयुक्त

अरब इमिरात को कई भारतीय वस्तुओं का निर्यात बढ़ा है जिनमें चाय, मसाले, समुद्री उत्पाद इंजीनियरिंग वस्तुएं ओर सिले सिलाये कपड़े शामिल है। सिंगापुर का महत्व मसालों व खली के लिए तथ हांग-कांग का महत्व जवाहरात व आभूषण के लिए बढ़ा है। इनके अलावा नब्बे के दशक में, चीन का महत्व समुद्री उत्पादों तथाक चे लोहे के लिए, सउदी अरब, बांग्लादेश तथा दक्षिण अफ्रीका का महत्व चावल के लिए, दक्षिण कोरिया तथा इंडोनेशिया का महत्व खली के लिए तथा ईरान का महत्व कच्चे लोहे के लिए बढ़ा है।

<u>आयात</u> :- जहाँ तक आयातों की दिशा में परिवर्तन का सम्बन्ध है भारत के आयातों में विकासशील देों के महत्व में तेज वृद्धि हुई है जबकि औद्योगिक देशों के महत्व में कमी आई है। उदाहरण के लिए 1987-91 में औसत 18 प्रतिशत से बढ़कर भारत के आयात व्यय में विकासशील देशों का हिस्सा 1992-99 में 23 प्रतिशत तक पहुंच गया। इसका मुख्यकारण दक्षिण पूर्वी एशिया के नये उभरकर औद्योगिक देशों से बढ़ते हुए आयात है। जहाँ तक आयात व्यय में वृद्धि में

विभिन्न परिवर्तन वस्तुओं के योगदान का सम्बन्ध है, मलेशिया तथा सिंगापुर से पेट्रोलियम तेल व उत्पादों, कोरिया व सिंगापुर से रसायन पदार्थों, तथा हांगकांग, कोरिया मलेशिया एवं थाईलैण्ड से इलेक्ट्रानिक वस्तुओं के आयात का महत्व बढ़ा है।

1987-91 में ओ0ई0सी0डी0 समूह के देशों का भारत के आयात व्यय में हिस्सा 59.4% था। जो 1992-99 की अवधि में कम होकर 52.1 प्रतिशत रह गया। इस समूह में यूरोपीय संघ का सापेक्षिक हिस्सा 1987-91 में 31.8 प्रतिशत से कम होकर 1992-99 में 26.9% रह गया। जहाँ तक यूरोपीय संघ के देशों का सम्बन्ध है, डेनमार्क, यूनान, आयरलैण्ड तथा इटली के हिस्से में तेज वृद्धि हुई जब कि जर्मनी, नीदरलैण्ड स्वीडन तथा इंग्लैण्ड के हिस्से में अपेक्षाकृत धीमी वृद्धि हुई। इंग्लैण्ड का भारत का आयात व्यय में जो हिस्सा 1987-91 के दौरान 7.9 प्रतिशत था, 1992-99 में कम होकर 5.8 प्रतिशत रह गया। अन्य ओ0ई0सी0डी0 समूह के देशों में आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड तथा स्वीटजरलैण्ड से आयातों में सापेक्षिक रूप से

काफी वृद्धि हुई। स्वीटजरलैण्ड का भारत के आयात व्यय में हिस्सा जो 1987–91 में मात्र 1.1 प्रतिशत था, 1992–99 में बढ़कर 4.0 प्रतिशत हो गया। इसका मुख्य कारण इस देश से सोना और चांदी के आयात थे। तेल निर्यातक देशों के समूह का भारत के आयात व्यय में हिस्सा 1987–91 में 14.5 प्रतिशत से बढ़कर 1992–99 में 21.9 प्रतिशत हो गया। इसका मुख्य कारण पेट्रोलियम और लुब्रीकेन्ट पर बढ़ता हुआ आयात व्यय था जिसके लिए मुख्यतया तेल की बढ़ती हुई अन्तर्राष्ट्रीय कीमतें जिम्मेदार थी। पूर्वी यूरोपीय देशों का आयात व्यय में हिस्सा 1987–91 में 8.1 प्रतिशत था जो 1992–99 में कम होकर मात्र 2.9 प्रतिशत रह गया।[1]

<u>नब्बे के दशक में व्यापारिक नीति में परिवर्तन :</u>

1. रूपये की पूंजी खाते तथा चालू खाते पर पूर्ण परिवर्तनीयता घोषित की गई है। अब विनिमय दर बाजार में विदेशी मुद्रा की मांग और आपूर्ति द्वारा निर्धारित होगी। इसके

---

[1] भारतीय अर्थ व्यवस्था, एस0के0 मिश्र तथा वी0के0 पुरी, भारत का विदेशी व्यापार, मूल्य संरचना और दिशा, पेज नं0 40

लिए पहले उदारीकृत विनिमय दर प्रबन्ध प्रणाली का एक वर्ष का दोहरी विनिमय प्रणाली का अनुभव सम्मिलित है।

2. <u>नकद क्षतिपूर्ति सहायता की समाप्ति</u> – व्यापार नीति में व्यापक उदारतावाद तथा रूपये के अवमूल्यन को देखते हुए सरकार ने तर्क दिया कि अब नकद क्षतिपूर्ति सहायता की आवश्यकता नहीं रही। इसलिए 3 जुलाई 1991 से इसे समाप्त कर दिया गया।

3. <u>एक्जिम प्रतिभूमि पत्र</u>– जुलाई 1991 को घोषित आयात–निर्यात नीति में आयात लाइसेंसिंग नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन के अन्तर्गत आयातों के प्रशासित लाईसेंसिंग के स्थान पर निर्यात आय से जुड़ी आयात हकदारी योजना शुरू की गई। पुनर्पूर्ति लाईसेंस प्रणाली का विस्तार किया गया और उसे उदार बनाया गया। इसे एक नया नाम एक्जिम प्रतिभूति पत्र दिया गया। इन प्रतिभूति पत्रों का खुला व्यापार करने की अनुमति दी गयी और इन पर बाजार में प्राप्त होने वाला अधिमूल्य निर्यातकों को एक प्रकार का निर्यात प्रोत्साहन था तथा बाजार शक्तियों के अनुसार आयातों के आवंटन के

माध्यम था जवाहरात व आभूषण, कुछ धातु आधारित हस्तशिल्प वस्तुओं तथा पुस्तकों व पत्रिकाओं को छोड़कर अन्य सभी निर्यात वस्तुओं पर निर्यात मूल्य के 30 प्रतिशत के बराबर एक सी एक्जिम प्रतिभूति पत्र दर निर्धारित की गई। उस समय प्रचलित 5 से 20 प्रतिशत दरों की तुलना में यह दर काफी ऊँची थी। 1992-93 के बजट में उदारीकृत विनिमय दर-प्रबन्ध प्रणाली लागू होने पर एक्जिम प्रतिभूति पत्र की योजना समाप्त कर दी गई।

4. <u>आयात कार्यप्रणाली का सरलीकरण</u> : भारतीय व्यापार नीति लम्बे समय तक कई प्रशासनिक नियन्त्रणों तथा लाइसेंस का जमघट रहा है। पंचवर्षीय आयात-निर्यात नीति 1992-97 में आयात कार्यप्रणाली को सरल बनाने का एक बड़ा प्रयत्न किया गया है। अब केवल दो प्रकार के आयात लाइसेंस रखे गये है- ये है अग्रिम लाइसेंस तथा विशेष आयात लाइसेंस। अन्य सभी आयात लाइसेंसों को समाप्त कर दिया गया है। आयात संबंधी नियमों को लगातार सरल

बनाया जा रहाहै, प्रशासनिक नियत्रणों को कम तथा लाइसेंस राज को समाप्त किया जा रहा है।

5. **<u>शुल्क छूट योजना का विस्तार :-</u>** शुल्क से छूट की योजना का विस्तार किया गया है। मात्रा-आधारित अग्रिम लाइसेंसां के सथ अब मूल्य आधारित अग्रिम लाइसेंसों को भी शुरू किया गय है। इसका लाभ यह होगा कि अब कुछ मूल्य सीमाओं के अन्तर्गत तथा बिना मात्रात्मक प्रतिबन्धों के निर्यातकों को वस्तुओं का आयात-निर्यात करने की छूट होगी।

6. **<u>आसान आयात व निर्यात :-</u>** जुलाई 1991 की व्यापार नीति में अग्रिम लाइसेंसों की प्रणाली को और मजबूत बनाया गया क्योंकि इस प्रणाली के जरिए निर्यातकों को अपने जरूरत के आगत बिना सीमा शुल्क दिये मंगाने की अनुमति थी। पूंजीगत वस्तुओं के आयातों की कार्यप्रणाली को भी सरल बनाया गया। नई इकाईयों और विस्तार-अधीन इकाईयों को पूंजीगत वस्तुओं के आयात के लिए लाइसेंस प्रदान करने की व्यवस्था रखी गई। चाहे ये वस्तुएं घरेलू बाजार में उपलब्ध हो।

1992-97 की आयात-निर्यात नीति में कुछ वस्तुओं को छोड़करा सभी वस्तुओं के आयात की अनुमति दी गई है। जिन वस्तुओं का आयात नहीं किया जा सकता उनहें एक नकारात्मक सूची में रखा गया है। इस सूची में उपभोक्ता वस्तुएं (इसमें 28 विशिष्ट मदें शामिल नहीं हैं) तथा 70 अन्य मदें है। इनके आयात पर प्रतिबन्ध लागू रहेंगे। तीन वस्तुओं के आयात पर पूर्ण पाबन्दी रहेगी- ये तीन वस्तुएं है- पशुओं की चर्बी, पशुओं का रेनेट तथा अनिर्मित हाथी दांत। इसी प्रकार, एक नकारात्मक सूची के अतिरिक्त अब अन्य सब मदों का मुख्य निर्यात किया जा सकेगा। 7 वस्तुओं के निर्यात पर पूर्ण पाबन्दी होगी। इनमें गोमांस, पशुओं की चर्बी, मानव के अस्ति-पंजर, लकड़ी व लकड़ी के उत्पाद शामिल है। इसके अलावा 62 वस्तुओं के निर्यात को प्रतिबंधित सूची में रखा गया है अर्थात इन वस्तुओं के निर्यात के लिए लाइसेंस की आवश्यकता होगी।

7. <u>निर्यात उन्मुख इकाइयों तथा निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्र को और सुविधाएं :-</u> 1992-97 की नीति में 100

प्रतिशत निर्यात उन्मुख इकाइयों तथा निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्र की इकाइयों को घरेलू प्रशुल्क क्षेत्र से निर्यात करने वाली इकाइयों की तुलना में अधिक सुविधायें व रियायतें दी गई हैं। अब इन योजनाओं का नई गतिविधयों तक विस्तार किया गया है, जिनमें बागवानी, मछली पालन, मुर्गी पालन तथा पशुपालन और गई सम्बन्धित गतिविधियां व सेवाएं शामिल हैं।

8. **निर्यात गृहों व व्यापार गृहों को और सुविधाएं:-**

1991 की नीति में निर्यात गृहों, व्यापार गृहों तथा स्टार व्यापार गृहों को कई मदों के आयात की अनुमति दी गई। सरकार ने नियातों को प्रोत्साहित करने के दृष्टिकोण से 51 प्रतिशत विदेशी इक्विटी के साथ व्यापार गृहों की स्थापना की अनुमति दी। इन व्यापार गृहों को घरेलू निर्यात गृहों व व्यापार गृहों को उपलब्ध सभी लाभों व रियायतों का आश्वासन दिया गया।

9. **केवल सरकारी एजेंसियों के माध्यम से व्यापार करने की शर्त को हटाया जाना :-** भारत में कई वस्तुओं का आयात व निर्यात केवल सरकारी एजेंसियों के माध्यम से

किया जा सकता था। 13 अगस्त, 1991 को घोषित अनुपूरक व्यापार नीति में इस सूची का विवेचन किया गया और 16 निर्यात मदों तथा 20 आयात मदों को इस सूची से मुक्त कर दिया गया। 8 वस्तुओं को छोड़कर अब सारी वस्तुओं का आयात तथा निर्यात अमार्गीकृत कर दिया गया है।

आयात-निर्यात नीति में 1993 व 1994 में किए गए परिवर्तन :

1992-97 की आयात-निर्यात नीति में मार्च 1993 व मार्च 1994 में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन किए गए है। इनका उद्देश्य उदारीकरण की प्रक्रिया को और तेज करना तथा निर्यातकों को और रियायतें देना है ताकि निर्यात की वृद्धि दर को और बढ़ाया जा सके। कुछ उठाये गये महत्वपूर्ण कदम निम्नलिखित है :-

1. संशोधित नीति में कृषि व संबद्ध क्षेत्रों से निर्यातों को प्रोत्साहित करने पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस उद्देश्य के लिए इन क्षेत्रों में निर्यात-उन्मुख इकाइयों की स्थापना को उच्च प्राथमिकता दी गयी है। कृषि, मछली पालन,

पशु पालन, मुर्गी पालन, रेशम उत्पादन, फूल फल उत्पादन जैसे क्षेत्रों में काम कर रही इकाइयों को निर्यात उन्मुख इकाइयों/निर्यात प्रोसैसिंग क्षेत्र योजनाओं के अन्तर्गत बिना शुल्क दिये आयात करने की सुविधा प्रदान की गयी और इन योजनाओं में लाभ उठाने के एि उन पर शर्त केवल यह होगी कि वे कम से कम 50 प्रतिशत उत्पादन का निर्यात करे। कृषि व संबद्ध क्षेत्रों में स्थापित निर्यात-उन्मुख इकाइयां/निर्यात प्रोसैसिंग क्षेत्र की इकाइयां अपनी जरूरत का पूंजीगत सामान रियायती शुल्क दरों पर खरीद सकेगी। इसके अलावा कृषि व संबद्ध क्षेत्रों के लिए आवश्यक कुछ आयात वस्तुओं को नकारात्मक सूची से हटा दिया गा है अर्थात अब इनका आयात बिना बाधा के किया जा सकेगा।

2. पहले निर्यात गृहों, वयापार गृहों तथा स्टार व्यापार गृहों की परिभाषा करते समय शुद्ध कमाई गई विदेशी मुद्रा को आधार माना जाता था। अब इसे बदलकर निर्यातों की मात्रा का मूल्य कर दिया गया है।

3. निर्यात गृहों, व्यापार गृहों, स्टार व्यापार गृहों तथा सुपर स्टार व्यापार गृहों को परिभाषित करते समय निर्यातकों द्वारा सेवाओं के माध्यम से कमाई गई विदेशी मुद्रा का भी उनकी निर्यात आय में शामिल करने की अनुमति दी गयी है।

4. सेवाओं के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए नई योजना 'सेवा क्षेत्र के लिए निर्यात संवर्धन पूंजीगत वस्तु योजना' शुरू की गयी है। इस योजना के तहत व्यावसायिक सेवाएं प्रदान करने वाले व्यक्तियों को 15 प्रतिशत की रियायती शुल्क दर पर पूंजी उपकरणों के आयात की सुविधा दी गई।

5. निर्यात प्रोसैसिंग क्षेत्रों की गतिविधियों का विस्तार किया गया है और अब इन्हें व्यापार करने की तथा नई पैकिंग के बाद वस्तुओं को पुनः निर्यात करने की अनुमति दी गयी है।

6. 30 मार्च 1994 को घोषित नीति में सुपर स्टार व्यापार गृहों का एक नया वर्ग शुरू किया गया है। उन निर्यातकों को इस वर्ग में शामिल किया जायेगा जिन्होंने

पिछले तीन वर्षों में लगातार 750 करोड़ रूपय प्रतिवर्ष का व्यापार किया होगा या फिर पिछले वर्ष 1000 करोड़ रूपये या उससे अधिक का व्यापार किया होगा।

7. निर्यात गृहों को उपलब्ध विशेष आयात लाइसेंसों में 1 प्रतिशत की वृद्धि की गई है और अब इनके अधीन निर्यात गृह, अपनी निर्यात आय के अनुसार 3 से 5 प्रतिशत तक का आयात कर सकेंगे। सुपर स्टार व्यापार गृहों के लिए विशेष आयात लाइसेंसों की सीमा 10 प्रतिशत होगी। इन आयात लाइसेंसों के माध्यम से अब निर्यात गृह व व्यापार गृह बहुत सी उपभोक्ता वस्तुओं का आयात कर सकेंगे जेसे-कार, रफ्रिजिरेटर, एयर कंडीशनर, रंगीन टी0वी0, कैमरे इत्यादि।

8. निर्यात सम्बर्धन पूंजीगत वस्तु योजना को आसान बनाया गया है तथा निर्यात दायित्व पूरा करने के लिए अन्य उत्पादकों से वस्तुएं खरीद का उहें निर्यात करने की अनुमति दी गई है।

9. वाणिजय मन्त्रालय में एक निर्यातक शिकायत कक्ष की स्थापना की गई है ताकि निर्यातकों की समस्याओं का जल्द समाधान किया जा सके।

10. वास्तविक प्रयोगकर्ताओं को इस्तेमाल हो चुकी पूंजीगत वस्तुओं के आयात की अनुमति दी गई है, बशर्ते इस प्रकार आयात की जानेवाली पूंजीगत वस्तुओं की शेष आयु 5 वर्ष से कम न हो।

11. उपभोक्ता वस्तुओं को छोड़कर अन्य वस्तुओं के खुले आयात की तथा एडवांस लाइसेंसिंग योजना के अधीन, निर्यात–उद्योगों के लिए शुल्क मुक्त आयात नीति को चालू रखा गय है। वस्तुतः शुल्क से छूट की योजना का और 50 प्रतिशत तक विस्तार किया गया है।

1997 में नई आयात–निर्यात नीति के अन्तर्गत उठाये गये कदम :

इस नई आयात–निर्यात नीति के तहत आर्थिक सुधार कार्यक्रम को अधिक मजबूत करने के लिए उदारीकरण,

पारदर्शिता और सरलीकरण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गयी है। इस नई नीति में कुछ उठाये गये कदम निम्नलिखित हैं-

1. निर्यात और आयात से सम्बन्धित कागजी प्रक्रियाओं को पहले से काफी आसान और पारदर्शी बना दिया गया है।

2. अभी तक प्रतिबन्धित सूची में शामिल 542 वस्तुओं के आयात को उदार बना दिया गया है।

3. इस नई नीति में कृषि और सम्बद्ध क्षेत्र के निर्यात को बढ़ावा दिया गया है तथा जवाहरात का निर्यात बढ़ाने के लिए सोने के भण्डारण के लिए नामांकित एजेंसियों की संख्या बढ़ा दी गयी है।

4. ई0पी0सी0जी0 योजना के अन्तर्गत पूंजीगत वस्तुओं पर आयात शुल्क को 15 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत कर दिया गया है।

5. निर्यात प्रक्रिया को सरलीकरण करने के लिए नई आयात योजनाओं को अब दो योजनाओं तक सीमित कर दिया गया है। मात्रा आधारित अग्रिम लाइसेंस योजना को निरस्त

कर दिया गया है। पास बुक योजना में संशोधन करके ड्यूटी इन्टाईटिलमेन्ट पास बुक योजना को लाया गया है। नए पास बुक के अन्तर्गत निर्यात उत्पादन के लिए निर्यातक शुल्क रहित आयात कर सकते है।

6. निर्यात सम्वर्द्धन के लिए शून्य ड्यूटी योजना की सीमा 20 करोड़ रूपये से घटाकर 5 करोड़ रूपये कर दिया गया है ताकि कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों को राहत मिल सके।

7. अग्रिम लाइसेंस के अन्तर्गत निर्यात करने की प्रतिबद्धता की अवधि एक साल से बढ़ाकर डेढ़ साल कर दिया गया है।

8. निर्यात के लिए प्रत्येक आवेदन के साथ भारी संख्या में आवेदनों की संख्या काफी कम कर दी गयी है और इन आवेदन पत्रों में एक ही सूचना को बार-बार देने की आवश्यकता समाप्त कर दी गयी है।

9. नई नीति में लघु उद्योगों और विशेषकर देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लघु उद्योगों को विशेष प्रोत्साहन दिया गया है।

10. देश के उत्पादन की गुणवत्ता तथा उसकी विश्वसनीयता और साख बढ़ाने के लिए आई0एस0आई0 मानकदण्ड पर पूरा उठाने वाले निर्यात को उनके निर्यात की कथित के दो प्रतिशत के स्थान पर पांच प्रतिशत के बाराबर का विशेष आयात लाइसेंस दिया गया है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन :

भारतीय निर्यात क्षेत्र का निर्यात सम्बर्द्धन प्रलोभन पारदर्शी प्रकृति का है। सभी निर्यातक बढ़ते प्रतियोगिता के फलस्वरूप पूर्ण प्रलोभन प्राप्त करने की कोशिश करते है और सम्वर्द्धन इकाइयों के लीा से भारतीय निर्यातक दूर रहते हैं। सचमुच इनके परिणाम स्वरुप ज्यादा से ज्यादा प्रलोभन की आवश्यकता का जन्म होता है। इसके विपरीत विकसित आयातक देशों की सरकारें इन प्रलोभनों का प्रभाव और

उद्देश्य यहाँ अपारदर्शी प्रकृति में है। केवल सम्बर्द्धन प्रलोभन से नीति ढांचे का निर्माण किया जा सकता है।

बाजार विकास सहायता योजना में उत्पाद सम्वर्द्धन तथा वस्तु विकास के तहत 1989-90 में सरकार ने 1,780.16 करोड रूपये खर्च किया जो अगले वर्ष 1990-91 में बढ़कर 2473.65 करोड़ रूपया हो गया। 1991-92 में खर्च घट कर 1591.19 करोड़ रूपयो हो गया और अगले वर्ष 1992-93 में पुनः घटकर 662.42 करोड़ रूपये हो गया। 1991-92 से खर्च घटने का क्रम जारी रहा, तथा 1993-94 में घटकर 639.94 करोड़ रूपया हो गया और 1994-95 (सितम्बर 94 तक) में 77.05 करोड़ रूपया रहा।

इस प्रकार निर्यात संवर्द्धन और बजार विकास संगठनों की सहायता अनुदान के रूप में 1989-90 में 15.92 करोड़ रूपयो खर्च किया गया और 1990-91 में खर्च बढ़ाकर 17.84 करोड़ रूपया कर दिया गया। 1991-92 में इसमें वृद्धि करके 22.66 करोड़ रूपये खर्च किया गया।

1989–90 से 1991–92 तक वास्तविक खर्च में वृद्धि जारी रहा लेकिन 1992–93 में खर्च में कमी आनी शुरू हो गयी जो 1992–93 में 15.07 करोड़ रूपयो हो गया और आगे चलकर 1993–94 में पुनः घटकर खर्च 11.99 करोड़ रूपया हो गया तथा 1994–95 में 4.55 करोड़ रूपया रहा। सरकार द्वारा खर्च में कमी करना उचित नहीं है। निर्यात साख योजना 1968 के तहत व्यापारिक बैंकों द्वारा 90 से 180 दिन का जहाज लदायी के पूर्व और जहाज लदायी के बाद 12% प्रतिवर्ष व्याज पर दिया जाता है, जिसे रिजर्व बैंक आफ इण्डिया द्वारा निर्यातकों को लौटा दिया जाता है।

इस योजना के तहत व्यापारिक बैंकों को 3% प्रतिवर्ष की राष्ट्रीय सहायता दी जाती है। 1974–75 से 1983–84 तक यह सुविधा निर्यात के कुल एफ0ओ0बी0 मूल्य मात्र का 0.5 प्रतिशत था। 1986–87 के दौरान 3146 करोड़ रूपया निर्यात साखसहायता इस योजना के तहत प्रदान की गयी तथा 1987–88 के दौरान रकम 3940 करोड़ रूपया था। स्पष्ट है कि लाल फीताशाही एवं इसी तरह

के कारणों से इस योजना में सरकार बैंकों द्वारा दी जाने वाली निर्यात ऋण धनराशि पर लगने वाले ब्याज के लिए सहायता प्रदान करती है। 1989-90 में सरकार ने 218.25 करोड़ रूपये खर्च किया जो अगले वर्ष बढ़कर 1990-91 में 250.04 करोड़ रूपया हो गया। 1991-92 में इसमें कमी आयी जो घटकर 139.93 करोड़ रूपया हो गया तथा इसमें अगले वर्ष नाम मात्र की वृद्धि हुई जो बढ़कर 141.00 करोड़ रूपया हो गया। 1993-94 में एकदम से घटकर 12.79 करोड़ रूपया हो गया औा 1994-95 में 0.01 करोड़ रूपया रहा 1992-93 से प्रतिवर्ष जो खर्च में कमी आ रही है वो ठीक नहीं है, इससे हमारे देश का निर्यात घटता है, निर्यातक हतोत्साहित होते हैं जिससे निर्यात उचित मात्रा में बढ़ नहीं पाता।

निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए निर्यात संसाधन क्षेत्रों की स्थापना की गयी है। निर्यात संसाधन क्षेत्रों के द्वारा निर्यात 1991-92 में 1176.07 करोड़ रूपया का किया गया और इस क्षेत्र के निर्यात प्रगति में निरन्तर वृद्धि

जारी रहा जो 1992–93 में बढ़कर 1376.31 करोड़ रूपया हो गया। 1993–94 में बढ़कर निर्यात 1,959.91 करोड़ रूपया हो गया था।

निर्यात संसाधन क्षेत्र से प्रतिवर्ष निर्यात का प्रदर्शन अच्छा रहा। लेकिन जिस गति से इस क्षेत्र से निर्यात होना चाहिए उस रफ्तार से निर्यात नहीं हो पा रहा है। शतप्रतिशत निर्यातोन्मुखी इकाइयों के योजना के अन्तर्गत स्थापित इकाइयों का पूरा पालन निर्यात के लिए किया जाता है। इन सब प्रतिशत निर्यात उन्मुख इकाइयों से निर्यात 1987–88 में 245 करोड़ रूपये का किया गया। जो बढ़ कर 1990–91 में 678 करोड़ रूपये हो गया। प्रतिवर्ष निर्यात में निरन्तर वृद्धि जारी रहा। जो 1992–93 में 1940 करोड़ रूपया गया। 1993–94 में 2900 करोड़ रूपया रहा। और 1994–95 (अप्रैल सितम्बर 1994 तक) में 1642 करोड़ रूपया था। इन शतप्रतिशत निर्यात उन्मुख इकाइयों से प्रतिवर्ष निर्यात वृद्धि जारी रहा। जो देश के निर्यात प्रगति में अच्छा योगदान दे रहे है। इनका पूरे का पूरा उत्पादन निर्यात के

लिए होता है। इन इकाइयों की स्थापना किसी भी स्थान पर की जा सकती है। इन इकाइयों को बिना आयाात शुल्क दिये कच्चे माल मध्यवर्ती वस्तुओ, पूंजीगत वस्तुओं तथा टेक्नोलॉजी के आयात की सुविधा है। परन्तु जटिल नियमों व प्रशासनिक देरियों के कारण तथा अर्धविकसित आधारित संरचना के कारण निर्यात आय बढ़ाने में इन योजनाओं को विशेष सफलता नहीं मिली।

1991-92 में निर्यात निरीक्षण अभिकरणों ने 258174 जी0एस0पी0 प्रमाण जारी किया। 1992-93 (31.10.92) तक के दौरान 169593 जी0एस0पी0 प्रमाणपत्र जारी किया जो कम रहा। 1993-94 में बढ़कर 379299 जी0एस0पी0 प्रमाणपत्र जारी किया जो ज्यादा रहा। पिछले वर्ष की तुलना में। 1.4.94 से 31.12.94 की अवधि में 268681 जी0एस0पी0 प्रमाणपत्र जारी किया गया। कई क्षेत्रों में हमारी योग्यताएं विश्व के कई महत्वपूर्ण बाजारों में महसूस की गयी है लेकिन गुणस्तर की कमी के कारण हमें फिर भी शिकायतें मिलती रहती है।

नगर क्षति पूर्ति सहायता के अन्तर्गत 1994-75 से लेकर 1983-84 तक निर्यात के कुल एफ0ओ0बी0 का केवल 5% भाग था इस योजना के अन्तर्गत न्यूनतम लाभ का कारण लम्बी कार्यप्रणाली एवं समय लेने वाली पद्धति है। अतः आवश्यक हैं कि पद्धति को और आसान बनाया जाय तथा भुगतान में शीघ्रता की जाय।[2] ड्यूटी ड्रा बैंक योजना के अन्तर्गत 1973-74 से 1981-82 तक कुल निर्यात के एफ0ओ0बी0 मूल्य का 2.4% सहायता दी गयी। जो 1980 के दशक के दौरान घटकर 1.4% हो गया। इस योजना के तहत नवम्बर 1987 से अक्टूबर 1988 तक 21 बैंको को 17.25 करोड़ रूपये की राशि स्वीकृति की गयी।[3] रेप अनुज्ञा पत्र योजना के तहत 1973-74 में कुल निर्यात के एफ0ओ0बी0 मूल्य के 6% के बराबर सहायता दी गयी। जबकि 1983-84 में यह प्रतिशत 24 हो गया। निर्यात करोड़ में परिवर्तन 1987-88 के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय बाजार

---

[2] डा0 ए0ए0 सिद्दीकी, दि कामर्स जर्नल, वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, 1990-91 पृ0 35

[3] रिपोर्ट आन करेन्सी एण्ड फाइनेन्स, 1987-88, वाल्यूम 1, इकोनॉमिक रिव्यू, पृष्ठ 184

में काफी के मूल्य में कमी आने के कारण काफी के निर्यात शुल्क में कमी की गयी। यह दर 330 रूपये प्रतिकुंतल के स्थान पर 1 मई 1987 से 170 रूपये प्रतिकुंतल कर दिया गया।[4] निर्यात साख एवं गारण्टी निगम के द्वारा 1986-87 में निर्गमित 6757 पालसियों की तुलना में 1987-88 में 6228 पालसिया निर्गत की गयी। 1986-87 में सदस्यों की संख्या 7069 थी। जबकि 1987-88 में सदस्यों की संख्या 6598 थी। व्यापार समझौता और आर्थिक एवं तकनीकी सहकारिता समझौता के तहत आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग बढ़ाने के उद्देश्य से नवम्बर 1987 में चेकेस्लोवाकिया के साथ 275 करोड़ रूपये के निर्यात का पोलैण्ड के साथ 295 करोड़ रूपये के निर्यात का, रोमानिया के साथ 370 करोड़ रूपये के निर्यात का, जमनी के साथ 270 करोड़ रूपये के निर्यात का, रूस के साथ 2500 करोड़ रूपये के निर्यात का समझौता हुआ।[5] सरकार ने 100% निर्यातोन्मुखी इकाइयों को

---

[4] रिपोर्ट आन करेन्सी एण्ड फाईनेन्स 1987-88, वाल्यूम 1, इकोनामिक रिव्यू पृष्ठ 184

[5] डा० ए०ए० सिद्दीकी, दि कामर्स जर्नल, वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, 1990-91

गैट कर से मुक्त कर दिया है। निश्चित ही इन इकाइयों को पहले की तुलना में अधिक सुविधा मिलेगी। लक्ष्य निर्धारण के तहत भारत सरकार ने सन् 2000 तक 600 मिलियन डालर के चाय के निर्यात का लक्ष्य रखा था। जो प्राप्त हो गया।

निर्यात ने अन्ततः भारत के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा किया है। भारत में वर्तमान में एक अच्छे औद्योगिक आधार ने उपभोक्ता सामानों और विस्त्रत मूलधन दर को प्रापत करने के योग्य बनाया। यह योग्यता अच्छे निर्यात उपायों के द्वारा चालू किया गया, जिससे हमारे अर्थव्यवसाी के निर्यात क्षेत्र के विकास में सहायता प्राप्त कर सके। इस निर्यात क्षेत्र को हम विकास के इन्जन का नाम दे सकते है और देश के विकास मेंकाफी सहायता प्रदान किया है। आगे औद्योगिक और आर्थिक विकास की दर को और बढ़ाने के लिए इस क्षेत्र के लिए इस क्षेत्र को पहचानने की आवश्यकता समझी गयी। निर्यात भारतीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी है। राष्ट्रीय प्राथमिकता की

सूची में निर्यात के मध्य 17वीं में भोजन और रक्षा के अलावा तीसरा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी है।

निर्यात क्षेत्र का पूर्ण समर्पित पहचान एक साधारण प्रक्रिया नहीं है। यह हाल ही के वर्षो के दौरान मुख्य रीति उपायों के सही दिशा के परिणाम स्वरूप प्राप्त हुआ है, जिसने देश के निर्यात उपायों को नयी दिशा की ओर चलना सिखाया है। इन नीतियों का सफल होना देश के निर्यात योग्यता में पिछले कुछ वर्षो के दौरान विकास से ही पता चलता है। इस विकास को आंकड़े से नापने के लिए निम्नवत् हैं। 1986-87 में 125500 करोड़ रूपये के निर्यात योग्यता का स्तर 1985-86 तक 14 प्रतिशत की बढ़त प्रदर्शित करता है। 1990-91 के दौरान निर्यात वृद्धि दर 17.7 प्रतिशत रहा तथा 1992-93 में 21.9 प्रतिशत से बढ़कर 1993-94 में 29.9 प्रतिशत तक पहुँच गया।

1997-2002 के लिए नई आयात निर्यात नीति के अन्तर्गत निर्यात और आयात से सम्बन्धित कागजी प्रक्रियाओं को पहले से काफी आसान, सरल और पारदर्शी

बनाया गया है। इससे निर्यात करने वाले निर्यातकों को जटिल कागजी प्रक्रियाओं से मुक्ति मिलेगी तथा निर्यात करने में आसानी होगी। निर्यात को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबन्धित सूची में शामिल 542 वस्तुओं के आयात को उदार बना दिया गया है, इससे निर्यात को असानी से बढ़ाया जा सकता है। ई0पी0सी0जी0 योजना के अन्तर्गत पूंजीगत वस्तुओं पर आयात शुल्क को 15 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत कर दिये जाने से निर्यात के लिए अधिक से अधिक आयात किया जा सकता है, जिससे निर्यात को बढ़ाने में सहायता मिलेगी। निर्यात बढ़ाने के लिए शून्य ड्यूटी योजना की सीमा 20 करोड़ रूपये से घटाकर 5 करोड़ रूपया कर दिया गया है, इससे कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों को राहत मिल सकेगा। नई आयात निर्यात नीति के तहत जहाँ पहले निर्यातकों को लगभग 2 दर्जन फार्म भरने पड़ते थे, अब केवल एक दर्जन फार्म ही भरने होंगे।[6] परन्तु दूसरी ओर 542 और उपभोक्ता वस्तुओं को ओ0जी0एल0 में रखा गया है जबकि अभी भी

---

[6] अरविन्द्र भण्डारी द्वारा लेख, नार्दन इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद

लगभग 3000 उपभोक्ता वस्तुएं प्रतिबन्धित सूची में है। एक आक्षेप के अनुसार अधिक से अधिक वस्तुओं को ओ0जी0एल0 में जाया जाना विश्व बैंक के दबाव पर हुआ है।

अग्रिम लाइसेंस के अन्तर्गत निर्यात करने की प्रतिबद्धता की अवधि एक साल से बढ़ाकर डेढ़ साल कर दिये जाने से निर्यातक को अपने निर्यात आयात गतिविधियों पर ध्यान केन्द्रित करने का समय मिलेगा। नई आयात-निर्यात नीति में सन् 2002 तक 100 अरब डॉलर का निर्यात प्रस्तावित है। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए हमारी सरकार को अपने उन क्षेत्रों पर ध्यान देना होगा जहाँ हमारी ताकत है और जिसके माध्यम से हम विश्व प्रतिस्पर्द्धा की चुनौती का सामना कर सकते है। कृषि ही एक मात्र ऐसा क्षेत्र है, जिसमें निर्यात की संभावना अधिक नजर आती है। अगर सरकार कृषि आधारित क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दे तो इस क्षेत्र से अधिक से अधिक निर्यात को बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान वर्षो में निर्यात के सम्बन्ध में नीति ढांचे के वैज्ञानिक और

क्रमिक विकास के परिणामस्वरूप निर्यात क्रियाकलापों को पूर्ण निर्यात के उत्पादन आधार के लिए मजबूत किया गया है। आयात-निर्यात के क्रमिक कार्यों को सरलीकृत किया गया है, निर्यात वित्त को आसानी से प्रदान किया गया है। बाजार व्यूह रचना बनायी गयी है तथा विस्तृत रूप से आधारित संस्थाओं को साझे के सम्बन्ध में सहायता प्रदान की गयी है।

अब तक की नीति ढाचे के सम्बन्ध में निर्यात उत्पादन के परिणाम स्वरूप विकास हुआ है। जहाँ भी जरूरी हो आयात को उदारीकृत किया गया है और कुछ आधारित कच्चे वस्तुओं को अन्तर्राष्ट्रीय मूलय पर आवश्यक मात्रा में उपलब्ध कराया गया। विभिन्न स्थानों पर मुक्त व्यापार क्षेत्र की स्थापना ने चुने हुए क्षेत्रों में निर्यात धारा को खोजने में सहायता प्रदान की है। यह सहायता इन क्षेत्रों में स्थापित औद्योगिक इकाइयों को प्रदान किये गये प्रलोभन के द्वारा ही सम्भव है। ढेर सारी वस्तुओं को विदेशी बाजार में हमारे उत्पाद के अच्छे गुण की दृष्टि से गुण नियन्त्रण के छाते के अन्तर्गत लाया गया है। देश के निर्यात उपायों में संस्थाओं की

सहायता भी बहुत महत्वपूर्ण है। वर्तमान वर्षों में बनायी गयी नीति ढांचा ने इन संस्था व्यवस्थाओं को मजबूत बनाया है और जहाँ भी आवश्यक हो वहाँ के संस्थागत मशीनों को फिर से शुरू किया गया है। प्रधानमंत्री के सभापतित्व के अन्तर्गत कैबिनेट समिति का निर्माण किया गया, जिसमें निर्यात परेशानियों को हल करने के लिए विशेष प्रयास किया ताकि भारतीय व्यापार और उद्योग तथा निर्यात क्षेत्र में आत्मविश्वास जाग सके।

निर्यात प्रयासों में विकसित और विकासशील व्यापारिक साझेदार के द्वारा नयी दिशा प्रदान की गयी है। विदेशी व्यापार नीति के हिस्से के रूप में विभिन्न देशों से संयुक्त अर्थव्यवस्था समिति की स्थापना हुई और विकास कार्यक्रमों को तकनीक का आपस में अदला-बदली और लाभ के लिए व्यापार क्षेत्र का पहचान विभिन्न देशों के साथ किया गया। बाजारों और निर्यात को बढ़ाने के लिए निर्यात व्यूह रचना शुरू की गयी। यह व्यूह रचना बिना किसी तरीके से अन्य उत्पादों और क्षेत्रों को बिना पहचाने ही चालू किया गया।

देश के लिए विदेशी विनिमय आय को बढ़ाने के लिए नीतियों को एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में प्रयोग किया गया। कई इकाईयों और संयुक्त इकाईयों की स्थापना की गयी। अन्तर्राष्ट्रीय अखाड़े में सरकार ने व्यापार के अच्छे शर्तों के रूप मं कई कदम उठाये है। ये कदम तटकर निरीक्षण और विभिन्न अतटकर बाधाओं को निकालने, संयुक्त राष्ट के रक्षा के अन्तर्गत विभिनन अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों पर लागू किया गया है।

इस प्रकार हम ये कह सकते है कि भारत सरकार ने अपने विदेशी मुद्रा की समस्या से निपटने के लिए निर्यात सम्बर्द्धन को अधिकाधिक प्रोत्साहन देने का प्रयत्न किया है और उसमें जेसा कि आंकड़े बताते है काफी हद तक सफलता मिली है, परन्तु कुछ योजनाएँ अपने उद्देश्यों में पूर्णरूप से सफल नहीं हो पाये है। अतः अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ करने की आवश्यकता है तभी हमारे निर्यात वांछित स्तर पर आ सकते है।

उदारीकरण का निर्यात पर प्रभाव :

जून, 1991 में भारत में आर्थिक स्थिति इस कदर मटमैला हो गया था कि उस समय निराशा के अलावा और कुछ दिखायी नहीं पड़ रहा था तथा अर्थव्यवस्था बिल्कुल लड़खड़ा-सी रही थी। राजकोषीय घाटा इतना बड़ा आकार ले चुका था कि जिस समय सारा देश अपनी मजबूरियों और कमजोरियों से परेशान रहा। परिस्थितियां दिन-पर-दिन इतनी खराब होती चली जा रही थी कि कोई भी पूंजी निवेशक इस देश में कदम रखने में झिझकता था। दूसरे देशों के द्वारा जो कर्ज मिलता था वह भी थोड़ा और अधिक ब्याज पर मिलता था। सामाजिक सेवाओं पर व्यय अपेक्षित स्तर से बहुत कम रहा। गरीबी निवारण कार्यक्रमों की बात हाशिए में खिसकती चली जा रही थी। निर्यात कम होने से औद्योगिक उत्पादन में गिरावट के साथ-साथ रोजगार का अवसर भी कम होता चला जा रहा था। मुद्रा की पूर्ति में तीव्र वृद्धि हो जाने से मुद्रा स्फीति 17 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर तक पहुंच गयी थी। भुगतान संतुलन का संकट भी गहराता चला जा रहा था,

जिसकी वहज से देश की साख मिट्टी में मिल गयी थी। सकल घरेलू उत्पादन में वृद्धि की दर 1.2 प्रतिशत तक नीचे चली गयी, जबकि केन्द्रीय सरकार का राजकोषीय घाटा, जोकि राजस्व और कुल व्यय के बीच के अन्तर को दर्शाता है, जो कि वर्ष 1990-91 में सकल घरेलू उत्पाद के 8% से श्री अधिक हो गया था, 1970 के दशक में यह घाटा 4% औ 1980 के दशक में 6% के बाराबर रहा। इस घाटे को उधार लेकर पूरा करना पड़ा। जिसके परिणामस्वरूप केन्द्र सरकार का आतंरिक कर्ज बढ़ कर सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 55% तक पहुंच गया, जिस पर केवल ब्याज की राशि ही सकल घरेलू उत्पाद के 4% के बराबर रही आरै यह केन्द्रीय सरकार के कुल व्यय का लगभग 20% थी। चालू खाते का घाटा, इा कुल घाटे को और ीी बढ़ा रहा था। चालू खाते का घाटा जो कई वर्षों तक सकल घरेलू उत्पाद के दो प्रतिशत के बराबर रहा, वह 1990-91 में बढ़कर ढाई प्रतिशत के बराबर हो गया।

इन बढ़ते हुए लगातार घाटों के कारण, सरकार को अनिवार्य रूप से विदेशों से ऋण लेना पड़ा और उसकी ऋण की मात्रा निरन्तर बढ़ती रही। वर्ष 1990-91 के अन्त में भारत पर विदेशी ऋण रकम, सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 23 प्रतिशत के बराबर रही और उस पर कुल राजस्व प्राप्तियों का लगभग 21 % केवल ब्याज के रूप में ही अदा करना पड़ता था। अर्थव्यवस्था की इस लड़खड़ाती स्थिति में खाड़ी संकट के कारण और भी भारी दबाव पड़ा और भारत एक से दूसरे संकट में फंसने लगा। निर्यात में गिरावट, आयात का अधिकता, उत्पादन में कमी और बढ़ते हुए कर्ज के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारत की साख तेजी से गिरने लगी और भारत को नया कर्ज मिलना कठिन हो गया। धनी देश, महंगी ब्याज दर पर भी भारत को ऋण देने में संकोच करने लगे।

परिणामस्वरूप भारत के पास विदेशी मुद्रा का भण्डार बहुत कम हो गया। जो अनिवासी भारतीयों ने भारत में धन जमा कराया था, वे भी उस धन को तेजी से निकालने

लगे। जिसके कारण भारत के पास विदेशी मुद्रा भण्डा में केवल 2500 करोड़ रूपये रह गया। जो केवल मात्र दो सप्ताह के आयात के खर्च के लिए ही काफी था। विदेशी मुद्रा के भण्डार कमें इस गिरावट के कारण आयात पर भारी प्रतिबन्ध लगाना पड़ा। इस स्थिति का भारी दबाव मूल्यों की स्थिति पर भी पड़ने लगा। 1990-91 में मुद्रास्फीति मुख्य रूप से आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं पर ही केन्द्रित रही और लगातार तीन अच्छे मानसूनों और शानदार फसलों के बावजूद उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतें बढ़ती रहीं।

1991 के मध्य में सबसे बड़ा खतरा यह रहा कि विदेशी मुद्रा के अभाव में भारत विदेशी कर्ज की किश्त का भुगतान भी करने की स्थिति में नहीं रह गया और यदि इस भुगतान में एक बार भी चूक हो जाती है तो भारत की साख मिट जाती है और फिर भारत को कहीं से भी उधान दनहीं मिल सकता था। इस स्थिति से उबरने के लिए भारत को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश से मंहगे व्याज पर ऋण लेना पड़ा।

इस प्रकार जून, 1991 में देश की आथ्रिक स्थिति इतनी खराब थी कि यदि उस समय तत्काल कोई निर्णायक कदम न उड़ाया जाता तो उसके ऐसे भयंकर परिणाम निकल सकते थे, जिन्हें सदियों तक महसूस किया जाता । भारतीय अर्थव्यवस्था में वह भीषणतम संकट का काल रहा । सभी उस समय की नई सरकार ने नए आर्थिक सुधारों का कदम उठाया, जिसके अन्तर्गत उदारीकरण, भूमंडलीयकरण, निजीकरण और बाजार खोलने की जिस चौतरफा नीति को अपनाया गया, उसने लगभग सभी देशों में चमत्कार सा कर दिखाया है।

"1970 से 1990 की अवधि में ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका, जापान, मैक्सिको, न्यूजीलैण्ड तथा इटली जैसे विकसित देशों में आर्थिक देशों में आर्थिक उदारीकरण एवं निजीकरण का दौर काफी सफल रहा है तो केन्या, कोलम्बिया, कोस्टाराइका, घाना, चिली, जैमका, जाम्बिया, टोंगो, टर्की, तंजानिया, नाइजीरिया, फिलीपाइन्स, बोलियिारव, ब्राजील, मालावी, मेडागास्कर, सेनेगल तथा मोरक्को जैसे विकासशील देशों में उदारीकरण एवं निजीकरण की प्रक्रिया उत्पादकता,

रोजगार, पूंजीनिवेश तथा औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने में असफल रही है। सफलता तथा असफलता का यह भेद विकसित एवं विकासशील की बजाय राजनीतिक स्थिरता एवं पूर्ण वचनबद्धता की ओर विशेष संकेत करता है। चीन इस का स्पष्ट उदाहरण है, जहाँ राष्ट्री हितों के मद्देनजर आर्थिक सुधारों की प्रगि विगत 15 वर्षो से जारी है तथा सुधारों के फलस्वरूप वह "आर्थिक महाशक्ति" का रूप ग्रहण कर चुका है। भारत में 1991 में विकास की नयी राह के रूप में आर्थिक उदारीकरण एवं निजीकरण का अनुसरण किया गया है। यदि यह व्यूह रचना पूर्ण राजनैतिक इच्छा शक्ति तथा दृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था के मद्देनजर तीव्र गति से जारी रखी जाती है तो सन् 2000 तक भारत न केवल चीन से आगे निकल सकता है वरन् विश्व की प्रमुख आर्थिक शक्ति का स्थान ग्रहण कर सकता है।"[7]

भारत, नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश में जहाँ पर लम्बे समय से ढुलमुल एवं दूषित राजनैतिक व्यवस्था के

[7] योजना, 31 मार्च 1995, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ0 3

कारण आर्थिक उदारीकरण से सामाजिक–आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं के कारण आर्थिक उदीकरण से सामाजिक आर्िक लाभ प्राप्त नहीं हो पाया है वहीं पर दूसरी ओर कोरिया, जापान, सिंगापुर तथा ताइवान जेसे देशों ने अपने बेहतर राजनीतिक व्यवस्था से आर्थिक उदारीकरण एवं निजीकरण के द्वारा बेहतर सामाजिक–आर्थिक विकास का लक्ष्य हासिल करते हुए मूलभूत समस्याओं का उपयुक्त समाधान किया है तथा विकास की प्रक्रिया में मीलों आगे पहुंच गये है। 1980 के दशक में यूरोपीय राष्ट्रों में व्यापक मंदी होने के बावजूद आर्थिक उदारीकरण एवं निजीकरण के सफल दौर से यह स्पष्ट होता है कि सभी सामाजित–आर्थिक विकास का लक्ष्य निजी क्षेत्र की सक्रिय भूमिका के द्वारा आसानी से प्राप्त की जा सकता है।

सामाजिक आर्थिक समस्याओं का समाधान बेहतर आर्थिक नीति, सुदृढ़ प्रशासनिक एवं स्थित राजैनति व्यवस्था तथा जनता की व्यापक सहभागतिा पर निर्भर करता है। पिछले चार दशकों तक भारतीय अर्थव्यवस्था राजकीय नियमनों एवं नियंत्रणें के साथ भ्रष्टाचार, लालफीताशाही तथा कुव्यवस्था की

शिकार रही है। किसी भी आर्थिक सुधार का उद्देश्य उत्पादक कार्यों में गति लाकर जनजीवन को सुखमय बनाना होता है, लेकिन उसके लिए केवल पूंजीनिवेश ही पर्याप्त नहीं होता है, बल्कि उसके लिए ऐसा वातावरण भी आवश्यक है जिसमें भौतिक और मानवीय संसाधनों का अधिक से अधिक उत्पादक कार्यों के लिए उपयोग किया जा सके। जिसके लिए एक अनुशासित, कुशल और प्रतिस्पर्धी वातावरण नीतियों की घोषणा की गई और आर्थिक वातावरण को अनावश्यक बन्धनों और अनुत्पादक प्रतिबन्धों से मुक्त करके स्वतंत्र और मुक्त वातावरण में, एक दूसरे से ही नहीं बल्कि विदेशों से भी प्रतियोगिता की भावना से आगे बढ़ने का अवसर प्रदान किया गया। इस्पात, खनन, दूरसंचार, नागरिक उड्डयन व अन्य क्षेत्रों को पहली बार निजी क्षेत्र के लिए खोज गया और ऊर्जा, जहाजरानी, सड़क-निर्माण, परिवहन, पेट्रोलियम आदि क्षेत्रों में निजी पूंजी निवेश को आमंत्रित किया गया।

"लाइसेंस कोटा राज ने देश की 60-70% प्रगति को रोक रखा था। उदारीकरण नीति ने लाइसेंस कोटा राज का

प्रगति में बाधा माना है। लाइसेंस हटाने की कार्यवाही पर 1991–92 में सैकड़ों उद्योगों को रातो रात कोई लाइसेंस लेने की आवश्यकता नहीं रह गयी। 1991–92 में सैकड़ो उद्योग को लाइसेंस से मुक्त कर दिया गया तथा अब केवल 18 उद्योग ग्रुप में लाइसेंस रह गया है। 51% विदेशी पूंजी वाले उद्योगो के लिए लाइसेंस की आवश्यकता नहीं रह गयी है। बिना सी0सी0आई की अनुमति के पैसा इकट्ठा करने की छूट मिल गयी। 1993–94 में तीन और उद्योगों को लाइसेंस सूची से स्वतन्त्र कर दिया गया। 1994–95 में आम दवाई बनाने वाले उद्योग को लाइसेंस से मुक्त कर दिया गया। 1995–96 में 100% एक्सपोर्ट यूनिट लगाने के लिए किसी आज्ञा की आवश्यकता नहीं रह गयी।''[8] जो चाहे विदशों के साथ भी उद्योग लगा सकता है। नीति में तो यह देश लाइसेंस की भरमार की करीब–करीब मुक्त हो गया है। लाइसेंस राज भी खत्म हो गया।

---

[8] डी0डी0–1 टी0वी0 प्रसारण, 23.10.95 सोमवार, रात्रि 8 बजे से 8.30 बजे तक, मेड इन इण्डिया प्रोग्राम, नालिनी सिंह द्वारा प्रस्तुत फैक्स नं0– 011–332–7161

1. चीनी उद्योग :- भारत की अर्थव्यवस्था मूल रूप से कृषि अर्थव्यवस्था है। कृषि पर आधारित उद्योगों में सूती वस्त्र उद्योग के बाद चीनी उद्योग का भारत में महत्वपूर्ण स्थान है। भारत के चीनी उत्पादन में विश्व का चौथा मुख्य उत्पादक देश है। इसके पहले तीन क्रमानुसार देश हैं- रूस, ब्राजील और क्यूबा। भारत में चीनी के 420 कारखाने है। इसमें से 400 कारखाने काम कर रहे है, जिनमें से 120 निजी क्षेत्र में, 60 सार्वजनिक क्षेत्र में है। इनके तहत 3०5 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है।

नई चीनी लाइसेंस नीति के मार्गदर्शी सिद्धान्त निम्नलिखित है -

1. नये कारखानों के लाइसेंस उसी हालत में जारी किये जायेंगे यदि 15 किमी० के घेरे को कोई चीनी का कारखाना न हो।

2. नये चीनी कारखानों को 2500 टन प्रतिदिन गन्ना पेरने की क्षमता की अधिकतम सीमा तक लाइसेंस दिये जायेंगे।

3. निजी क्षेत्र की अपेक्षा सहकारी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में कारखाने लगाने के लिए प्राथमिकतादी जाएगी।

4. शीरा से औद्योगिक अल्कोहल बनाने के लिए उदार रूप में लाइसेंस दिए जायेंगे। इस उद्‌देश्य औद्योगिक अल्कोहल के निर्यात को बढ़ावा देना है।''[9]

<u>2. लघु उद्योग :-</u> इस समय देश में लघु उद्योग क्षेत्र के 25 लाख यूनिट में करीब 1.5 करोड़ लोग काम कर रहे है। लघु उद्योग में देश के उत्पादन का 35% हिस्सा है। देश के निर्यात का 40% हिस्सा है। 15% दकम से कम लघु उद्योग रूग्ण हो चुके है। अब लघु उद्योग क्षेत्र में नई नीति के अन्तर्गत रजिस्ट्रेशन बहुत आसान हो गया है। इस सेक्टर में लाइसेंस कण्ट्रोल पाबन्दिया करीब-करीब पूरी तरह हटा दिया गया है। उदाहरण- पर्यावरण उद्योग कानून, श्रम कानून बहुत उदार कर दिया गया है। इससे लघु उद्याग का काम बहुत सहज हो जायेगा।

---

[9] रूद्र दत्त एवं के0पी0एम0 सुन्दरम्- भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0 नई दिल्ली- 110055, 1994, पृ0 669

लघु उद्योग की सुविधायें :

नई नीति के अन्तर्गत जो लघु उद्योग को सुविधाएं प्रदान की गयी है वो निम्नलिखित हैं-

1. एस0आई0डी0बी0, आई0डी0बी0आई0, आई0सी0आई0सी0आई0, यू0टी0आई0 द्वारा लघु उद्योग को वेन्चर कैपिटल का निर्माण

2. लघु उद्योग में उत्पाद कर की छूट

3. दूसरे उद्योगों द्वारा लघु उद्योगों में 24% की इक्विटी भागीदारी

4. लघु उद्योगों में टैक्स होलीडे, चुने हुए पिछड़े क्षेत्रों में (लघु उद्योग के लिए पिछड़े क्षेत्र में, 5 साल तक टैक्स की छूट)

5. लघु उद्योगों में प्रतिबन्धित सूची पर रोक हटी।''[10]

लघु उद्योग को जो सुविधायें प्रदान की गयी है उससे लघु

---

[10] डी0डी0-1 टी0वी0 प्रसारण, 23.10.95 सोमवार, रात्रि 8 बजे से 8.30 बजे तक, मेड इन इण्डिया प्रोग्राम, नालिनी सिंह द्वारा प्रस्तुत फैक्स नं0- 011-332-7161

उद्योग की स्थापना में आसानी होगी तथा लघु उद्योग के माध्यम से हमारे देश का निर्यात बढ़ेगा।

3. सूती कपड़ा उद्योग :- सूती कपड़ा उद्योग हमारे प्रमुख उद्योगों में सबसे पुराना स्थापित उद्योग है। मार्च 1994 के अन्त तक भारत में 1175 कारखाने थे। इस उद्योग द्वारा 11.5 लाख श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध करायाजाता है। यह उद्योग 150 वर्ष पुराना है। विश्व के निर्यात बाजार में इसका द्वितीय स्थान है। यह विश्व के सूती कपड़े निर्यात का 16 प्रतिशत तक निर्यात करता है।

सरकार की नीति सम्बन्धी उपाय : 'टैक्सटाइल उद्योग के स्वास्थ्य को उन्नत करने के लिए सरकार ने बहुत सी नीति सम्बन्धी उपाय किये हैं-

1. 1986 में सरकार ने 750 करोड़ रूपये के योदान से टैक्सटाइल आधुनिकीकरण आधुनिकीकरण कोष स्थापित किया है और कारखाना मालिकों ने इसका स्वागत किया है। सितम्बर 1992 के अन्त तक, वित्तीय संस्थाओं द्वारा 357 मामलों में 1370 करोड़ रूपये की स्वीकृति दी गयी।

2. सरकार ने राष्ट्रीय टैक्सटाइल निगम की बीमार इकाइयों को पुनः जीवित करने की नीति तैयार की जिसमें उनके लिए कार्यकारी पूंजी उपलब्ध कराने का निर्णय लिया गया ताकि वे अपनी तरलता-समस्याओं का समाधान कर सकें।

3. सरकार ने तकनीक उन्नयन के अन्य कायक्रम भी आरम्भ किए हैं और ये विकेन्द्रीयकृत क्षेत्र की क्षमता में तकनीकी उन्नति के लिए विशेष रूप में लागू किये जा रहे हैं।

4. नयी उदारीकृत औद्योगिक नीति के अधीन बहुत से अन्य उद्योगों के साथ अगस्त 1991 में टैक्सटाइल उद्योग को भी लाइसेंस प्रणाली से मुक्त कर दिया गया। नयी नीति के अधीन नयी इकाईयाँ स्थापित करने या वर्तमान इकाइयों के क्षमता-विस्तार के लिए सरकार की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं।

5. सरकार ने टैक्सटाइल उद्योग के निर्यात को उन्नत करने के लिए अप्रैल 1993 की निर्यात-आयात नीति में परिवर्तन किया है और निर्यात क्षमता को बढ़ाने के लिए पूंजी

वस्तुओं को रियायती दरों पर आयात करने की इजाजत दी है। इस समझौते से भारत को तुलनात्मक लाभ होगा जिससे उद्योग को मजबूत बनाने में सहायता मिलेगी।''[11]

<u>4. आटो उद्योग :-</u> 1991-92 में उद्योग सुस्त थी। नई नीति के अनुसार उसी समय एक दो लाइसेंस एकदम रद्द कर दिये गये। लोन आसान ट्र्म्स पर उपलब्ध कराये और उत्पादन शुल्क घटायी गयी। वाहनों की बिक्री बढ़कर 1992 में 19 लाख से बढ़कर 2 साल में 24 लाख हो गयी। आज ये सेक्टर 25% सालाना की रफ्तार से बढ़ने लगा। वाहनों के निर्माण का 90% स्वदेशीकरण हो गया। निर्यात में 30% वृद्धि हुई है।

<u>5. दवा उद्योग :-</u> दवा उद्योग में लाइसेंस के सम्बन्ध में काफी रियायतें दी गयी हैं। इस उद्योगों में अब सिर्फ जरूरी लाइसेंस ही रह गये है। दवा और चीनी उद्योग की तुलना की जाय तो चीनी उद्योग लाइसेंस से बंधा है। दवा

[11] रूद्र दत्त एवं के0पी0एम0 सुन्दरम्- भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0 नई दिल्ली- 110055, 1997, पृ0 448-449

उद्योग बहुत दह तक मुक्त कर दिया गया है, लेकिन दोनों में लाइसेंस राज बरकरार है।

उदारीकरण नीति में औद्योगिक लाइसेंस आवेदन :

"एक समय ऐसा था जब उद्योग भवन के गलियारे कम्पनी के एजेन्टो से भरे रहते थे और सिर्फ 3-4 महीने बाद एप्वाइमेन्ट देते थे। इस समय कोई एजेन्ट नहीं रहता। ठीक यही परिवर्तन इन आकड़ों में नजर आ रहा है।

कम्प्यूटर हार्डवेयर 1991-92 में लाइसेंस मुक्त कर दिया गा। साथ ही आयात कर घटा दी गयी और एक साल में ही 10% सालाना के रफ्तार से बढ़ने लगा, तो उद्योग में तेज गति आयी है। उदारीकरण नीति में सब कार्यवाही सरल हो गयी है। कमजोरियाँ बड़े निर्यात जैसे-कपड़ा उद्योग महसूत कर रहे हैं, जिसका हिस्सा भारत के निर्यात में 38% है लेकिन 32000 करोड़ रूपया सालाना निर्यात है। लेकिन अब नई नीति और विश्व व्यापार संगठन के तहत भारतीय कपड़ को 10 साल बाद बाहर निर्यात कोटा नहीं मिलेगा।

निर्यात 12 करोड़ से ज्यादा है। उदारीकरण नीति के तहत इनको निर्यात की विशेष सुविधायें मिल रही हैं। जैसे 5% स्पेशल आयात लाइसेंस और बड़ी डील में निर्यात आयात बैंक से कर्ज। देश में निर्यात में करीब 20-22% आयात किया हुआ सामन है। जैसे- इलेक्ट्रानिक्स में 70% आयात किया हुआ सामान पार्ट है। इस समय देश में तेज से बढ़ते हुए कुछ निर्यात सेक्टर है जैसे कम्प्यूटर साफ्टवेयर 129%, काफी 86.5%, फूल 52.2%, खेल सामग्री 45%, अयस्क और खनिज 40% की दर से निर्यात वृद्धि कर रहे है।

उदारीकरण से आयात-निर्यात तो बढ़ गया लेकिन बन्दरगाह नहीं बढ़ रहे हैं। भारत मानव संयसाधान के क्षेत्र में समृद्ध है। अगले 25 वर्ष में भारत विश्व में चौथी आर्थिक शक्ति होगी। भारत को दुनिया की आर्थिक ताकतों में महत्त्व मिलेगा। समृद्धि मान व संसाधन, समृद्ध बाजार एवं औद्योगिकरण अधिक हो तथा अधिक विकास होगा तो अधिक लोगों को राजगार मिलेगा, जिससे आय स्तर बढ़ेगा। इस

समय देश में उदारीकरण का दरवाजा खुल रहा है और भारत की जनता उसे भविष्य में खुला देखना चाहती है।

विदेशी से भारत में जो पूंजी प्रवाह हो रहा है, वह सूखे की स्थिति से एक निरंतर बहती जलधारा में बदल गया है। विदेशी कंपनियों, प्रवासी भारतीयों तथा अन्य पूंजी निवेशकों के द्वारा जो देश के अन्दर व्यापक और तेज पूंजी प्रवाह हो रहा है। पहला, विदेशी कर्जो की तरफ बेताबी से हाथ फैलाए रखने का सिलसिला समाप्त हो गया है तथा दूसराविभिन्न पूंजीगत तथा आधारभूत योजनाओं में विदेशी पूंजीनिवेश से केन्द्र और राज्यों के द्वारा बचाया गया राजस्व की राशि समाजिक कार्यो, कल्याण योजनाओं और ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के बुनियादी ढांचे में अधिक लगाई जाने लगी है। जिसके परिणामस्वरुप जनहित कार्यो की न सिर्फ संख्या बढक्ष गई है, बल्कि उनकी गति, परिधि और धनराशि सभी बढ़ गया है।

पिछले पांच वर्षो में भारतीय अर्थव्यवस्था की एक अति महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही है कि एक छिन्न-भिन्न

अर्थव्यवस्था का पुनर्निमाण किया गया और गम्भीर आर्थिक संकट से उबार कर उसे पुनः विकास के मार्ग पर लाया गया। भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था का विश्व-व्यवस्था के साथ सामन्जस्य स्थापित कर लिया है। एशियों के जिन देशों ने पिछले दशकों में आर्थिक समृद्धि अर्जित कर ली है, उनकी बाराबर करने या उनके भी आगे निकल जाने की व्यापक सम्भावनाएं भारत के अन्तर आ गयी है।

भारत ने 1991 में जब से अपनी अर्थव्यवस्था का उदारीकरण प्रारम्भ किया है तब से यहाँ प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश और अन्य निजी पूंजी निवेशों में लगातार वृद्धि हो रही है। लेकिन इसकी तुलना चीन से नहीं की जा सकती है क्योंकि वहां पर पूंजी का प्रवाह काफी अधिक है। भारत में प्रत्यकख विदेश निवेदश का अधिकांश प्रवाह बिजली एवं ईधन के क्षेत्रों में केन्द्रित है। लेकिन इधर यह प्रवाह दूरसंचार एवं बुनियादी ढांचे के क्षेत्रों में भी बढ़ा है। भारत में निजी पूंजी का कुल प्रवाह 1990 में 2 अरब 10 करोड़ डालर, 1994

में 5 अरब 50 करोड़ डालर तथा 1995 में 4 अरब 40 करोड़ डालर रहा।

वर्तमान बजारोन्मुख रुझान, भूमंडलीकरण और निजी पूंजी निवेश, ऊँचे शुल्कों की दीवारों की कटाई-छटाई तथाव्यापार के मुक्त प्रवाह के अनेक सुखद और सकारात्मक परिणाम सामने आने लगा है। मूल उद्योगों में पूंजीगत सामान और पूंजीपरक क्षेत्रों के साथ-साथ श्रम प्रधान क्षेत्रों में व्यापक पैमाने पर सुधारों का ही परिणाम है किवर्ष 1994 में निर्यात में 20 प्रतिशत की अधिक वृद्धि हुई है। हमारा विदेशी मुद्रा-भंडार लबालब भरा है।

भारत का व्यापार घाटा वष्र 1995-96 के दौरान बढ़कर 4.54 अरब डालर तक पहुंच गया है जो पिछले वर्ष के घाटे से दो गुने से भी अधिक है। वर्ष 1994-95 में व्यापार घाटा 2.03 अरब डालर रहा। वर्ष 1995-96 में भारत का निर्यात 31.83 अरब डालर रहा, जो पिछले वर्ष के 2622 अरब डालर निर्यात से 21.38 प्रतिशत अधिक है 1995-96 के लिए 18 से 20 प्रतिशत की निर्यात बढ़ोत्तरी

का लक्ष्य रखा गया था, लेकिन डालर के मद में इसमें 21.38 प्रतिशत की महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गयी है। मार्च 1996 में व्यापार सन्तुलन भारत के पक्ष में रहा है। इस अवधि में आयात के मुकाबले निर्यात 8.2 करोड़ डालर अधिक रहा। मार्च 1996 में निर्यात 349.56 करोड़ डालर तक पहुंच गया जो किसी भी महीने होने वाला सबसे अधिक निर्यात है। मार्च 1996 में निर्यात 349.56 करोड़ डालर तक पहुंच गया, जो किसी भी महीनें होने वाला सबसे अधिक निर्यात है। पिछले वर्ष मार्च 1995 महीने में 292.24 करोड़ डालर का निर्यात हुआ था। इसी प्रकार मार्च 1996 के दौरान 341.33 करोड़ डालर का आयात किया गया, जो मार्च 1995 में किये गये 286.27 करोड़ डालर के मुकाबले 19.23 प्रतिशत अधिक है।

देश में खाद्यान्न का भी पर्याप्त सुरक्षित भण्डार है। अनाज का सुरक्षित भण्डार जो अप्रैल 1993 में 2 करोड़ टन था, वह बढ़कर अप्रैल 1994 में 2.6 करोड़ टन तक पहुंच गया तथा मई 1995 में 3 करोड़ 74 लाख टन आनाज भण्डारों में जमा हो गया।

“निर्यात-आयात को देश की प्रतिष्ठा, सम्मान भी कहते हैं, क्योंकि देश को हमेशा बाहर विदेश से कुछ न कुछ सामग्री मंगवानी पड़ती है। जैसे कि आज पेट्रोलियम, खनिज या तिलहन। ये दुनिया का दस्तूर है कि अपनी देश की कमी देसरे देशों से खरीदकर पूरी किया जाय। इसके लिए विदेशी मुद्रा निर्यात से या देश का सोना और धन बेचकर नहीं तो वश्वि के कान्फ्रेन्स हाल में जाकर हाथ फैलाकार अनुदान मांगा आयेगा। इसलिए देश का निर्यात, देश के सम्मान व प्रतिष्ठा से जुड़ा हुआ है। इसलिए विदेशी मुद्रा कमाने के लिए और प्रगति हासिल करने के लिए नयी उदारीकरण नीति ने निर्यात को विशेष सुविधायें दी हैं।

विश्व व्यापार का भारत में हिस्सा

विश्व व्यापार में भारत के योगदान का अनुमान निम्न आंकड़ों से लगाया जा सकता है।

1950	2%
1995	0.56%

विदेशी मुद्रा रिजर्व

देश	आयात कवर (महीनों में)
भारत	8.2
चीन	4.6
साउथ कोरिया	3.4

आज भारत का 78% निर्यात मैन्यूफैक्चर सामान का है, जिसमें लाभ 20.30% है। भारत का निर्यात दो गतिशील दिशाओं में फैल रहा है। एक तो पारम्परिक क्षेत्रों के निर्माण में बहुत मूल्य जोड़ करके उसका निर्यात शुरू है, जेसे कृषि एग्रो उत्पाद में एक साल में प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थ का निर्यात बढ़ा है 30%। उसी तरह चमड़ा उद्योग, जिसकों बहुत फायदा हुआ है। जिसके अन्तर्गत निर्यात द्वारा मयी हुई विदेशी मुद्रा निर्यातक स्वंय इस्तेमान में ला रहा है। चमड़ा उद्योग में 20% सालाना वृद्धि हुई है।[12]

---

[12] डी0डी0-1 टी0वी0 प्रसारण, 16.10.95 सोमवार, रात्रि 8 बजे से 8.30 बजे तक, मेड इन इण्डिया प्रोग्राम, नालिनी सिंह द्वारा प्रस्तुत फैक्स नं0- 011-332-7161

घरेलू क्षेत्र में उदारीकरण :-

(1) **आयकर में कमी :-** वेतन भोगीयों को प्रत्यक्ष रूप से सहायता देने के लिए उदारीकरसण कार्यक्रमों के अन्तर्गत आयकर में भी धीरे-धीरे कमी लायी जा रही है। यह कमी इस प्रकार से लायी जा रही है कि एक ओर तो करदाताओं को राहत मिल रही है, दूसरी ओर कुल कर वसूली में लगातार वृद्धि हो रही है।

आय रू0	1990-91	1995-96
40,000	30%	0%
1,00,000	62-65%	30

देश में 90-91 में, 40,000 रूपये पर 30% आयकर देना पड़ता था जो उदारीकरण के पश्चात 95-96 में 40,000 रूपये तक आयकर शून्य कर दिया गया। उसी प्रकार 1,00,000 तक 90-91 में 62-65 आयकर देन पड़ता था जो 95-96 में कम करके 30% कर दिया गया।

(2) **उत्पाद शुल्क में कमी :-** उदारीकरण कार्यक्रमों के अन्तर्गत वस्तुओं, सेवाओं के मूल्यों में कमी लाने के उद्देश्य

से सरकार उत्पादन शुल्क में भी यथासम्भव कमी लाने का प्रयास कर रही है। उदाहरण के लिए अन्स वस्तुओं के अलावा साफ्ट ड्रिंक्स औरकार पर उत्पाद शुल्क में कमी लायी गयी है।

	पहले	अब
साफ्ट ड्रिंक्स	50%	40%
कार	25%	20%

साफ्ट ड्रिंक्स पर पहले 50% उत्पाद शुल्क देता था जो अब कम करके 40% कर दिया गया है। उसी तरह कार पर पहले 25% उत्पाद शुल्क लिया जाता था जिसे कम करके 20% कर दिया गया। उत्पाद शुल्क में कमी करने से हमारे वस्तुओं का मूल्य कम होगा, जिससे विदेशों में अपने माल का निर्यात बढ़ाने में मदद मिलेगी।

अब हम कुछ प्रमुख उद्योग के निर्यात पर उदारीकरण नीति का प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

1. उदारीकरण और कपड़ा उद्योग : भारतीय कपड़ों की बनावट रंगरूप और उनकी योग्यता हमेशा से दूसरे देशों में आकर्षण का केन्द्र रहा है। स्वतंत्रता के बाद, भारत के

विदेश व्यापार में कपड़ों की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण रही है। पिछले 47 वर्षों में वस्त्रों के निर्यात ने अनेक उतार चढ़ाव देखा है, लेकिन अभी भी विदेशों में भारत में बने कपड़ों का आकर्षक कम नहीं हुआ है।

2. उदारीकरण और रत्न एवं आभूषण : देश में उदारीकरण के बाद रत्न एवं आभूषण के निर्यात में लगातार वृद्धि हो रही है। 1990-91 में 5247 करोड़ रूपये का रत्न और आभूषण निर्यात किया गया। 1991-92 में 6750 करोड़ रूपये का रत्न और आभूषण का निर्यात हुआ। जबकि 1992-93 में 8896 करोड़ रूपये का निर्यात किया गया। उसके एक साल बाद यह राशि बढ़क 1993-94 में 12533 करोड़ रूपये हो गयी और 1995-96 के प्रथम चार महीनों अप्रैल से जुलाई तक भारतीय रत्न और आभूषणों के निर्यात में गत वर्ष की इसी अवधि की तुलना में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

3. उदारीकरण और चावल निर्यात : निर्यात की जा रही वस्तुओं में कृषि फसलों का काफी बड़ा हिस्सा है।

कृषि वस्तुओं का निर्यात लगातार बढ़ रहा है और इस तरह चावल ने 1990-91 तक निर्यात में 462 करोड़ रूपये का योगदान दिया। 1991-92 में वह बढ़कर 756 करोड़ रूपया हो गया। 1992-93 में चावल का निर्यात 976 रूपये तक पहुँच गया। 1993-94 में चावल के निर्यात में लगातार बढ़कर 1287 करोड़ रूपये तक जा पहुँचा। चावल का निर्यात 1994-95 में 307.83 करोड़ रूपये के मूल्य से बढ़कर 1995-96 में 891.71 करोड़ रूपये मूलय का हो गया। विश्व में भारत चावल का दूसरे नम्बर का सबसे बड़ा निर्यातक देश बन गया है। विश्व के कुल चावल निर्यात में भारत का योगदान 15 प्रतिशत है।

4. उदारीकरण और लघु उद्योग : भारत में उदारीकरण के बाद से लघु उद्योगों में तेजी से विकास हुआ है। वर्ष 1990-91 की तुलना में वर्ष 1994-95 में लघु उद्योग के विकास में दो गुना वृद्धि हुई है। इस समय देश में लघु उद्योगों की 26 लाख इकाइयां है और इस क्षेत्र में 1.5

करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है तथा देश के कुल निर्यात में लघु उद्योग का हिस्सा 40% से अधिक है।

5. उदारीकरण और सीमेंट उद्योग : उदार नीतियों के कारण भारतीय सीमेन्ट उद्योग की लम्बे समय से चली आ रही गतिहीनता काफी हद तक समाप्त हो गयी है। लेकिनआज भी यह उद्योग अनेक प्रकार की सरंचनात्मक एवं बुनियादी समस्याओं के कारण वांछित विकास नहीं कर पा रहा है। आज हमारे देश में 97 बड़े और 252 छोटे सीमेंट के कारखाने हैं, जिनकी कुल उत्पादन क्षमता 695 लाख टन वार्षिक है। वर्ष 1996-97 तक निर्यात का लक्ष्य 55 लाख टन तक रखा गया था। इस समय भारत के जिन देशें को सीमेंट निर्यात कर रहा है, उनमें बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, फिलीपीन, मालद्वीप, थाईलैण्ड आदि प्रमुख हैं।[13]

6. उदारीकरण और कम्प्यूटर साफ्टवेयर इण्डस्ट्री : देश में आर्थिक उदारीकरण के बाद कम्प्यूटर साफ्वेयर निर्यात क्षेत्र पिछले 4 वर्षो से 57 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर से बढ़

---

[13] राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, 13 मई 1996, सोमवार, पृ0 6

रहा है। भारतीय कम्पनियों में माल तैयार करने की प्रक्रिया में वृद्धि, अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा भारतीयों कम्पनियों के रख-रखाव के लिए समझौते के कारण निर्यात में वृद्धि हुई है।

भारत का साफ्टवेयर निर्यात (1995-96) (प्रतिशत)

यू0एस0ए0	57%
आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड	3%
यूरोप	22%
दक्षिण पूर्वी एशिया	6%
जापान	4%
पश्चिमी एशिया	3%
शेष विश्व	5%
	100

स्रोत - आज वाराणसी, 28 अगस्त 96 पृ0 9

8. उदारीकरण और दूरसंचार उद्योग : "उदारीकरण के बाद करीब 2-3 लाख नौकरियाँ 'पेजर' के काम में उभरी है। सन 2000 तक 25 लाख सेल्यूलर फोन उपलब्ध हो चुकी है। उदारीकरण में जो निजीकरण शुरू हुआ है, उसी से

दूरसंचार सेवायें पैदा हुई है। और इनमें पिछले तीन साल 4-5 लाख लोगों को नौकरियों मिली।''[14]

हमें अपने देश के विदेशी व्यापार का अध्ययन करने पर पता चलता है कि वर्ष 1990-91 में भारत का कुल विदेशी व्यापार 75,746 करोड़ रूपये का था, जो कि 1991-92 में बढ़कर 91892 करोड़ रूपये का हो गया। पिछले पाँच वर्षो में देश का कुल विदेशी व्यापार दो गुने से भी अधिक का हो गया है, लेकिन इसका यह कतई मतलब नहीं है कि यह सब भारत सरकार ने जो नयी आर्थिक नीति घोषित की थी, उसी के कारण संभव हुआ है। क्योंकि इससे पहले भी प्रत्येक पाँच वर्ष के अन्तराल पर देश का विदेशी व्द्वयापार लगभग दो गुना होता रहा है। इसलिए इस बढ़ रहे विदेशी व्यापार को नयी जनवरी 1996 के अंत तक केवल 16.3 अरब डालर रह गया है। इस अवधि में विदेशी संस्थागत निवेशकों, यूरों इश्यू और अनिवासी भारतीयों की जमा के माध्यम के भारत में पहले की तुलना में कम विदेशी मुद्रा आयी।

[14] डी0डी0-1 टी0वी0 प्रसारण, 20.11.95 सोमवार, रात्रि 8 बजे से 8.30 बजे तक, मेड इन इण्डिया प्रोग्राम, नालिनी सिंह द्वारा प्रस्तुत फैक्स नं0- 011-332-7161

उदारीकरण के बाद गरीबी, बेराजगारी, मुद्रा स्फीति, विदेशी कर्ज, राजकोषीय घाटा, तथा कृषि के क्षेत्र में यद्यपि कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है तथा आर्थिक परिवर्तन को लेकर अर्थव्यवस्था में भय एवं अनिश्चितता का माहौल बना हुआ है, फिर भी यह भय काल्पनिक, अल्पकालीन एवं ढुलमुल राजनीतिक व्यवस्था का परिणाम माना जा सकता है।

भारत के कुल आयात में सिर्फ खनिज तेल पदार्थो पर ही तकरीबन 40% राशि चुकानी पड़ती है। इसके अलावा उर्वरक, अलौह धातु, मशीन और कलपुर्जे, दवा तथा औषधि सामग्री और कृत्रिम रेशे इत्यादि पर भी भारी मात्रा में धनराशि खर्च करनी पड़ रही है, और तो और कृषि प्रधन देश होने पर भी भारत में खाद्य तेल पर भी अच्छी खासी रकम खर्च करनी पड़ रही है। ''इस समय भारत तकरीबन 190 देशों को 7500 से भी अधिक वस्तुओं का निर्यात कर रहा है और लगभग 140 देशों से 6000 से भी ज्यादा वस्तुओं का आयात कर रहा है। वर्ष 1990-91 में भारत ने कुल 32,553 करोड़ रूपये की वस्तुओं का निर्यात कियाथा और 82338 करोड़ रूपये की वस्तुओं का आयात किया था। वित्तीय वर्ष 1991-92 में देश ने 44042 करोड़ रूपये मूल्य की वस्तुओं का आयात किया

था। 1992-93 में निर्यात से 53688 करोड़ रूपये प्राप्त हुए थे, जबकि आयात पर 63375 करोड़ रूपये देना पड़ था। वर्ष 1993-94 में भारत से 69748 करोड़ रूपये की वस्तुओं का निर्यात हुआ और इसी अवधि में 73101 करोड़ रूपये की वसतुओं का आयात भी किया गया। इसके एक वर्ष बाद 1994-95 में भारत से 82338 करोड़ रूपये का निर्यात तथा 88705 करोड़ रूपये का अयात किया गया। उस साल हमारा व्यापारिक घाटा 6367 करोड़ रूपये का रहा, जो कि इससे पहले के वित्तीय वर्ष की तुलना में दो गुने के आस पास है। वर्ष 1995-96 में भारत से 106465 करोड़ रूपये की वस्तुओं का निर्यात किया गया और इसी अवधि में 121647 करोड़ रूपये की वस्तुओं का आयात भी किया गया। इस साल हमारा व्यापारिक घाटा 15182 करोड़ रूपये का रहा, जो कि इससे पहले के वित्तीय वर्ष की तुलना में दुगुने से ज्यादा है।''[15]

पिछले पांच वर्षो में निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में विविधता लगातार बढ़ी है तथा साथ ही साथ निर्यात में भी वृद्धि हुई है। मगर इसकी तुलना में हमारा आयात अनुपात कुछ ज्यादा ही तेज गति से बढ़ा है। आयात किये हुएमाल के

---

[15] राष्ट्री सहारा, लखनऊ, बुद्धवार, 5 जून 1996, पृ0 6

प्रति हमारी मांग में जो तेजी आयी है, उससे सरकार पर कई प्रकार का अनावश्यक दबाव पड़ा है। जिसकी वजह से हमें न चाहकर भी मंहगी तथा गैर जरूरी वस्तुओं का आयात करना पड़ रहा है। भारत को मोती, कीमती और कम कीमती पत्थरों के आयात पर वर्ष 1994-95 में 2688 करोड़ रूपये खर्च करना पड़ था। आयात किये जाने वाली वस्तुओं में देश को सबसे अधिक धनराशि वाली वस्तुओं में देश को सबसे अधिक धनराशि पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियम उत्पादों पर अदा करनी पड़ती है "निवर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव ने आर्थिक उदारीकरण के प्रति वचन बद्धता की बात कही है। इनके अनुसार भारत जैसे बड़े लोकतांत्रिक देश के लिए आर्थिक सुधार का रास्ता बहुत आसान नहीं है, लेकिन चालू आर्थिक सुधार कार्यक्रम में हमारे लिये सर्वश्रेष्ठ विकल्प है, जिनेस पीछे हटने का कोई प्रश्न ही नही है।"[16]

"गुट निरपेक्ष देशों एवं अन्य विकासशील देशों के श्रम मंत्रियों के पांचवे सम्मेलन में बोलते हुए पूर्व वित्त मंत्री डॉ0 मनमोहन सिंह ने कहा है कि सरकार न केवल आर्थिक सुधारों को जारी रखने के लिए प्रतिबद्ध है, बल्कि अपने वादे

---

[16] योजना, 31 मार्च 1995, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरका द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ - 4

के अनुसार यह भी सुनिश्चित कर रही है कि इन सुधारों का बोझ कमजोर वर्गो पर नहीं पड़े। आर्शिक सुधारों के लिए उठाये हर कदम का मूल उद्देश्य मानवीय पहलू का ध्यान रखकर समायोजन करना है। सरकार का यह कदम निश्चय ही स्वागत योग्य है, फिर भी जनता की व्यापक सहभागिता तथा धैर्य एवं उदारी करण की तीव्र गति वांछनीय है।''[17] राजनीतिक स्थिरता शांति और गतिशील अर्थ व्यवस्था के कारण भारत में अपनी कोई साख फिर से प्राप्त कर ली है। भारत की अर्थ व्यवस्था के भविष्य के बारे में अविश्वास का स्थान विश्वास ने, अस्थिरता का स्थान स्थिरता ने और भय का स्थान साहस ने ले लिया है। वर्तमान समय में विश्व के सभी देश भारत में पूंजी लगाने के लिए इच्छुक ही नही, बल्कि उसके लिए कड़ी प्रतियोगिता कर रहे है।'' ''अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की नई गणना के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की छठी अर्थव्यवस्था है। अमरीका, जापान, चीन, जर्मनी और फ्रान्स के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था का स्थान है। वर्ष 2020 तक भारत दुनिया की चौथी बड़ी आर्थिक शक्ति बन जायेगा।''[18]

---

[17] योजना, 31 मार्च 1995, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरका द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ - 4

[18] योजना, 31 मार्च 1995, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरका द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ - 6

भारत के निर्यात का ढाँचा एक अविकसित अर्थव्यवस्था का प्रारूप है। भारत पारम्परिक रूप में कृषि सम्बन्धित कच्चे माल और इन पर आधारित निर्मित वस्तुओं का निर्यातक रहा है। कृषि आधारित कच्चे माल और इन से सम्बन्धित उत्पाद के निर्यात में लगातार गिरावट आयी है। कुल निर्यात में खाद्य, पेय पदार्थ और तम्बाकू के निर्यात के भाग में गिरावट का एक कारण जनसंख्या की वृद्धि और इसके परिणाम स्वरूप इनके देशीय उपभोग में वृद्धि है। फलस्वरूप बहुत सी पारम्परिक निर्यात वस्तुओं अर्थात चाय में निर्यात–अतिरेक में इतनी वृद्धि नहीं हुई जितनी की सरकार चाहती थी। इस सम्बन्ध में कुछ वस्तुओं के बढ़ते हुए महत्व का स्वीकार करना ही होगा। ये वस्तुयें है : मछली एवं मछली के उत्पाद, काजु, काफी और चावल। सब्जियों एवं फलों का महत्व भी बढ़ता जा रहा है।

1960 के पश्चात् औद्योगीकरण के प्रभावधीन गैर–पाम्परकि वस्तुओं के निर्यात का महत्व भी बढ़ रहा है। इन मदों में उल्लेखनीय है : इंजीनियरिंग वस्तुएँ, रसायन,

सिलेसिलाए कपड़े; मछली एवं मछल निर्मित वस्तुएं। में निर्यात भारत के कुल निर्यात के 50 प्रतिशत से कुछ अधिक है। यह बात कि इनमें कुछ गैर–पारम्परिक वस्तुओं अर्थात इंजीनियरिंग वस्तुओं, हस्तशिल्पों एवं सिल सिलाए कपड़ों ने सबसे उन्नत देशों के बाजारों में अपना स्थान कायम कर लिया है, यह जाहिर करती है किआने वाले वर्षो में भी वे भारतीय निर्यात में अपना योगदान देते रहेंगें।

इलेक्ट्रानिक्स वस्तुओं एवं साफ्टवेयर मे निर्यात में तीव्र वृद्धि वास्तव में अभिनन्दनीय है। इस प्रवृत्ति को मजबूत बनाना चाहिए। साफ्टेवेयर उद्योग इलेक्ट्रानिक्स क्षेत्र में सबसे अधिक तेजी से विकसित हो रहा है। आठवीं योजना के दौरान साफ्टवेय निर्यात ने (1992–93 से 1996–97 की अवधि मे) 43 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की और वे 191–92 में 17.4 करोड़ यू0एस0 डालर से बढ़कर 1996–97 में 104. 2 करोड़ डालर हो गये। 1997–98 में साफ्टवेयर निर्यात और तेजी से बढ़कर 174.9 करोड़ डालर हो गये। रूपये के

रूप में साफ्टेवयर निर्यात 71358 करोड़ रूपये अर्थात कुल निर्यात का 5.2 प्रतिशत हो गये।

कुछ मदों का निर्यात देश के लिए चिन्ता का विषय है। उदाहरणार्थ। कच्चे लौह एवं लौह एवं इस्पात का निर्यात इस बात का संकेत देता है कि अर्थव्यवस्था इन बुनियादी विकास वस्तुओं के प्रयोग में असमर्थ रही है। इसके विरूद्ध लौह एवं इस्पात का आयात कहीं अधिक महत्वपूर्ण है जो देश में स्थापित इस्पात क्षता के अल्पप्रयोग का संकेतक है। अतः भारत के निर्यात में गैर-पाम्परिक वस्तुओं का योगदान प्रशंसनीय है परन्तु यह कई प्रकार से युक्तियुक्त नहीं।[19]

इस विवरण से हमें यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि गैर-पारम्परिक वस्तुएं तो आगे बढ़ रही है और पारम्परिक वस्तुएं पिछड़ गयी है। पारम्परिक वस्तुओं का निर्यात भी बढ़ रहा है। चाहे यह वांछनीय स्तर तक नहीं पहुँच पाया। उदाहरण के तौर पर रूई से बने कपड़े, चाय,

19. भारतीय अर्थव्यवस्था रूद्रदत्त, के0पी0एम0 सुन्दरम संस्करण- 2000 एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी लिमिटेड, रामनगर नई दिल्ली - 110055 पृ0 - 514

चमड़े और चमड़े की निर्मित वस्तुओं के निर्यात में सराहनीय वृद्धि हुई है।

भारत के निर्यात ढाँचे में निम्नलिखित परिवर्तन व्यक्त हुये हैं:-

(1) भारतीय अर्थव्यवस्था का विविधीकरण हो रहा है और गैर-पारम्परिक निर्यात का महत्व बढ़ रहा है।

(2) इंजीनियरिंग वस्तुओं के निर्यात के विस्तार का कारण औद्योगिक देशों और मध्यपूर्व के देशों में भी इनकी बढ़ती हुई मांग है। इन देशों में आधार संरचना प्रोजेक्ट जैसे सड़कें, बन्दरगाहों, रेल-निर्माण, टेली-संचार और नागरिक-निर्माण चालू किये गये हैं।

(3) भारत, अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में मांग की अनुकूल स्थिति आकर्षक कीमत स्थिति का लाभ उठाने की अब क्षमता रखत है।

(4) जबकि कुछ वस्तुओं में निर्यात क्षमता बहुत ही अधिक है (जैसे हस्तशिल्प, इंजीनियरिंग औरं सिलेसिलायें कपड़ों अन्य वस्तुओं (अर्थात, चीनी, पटसन, सूत, एवं निर्मित्त वस्तुओं, लौह एवं इस्पात) में भारी उतार–चढ़ाव व्यक्त हुए है।

(5) नयी कृषि नीति की घोषणा के पश्चात् कृषि वस्तुओं के निर्यात पर बल दिया जा रहा है। चावल का निर्यात महत्वपूर्ण बनता जा रहा है। इसके अलावा फल एवं सब्जियों और सार्थत खाद्य पदार्थ भी हमारे निर्यात में महत्वपूर्ण बन गये हैं।

भारत के विदेशी व्यापार की दिशाः–

भारत के विदेशी व्यापार का क्षेत्रीय दिशा का अध्ययन करने के लिए विश्व को मोटे तौर पर चार बढ़े वर्गो के बांट लेंना उचित होगा अर्थात अमेरिका, यूरोप, एशिया एवं आंशनिया और अफ्रीका।

जहाँ तक अमेरिका महाद्वीप का सम्बद्ध है, भारत के उत्तरी अमेरिका के साथ जिनमें संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा शामिल है, घनिष्ट व्यापारिक सम्बद्ध है। हमारे विदेशी व्यापार में लैटिन अमेरिका के देशों और अन्य अमरीकी देशां का कोई महत्वपूर्ण स्थानीय नहीं रहा है और न ही यह विकसित हुआ।

भारत 1951–52 में अमेरिका को अपने कुल निर्यात का 28 प्रतिशत भेजता था जिसमें से 21 प्रतिशत उत्तरी अमेरिका को और 6.3 प्रतिशत लैटिन अमेरिका के देशों को 1 समय के साथ लैटिन अमेरिका के देशों का भाग कम हो गया और 1969–70 में हमारे निर्यात का 0.3 प्रतिशत रह गया । उत्तरी अमेरिका का भाग 1955–56 और 1968–70 के दौरान 17 से 21 प्रतिशत के बीच था। 1971 में बंग्लादेश के युद्ध के पश्चात् भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ हमारा व्यापार कम हो गया। यह बहुत हद तक इस बात की व्याख्या है कि 1976–77 में संयुक्त राज्य अमेरिका को हमारा निर्यात गिरकर 10 प्रतिशत

क्यों हो गया। हाल ही के वर्षों में इस स्थिति में थोड़ा सुधार हुआ है और 1997–98 में यू0एस0ए0 को हमारा निर्यात कुल निर्यात का लगभग 20 प्रतिशत हो गया आयात पक्ष की ओर अमेरिका द्वारा 1951–52 में 36.3 प्रतिशत योगदान किया गया परन्तु इसका भाग 1960–61 में गिरकर 31.5 प्रतिशत हो गया, फिर 1965–66 में खाद्यान्नों के आयात में वृद्धि होने के कारण यह बढ़कर 40 प्रतिशत हो गया और 1970–71 में यह लगभग 35 प्रतिशत था। बांग्लादेश युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका के शत्रु से व्यवहार पर अपनी निर्भरता कम करने का फैसला किया और परिणामतः उत्तर अमेरिका से हमारे आयात गिरकर 1974–75 में कुल आयात का केवल 19.2 प्रतिशत रह गया। खाद्यान्नों के अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में आयत के फलस्वरूप हमारे आयात में यू0एस0ए0 का भाग 1975–76 में बढ़कर 24.6 प्रतिशत हो गया परन्तु यह 1997–98 मे फिर गिरकर 8.9 प्रतिशत रह गया।

ऐतिहासिक रूप में 1947 तक भारत ब्रिटिश राज्य का एक उपनिवेश होने के कारण यू0के0 के साथ घनिष्ट व्यापरिक सम्बन्ध रखता था। इसके यूरोप के अन्य देशों के साथ भी व्यापारिक सम्बन्ध थे। व्यापार की दृष्टि से यूरोपीय महाद्धीप को तीन बढ़े क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है– परिश्मी यूरोप को फिर मोटे तौर पर दो भागों में बांटा जाता है– यूरोपीय साझा बाजार और यूरोपीय स्वतंत्र बाजार क्षेत्र।

1950–51 में कुल भारतीय आयात का 30.5 प्रतिशंत पश्चिमी यूरोप में प्राप्त होता था। 1955–56 में पश्चिमी यूरोप का भाग बढ़कर 48.9 प्रतिशत हो गया। इसके लिए दो कारण तत्व उत्तरदायी थे। पहला यू0के0 से आयात बढ़ने का कारण यह था कि इसके भारत को स्टलिंग ऋण का भुगतान करना था और दूसरे ई0सी0एम0 में शामिल में शामिल होने का निर्णय कर लिया, हमारे कुल आयायत में ई0एफ0टी0ए0 देशों का महत्व सुकड़कर केवल 1.6 प्रतिशत हो गया। इ0सी0एम0 देशों का भाग जो 1955–56 में 18. 2 प्रतिशत था गिरकर 1969–70 में 10.9 प्रतिशत हो

गया, परन्तु यह फिर उन्नत होकर 1979–80 में 24.2 प्रतिशत हो गया । किन्तु एक हद तक यह वृद्धि ई0एफ0टी0ए0 क्षेत्र से से केवल परिवर्तन के रूप में ही है। यदि हम ई0एफ0टी0ए0 क्षेत्र से केवल परिवव्रन के रूप में ही है। यदि हम ई0एफ0टी0ए0 और इ0सी0एम0क्षेत्रों के साथ ले, तो 1955–56 के पश्चात् यूरोप के भाग में कमी हुई है और 1976–77 में यह गिरकर 21.3 प्रतिशत रह गया। किन्तु 1979–80 में यह उन्नत होकर लगभग 27 प्रतिश हो गया। किन्तु यह 1997–98 में गिरकर 24 प्रतिशत हो गया।

हाल ही के वर्षों में पूर्वी यूरोप के देशा अर्थात् यू0एस0एस0आर0 पोलैण्ड, रूमानिया, बुल्गारिया, पूर्वी जर्मनी, यूरोपीय संघ में बेल्लियम, फ्राँस जर्मनी, इटली, नीदर लैण्ड्स और यू0के0 चेकेस्वालिया, युगोस्लाविया के साथ हमारा व्यापार विकसित हुआ है। इन देशों से आयात की मुख्य मदें है। लौह एवं इस्पात, अलौह धातुयें, रसायन, पूँजी साज–समान, रेलवे स्टोर कागज दवाइयाँ एवं औषधियाँ और

पेट्रोलियम उत्पाद। इनमें से बहुत सही वस्तुयें के आयात हमारे आन्तरक प्रोजेक्टों और सामरिक महत्व के उद्योगों में सहायक है। इनके बदले भारत इन देशों को चाय, काजू गर्म मसाले, तम्बाकू तिलहन, चमड़ा धात्विक अयस्क पटसन की निर्मित वस्तुओं आदि का निर्यात करता है अर्थात् भारतीय निर्यात की पारम्परिक मदें। इन देशों से आयात की संरचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये आयात आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 1960-61 में भारत ने इस क्षेत्र से अपने कुल आयात का 4 प्रतिशत मंगवाया और इस क्षेत्र का निर्यात का लगभग 8 प्रतिशत भेजा। परन्तु 1962 में भारत-चीन युद्ध के पश्चात् पूर्वीय यूरोप के समाजवादी देशों के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध बहुत उन्नत हो गये। हमारे कुल आयात का 13.5 प्रतिशत प्राप्त किया गया और इन्हें हमारे कुल निर्यात का 21 प्रतिशत भेजा गया। इस क्षेत्र से कुल व्यापार का 84 प्रतिशत यू0एस0एस0आर0 से है। 1997-98 तक पूर्वीय यूरोप से हमारे आयात गिरकर लगभग 27 प्रतिशत रह गये और इस क्षेत्र को निर्यात में गिरावट आयी और वे 1979-80 तक 14 प्रतिशत हो गये

और 1997-98 तक गिरकर केवल 3.5 प्रतिशत रह गये। सोवियत संघ के विघटन के परिणाम स्वरूप, इन देशों के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्धों में परिवर्तन आ रहा है।

पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध बढ़े हैं। 1970-71 मे इन देशों से हमारे आयात का लगभग 8 प्रतिशत प्राप्त होता था, परन्तु इसकी तुलना में 1984-85 में यह एक दम छलांग लगाकर 19 प्रतिशत हो गया इसका अधिकतर भाग तेल की कीमतों में तीव्र वृद्धि थी और आयात के परिणात्मक सूचकांक में तद्नुरूप वृद्धि नही हुई।

निर्यात के पक्ष में इन देशों को हमारे निर्यात का 6.4 प्रतिशत 1971-72 में भेजा जाता था और यह 1997-98 में बढ़कर 10 प्रतिशत हो गया। तेल की अन्तर्राष्ट्रीय पेट्रोलियम निर्यातक देशों के साथ हमारे आयात 1986-87 में फिर गिरकर 8.7 प्रतिशत हो गये परन्तु 1997-98 में फिर बढ़कर 23.1 प्रतिशत हो गये।

हमारे विदेशी व्यापार में एशिया ओशनिया में आस्ट्रेलिया एवं जापान महत्वपूर्ण है। 1970–71 के दौरान हमारे निर्यात में इन देशों का भाग 15 प्रतिशत था जो कि हम होकर 1997–98 में 6.8 प्रतिशत रह गया हमारे आयात में भाग जो 1970–71 में केवल 7.2 प्रतिशत था, वह 1997–98 में 8.9 प्रतिशत हो गया।

भारत एशियाई देशों के साथ अपने विदेशी व्यापार को बढ़ाने को भारी क्षमता रखता है क्योंकि इन देशों में भारत की निर्मित वस्तुयें भली–भाँति स्वीकार की जाती है। इसी प्रकार भारत इन सापेक्षतः अल्पविकसित देशों से अपने बढ़ते हुए उद्योगों के लिए कच्चे माल का आयात कर सकता है। इसका प्रमाण यह है कि इन देशों से 1997–98 के दौरान हमार कुल आयात का 17.3 प्रतिशत प्राप्त किया गया जबकि 1970–71 में यह केवल 3.3 प्रतिशत था। निर्यात के क्षेत्र में भी धीरे–धीरे और लगातार उन्नति हुई है और एशियाई देशों को हमारे निर्यात जो 1970–71 में 10.8 प्रतिशत थे बढ़कर 1997–98 में 23 प्रतिशत हो गये।।

अफ्रीका के साथ हमारे निर्यात 1951–52 और 1970–71 के दौरान लगभग 6–7 प्रतिशत के रहे है, परन्तु इसके पश्चात् में गिरकर 1997–98 में 4.7 प्रतिशत हो गये। किन्तु आयात के क्षेत्र में, अफ्रीकी देशों का भाग घटता–बढ़ता रहता है और यह 1951–52 में 9 प्रतिशत था किन्तु 1997–98 में 4.4 प्रतिशत के निचले स्तर पर पहुँच गया।

कुल रूप में यह कहा जा सकता है कि भारत का विदेशी व्यापार अब अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत हो गया है। 1951–52 और 1969–70 के दौरान पश्चिमी यूरोप और उत्तरी अमेरिका पर भारत की अत्यधिक निर्भरत अब कम हो गयी और धीरे–धीरे हमारा व्यापार पूर्वीय यूरोप के देशों और एशियाई देशों के साथ बढ़ाता गया। परन्तु अस्सी के दशक और 1990–91 और 1997–98 के दोरान पश्चिमी यूरोप और उत्तरीय अमेरिका का महत्व बढ़ गया। दोनों क्षेत्र 1997–98 में हमारे निर्यात के 56 प्रतिशत और आयात के 51 प्रतिशत के लिये जिम्मेदार थे। पूर्वीय यूरोप के देशों का

भाग सुकड़ कर नगण्य हो गया और एशिया और अफ्रीका देशों का भाग बढ़ रहा है।

कुछ महत्वपूर्ण देशों के सन्दर्भ में हमारे विदेशी व्यापार की दिशा का परीक्षण करना रूचिकर होगा। हमारे विदेशी व्यापार में आ0 देश महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

वे हैं, यू0एस0ए0, यू0के, जर्मनी, रूस, जापान, यू0एस0ई0 सऊदी अरब और स्विटजरलैण्ड । 1951-52 से 1997-98 के दौरान इन आठ देशों के साथ हमारे निर्यात 57 से 47 प्रतिशत की अभिसीमा में रहे। इसके विरूद्ध इसी काल के दौरान हमारे आयात में इनका भाग 45 से 46 प्रतिशत के बीच रहे।

स्वतन्त्रता पूर्व काल में चाहे यू0के0 विदेशी व्यापार में सर्व प्रथम स्थान रखता था परन्तु 1970 तक यू0एस0ए0 का महत्व बढ़ता गया। 1970-80 के दशक, विशेषकर 1971 के भारत-पाक युद्ध के पश्चात् हमारे विदेशी व्यापार मं यू0एस0एस0आर0 उतना ही महत्वपूर्ण बन गया। आयात पक्ष में 1997-98 में यू0एस0ए0 का भाग सबसे अधिक था,

उसके बाद महत्व के अनुसार आत है– जर्मनी, जापान, यू0के0, सऊदी अरब, और यू0ए0ई0 निर्यात की दृष्टि से 1960–61 तक यू0के0 के भारतीय निर्यात यू0एस0ए0 की अपेक्षा हमेशा अधिक रहा परन्तु तीसरी योजना के दौरान यू0एस0ए0 का निर्यात यू0के0 के बराबर हो गया और बाद में यू0के0 के निर्यात और अधिक गिरकर 5 प्रतिशत के अतिनिम्न स्तर पर पहुँच गया। 1965–66 तक जर्मनी से हमारे आयात बढ़ते गये और बाद में गिरते ही गये और 1975–76 तक ये कुल आयात का लगभग 7 प्रतिशत थे।इसके विरूद्ध इस देशा को हमारे निर्यात कुल निर्यात का केवल 2–3 प्रतिशत ही रहे परन्तु 1997–98 में बढ़कर 6.1 प्रतिशत हो गये। यही कारण है कि जर्मनी के साथ हमारा भारी व्यापारिक घाटा ही रहा। जापान के साथ युद्ध–पूर्व–काल मे हमारे व्यापारिक सम्बन्ध थे। परन्तु युद्ध के दौरान जापन के साथ हमारा विदेशी व्यापार कट गया, फिर अब वह पुनः चालू हो गया है। यू0एव0एस0आर0 के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध हाल के वर्षो में विकसित हुए, परिणामतः 1951–52 में हमारे कुल आयात में 0.2 प्रतिशत के भाग कीतुलना में

1997-98 में यह भाग 2.2 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार यू0एस0एस0आर0 का हमारे निर्यात में भाग जो 1960-61 में 1.4 प्रतिशत बढ़कर 1981-82 में 21 प्रतिशत हो गया परन्तु 1981-82 में गिरकर यह 3.0 प्रतिशत हो गया। हमारेविदेशी व्यापार में ईराक और ईरान महत्वपूर्ण बन गये थे। किन्तु ईरान-इराक युद्ध के कारण इन देशों का महत्व कम हो गया और कुर्वत,यू0ए0ई0 और सऊदी अरब से अधिक आयात का मुख्य कारण खनिज तेल, विशेषकर पेट्रोल का आयात है।

स्वतंत्रता - उपरान्त काल में हमारे विदेशी व्यापार की दिशा में मुख्य परिवर्तन निम्नलिखित हैः-

(1) **नये व्यापारिक साझीदारः-** स्वतंत्रता पूर्व काल में भारत का मुख्य व्यापारिक साझेदार यू0के0 था। और इसका हमारे निर्यात में भाग 34 प्रतिशत और आयात में 30 प्रतिशत था। चाहे स्वतंत्रता के पश्चात् भारत ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का सदस्य बना रहा, फिर भी न्ये व्यापारिक साझीदार प्राप्त करने में सफल हो गया। यू0के0 के

अतिरिक्त, महत्व की दृष्टि से अन्य देश है : यू0एस0ए0, रूस, जर्मनी, जापान और पेट्रोलियम निर्यातक देश। अतः 1951 के पश्चात भारत के विदेशी व्यासपार का मुख्य लक्षण भौगोलिक दृष्टि से विविधीकरण है और इस प्रकार विविधीकरण द्वारा भारत ढूढने में सफल हुआ।

(2) **आयात के अधिक स्रोतः–** दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् बहुत से कारण तत्वों के परिणम स्वरूप जिन देशों से हम माल खरीदते हैं, उनकी संख्या में वृद्धि हुई है। भारत के आयोजित विकास के लिए मशीनरी, संयत्रों, कच्चे माल आदि केवल यू0के0 तथा यू0एस0ए0 द्वारा पूरी नहीं की जा सकती थी। इसके अतिरिक्त, विश्व बैंक एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों से प्राप्त सहायता द्वारा (विश्वव्यापी निविदाओं) द्वारा सबसे सस्ते स्रोत से क्रय कर सकता था। तीसरे, कुछ देशों से बद्ध सहायता और अनुदान होने पर भारत को मजबूर होकर उन्हीं देशों से अपने अप्रयोजनों कार्यक्रमों के लिए आयात करना पड़ता

था। विदेशी मुद्रा के दुर्लभता के कारण भारत कुछ पूँजीवादी देशों की अपेक्षा यू0एस0एस0आर0 और अन्य समाजवादी देशों से द्विपीक्षीय रुपया व्यवस्था के लिए प्रोत्साहित हुआ। यू0एस0एस0आर0 के विघटन के पश्चात् पूर्वीय यूरोप के देशों से व्यापार बहुत कम हो गया। इसके साथ चूँकि 1973 में तेल की कीमतों में तेजी वृद्धि हुई, भारत द्वारा पेट्रोलियम निर्यातक देशों अर्थात् ईरान, यू0ए0ई0, कुर्वत सऊदी अरब आदि से अधिक मात्रा में आयात किया गया।

(3) **निर्यात के लिए बढ़े और अधिक आकर्षक मार्गः–** भारत अपने आयात के भुगतान के लिए अपने निर्यात का विविधीकरण करता रहा है। स्वाभाविक ही है उसे अपनी वस्तुयें बेचने के लिए नये देशों की खोज करनी पड़ती। चाहे यू0के0 भारत की वस्तुयें काफी बड़ी मात्रा में खरीदता है। परन्तु अब इस दूसरा स्थान प्राप्त है और यू0एस0ए0 भारतीय माल का सबसे बड़ा क्रेता बन गया है। इस प्रकार चार देश अर्थात् यू0के0,

यू0एस0ए0, जर्मनी और जापान भारतीय निर्यात के 37 प्रतिशत का क्रय करते है। ये समृद्ध है जिनकी राष्ट्रीय एवं प्रति व्यक्ति आय बहुत अधिक है वे भारत की पारम्परिक वस्तुओं, विशेषकर, गलीचों चमड़े की वस्तुओं, और गैर-पारम्परिक वस्तुओं जैसे समुद्री पदार्थो, हीरे एवं कीमती पत्थरी आदि के लिए उत्तम बाजार उपलब्ध कराते है। मध्य पूर्व के देश भारतीय निर्यात के लिए एक अच्छा बाजार उपलब्ध कराते है और 1997-98 में हमारे निर्यात के 8 प्रतिशत के लिए जिम्मेदार है।

(4) **नये क्षेत्रों की सम्भावनाः-** अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका का भाग बहुत ही थोड़ा है। ये समृद्ध महाद्वीप है जिनका भविष्य उज्ज्वल है। भारत को इन देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध विकसित करने चाहिए। वे भारत के निर्यात के लिए बड़ी मण्डियों बन सकते हैं। इसी प्रकार मध्य पूर्व एशिया के विकासशील देशों में से भारतीय निर्यात बढ़ाने की बहुत गुर्जाइश है और हाल ही

में इन देशों में भारत ने अपनी नयी मण्डियों का विकास किया है।

स्रोत के आधार पर आयात के ढाँचे से पता चलता है कि आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन के देशों द्वारा भारतीय आयात में 1997–98 में सबसे बड़ा भाग अर्थात 51 प्रतिशत उपलब्ध कराया गया। इसके बाद विकासशील देशों (तेल निर्यातक देशों को छोड़कर) का भाग लगभग 23 प्रतिशत है। तेल निर्यातक देशों और पूर्वी यूरोप के देशों का भाग क्रमशः 23.1 प्रतिशत और 2.7 प्रतिशत था।[20]

भारत के निर्यात में भी विविधीकरण हुआ है। 1997–98 में ओ0इ0सी0डी0 समूह की भारतीय निर्यात में भाग 56 प्रतिशत था। जबकि विकासशील देशों का 30 प्रतिशत और पूर्वीय यूरोप के देशों का भाग 3 प्रतिशत है। तेल निर्यातक देशों का हमारे कुल निर्यात में भाग 10 प्रतिशत है हाल ही के वर्षों में

एशिया और प्रशान्त महासागर क्षेत्र के देशों का भारतीय निर्यात मे भाग बढ़ रहा है।

---

20. भारतीय अर्थव्यवस्था रूद्रदत्त, के0पी0एम0 सुन्दरम संस्करण- 2000 एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी लिमिटेड, रामनगर नई दिल्ली - 110055 पृ0 - 518

मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटने से आयात नहीं बढ़ेगा

मात्रात्मक प्रतिबन्धों के हटाये जाने से आयात में बढ़ोत्तरी का कोई संकट नहीं है। यह ज्ञात आर्थिक परीक्षा में विभिन्न देशों से होने वाले आयात के आंकड़ों के ध्यान में रखते हुए कही गयी है। वित्त वर्ष 1996-97 के बाद अब तक कुल 2714 उत्पादों में अधिकांश पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध को हटा लिया गया है। अब सिर्फ 715 उत्पादों पर ही मात्रात्मक प्रतिबन्ध बचे रह गये है। जो 31 मार्च 2001 को समाप्त हो जायेंगे। हालांकि इन उत्पादों पर कुछ कनलाइज्ड उत्पादों को छोड़कर लगभग सभी पर सार्क देशों से आयात के मद्देनजर मात्रात्क प्रतिबन्ध अगस्त 1998 से हटा लिये गये है, समीक्षा के अनुसार इन प्रतिबन्धों को हटाये जाने से देश में आयात बढ़ोत्तरी और डपिंग की आशंका व्यक्त की जा रही है, यह आशंका विशेष रूप से चीन, नेपाल और कुछ पूर्वी एशियाई देशों से होने वाले आयात को लेकर है। हालांकि अप्रैल से दिसम्बर के दौरान गैर-तेल आयात में पिछले वित्त वर्ष की समान अवधि में होने वाले आयात के

मुकाबले 8.3 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई है। हालांकि चीन से होने वाले आयात में बढ़ोत्तरी हुई है मगर आयात से कहीं अधिक चीन को होने वाले हमारे निर्यात में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। वित्त वर्ष 1999-2000 के दौरान चीन से होने वाले आयात में 17.9 फीसदी और चालू वित्त वर्ष के पहले सात महीनों के दौरान 28.2 फीसदी की बढ़ोत्तरी दर्ज की गयी है।

आर्थिक सुधारों मे ढाँचागत उद्योगों के विकास पर लगातार जोर देने के बावजूद स्थिति सुधरती नहीं दिखती।

मौजूदा वित्त वर्ष के दौरान बुनियादी ढाँचा की विकास दर पिछले वित्त वर्ष की तुलना में कम रही है। आज यहाँ संसद के दोनों सदनों में पेश वित्त वर्ष 2000-2001 की आर्थिक समीक्षा के मुताबिक चालू वित्त वर्ष (2000-2001) के अप्रैल से दिसम्बर तक की अवधि के दौरान छः प्रमुख ढाँचागत उद्योगों (बिजली, उत्पादन, कोयला, इस्पात, कच्चातेल, तेल शोधन व सीमेन्ट) में 7.7 फीसदी की विकास दर प्राप्त की। जबकि वित्त वर्ष 1999-2000 के

समान अवधि में यह वृद्धि पर 9.1 फीसदी की थी। हालांकि इस अवधि के दौरान कोयला उत्पादन में अच्छी वृद्धि दर्ज की गयी है। लेकिन ताप बिजली व पन बिजली उत्पादन केन्द्रों का प्रदर्शन निराशाजनक रहा। आर्थिक समीक्षा के मुताबिक वर्ष 1991 में आर्थिक सुधार कार्यक्रम लागू होने के बाद देश में बिजली, रेलवे व सड़क जैसे अतिमहत्वपूर्ण बुनियादी सेवाओं की स्थिति पहले से भी खराब हुई है। बिजली क्षेत्र व सड़क विकास की गति सुधार पूर्व के दशक के तुलना में काफी कम दर्ज किया गया है।

सर्वेक्षण के मुताबिक कई सुधार लागू करने के बावजूद बिजली उत्पादन की स्थिति जस की तस बनी हुई है।

आर्थिक समीक्षा के मुताबिक चालू साल के दौरान, फसलों का उत्पादन 1 करोड़ टन कम होने के बावजूद इनकी कीमतों में खास बढ़ोत्तरी की उम्मीद नहीं है। इसका प्रमुख यह है कि देश के पास पहले से ही 4.5 करोड़ रूपये का खाद्यान्न स्टाक मौजूद है। चीनी स्टाक होने के कारण मिष्ठानों की कीमतें नियंत्रित रहेगी हालंकि खाद्य तेल के बारे में कोई

अनुमान नहीं लगाया जा सकता। इस बार जाड़े के मौसम में पर्यात वारिश नहीं होने के कारण सरसों का उत्पादन प्रभावित हो सकता है।

समीक्षा में मैन्यूफैक्चरिंग उत्पाद समूह के कहा गया है कि थोक मूल्य सूचकांक में इसका हिस्सा दो तिहाई से भी ज्यादा है। व इसमें पिछले दो वर्षों से इनकी कीमतों में तीन फीसदी की वृद्धि हो रही है। लेकिन चालू वित्त वर्ष के दौरान इसके कारण मुद्रा स्फीति पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा।

समीक्षा में कहा गया है 1999–2000 में कृषि की अच्छी पैदावार, खाद्यान्नों के पर्याप्त बफर स्टाक व खाद्य तेलों चीनी व दालों की आपूर्ति में सुधान होने के कारण कीमतों को नियंत्रित करने में सहायता मिली। चावल, गेहूँ, आटा, खाद्य तेज जैसे 16 खाद्य वस्तुओं की कीमते पिछले वित्त वर्ष की तुलना में कम रही है हालांकि पेट्रोलियम उत्पादों

की कीमतों में वृद्धि ने मुद्रा स्फीत के बारे में सारे समीकरण उल्टा कर दिये।[21]

आजकल उदारीकरण, भूण्डलीकरण से पड़ने वाले प्रभावों को लेकर चर्चायें जैसे पर है, विश्व व्यापार संगठन के सदस्यों देशों द्वारा उदारीकरण व भूण्डलीयकरण हेतु मजबूत आधार तैयार करने की प्रक्रिया विभिन्न स्तरों पर जारी है। विश्व व्यापार संगठन का हर सदस्य देश बहुत हद तक अपनी भीतरी व्यवस्था को भूण्डलीय करण के अनुरूप ढालने की बचनबद्ध है। फिलहाल नई बाजार व्यवस्था का पूरी तरह से भमण्डलीकरण नहीं हुआ है लेकिन सम्बद्ध देशों के भाग लोगों पर इसका प्रभाव पड़ना शुरू हो गया है। भूमण्डलीकरण करण के दौर में विशेषकर भारत जैसे विकासशील देशों की चिंताएँ बढ़ गयी है।

नये वित्तीय वर्ष में अप्रैल से विश्व व्यापार संगठन के निर्णय के मुताबिक उपभोक्ता वस्तुओं के अयात पर सभी प्रतिबन्ध हटा लिये जायेंगे जिसका प्रभाव लघु उद्योगों तथा

---

[21] अमर उजाला – इलाहाबाद, 24 फरवरी, 2001

कृषि पर विशेष रूप से पड़ेगा। भारत के उद्योगों को सबसे ज्यादा खतरा विकसित देशों से नहीं है, बल्कि दक्षिण पूर्व के एशियाई देशों से है।

इस माले पर देश के अर्थशास्त्रियों और सरकार के बीच चर्चा की गयी। सबसे बड़ी चिन्ता यह है कि इस वर्ष अप्रैल में आयात प्रतिबन्धों के हटने के बाद भारतीय बाजार में चीन, दक्षिण कोरिया, मलेशिया और थाईलैण्ड जैसे देशों की उपभोक्ता वस्तुओं की बाढ़ आ जायेगी। पहले ही भारतीय बाजार में चीन में निर्मित उत्पादों की भरमार हो गयी है और वे सस्ते बिक रहे हैं। चीन में निर्मित वस्तुओं की गुणवत्ता भी अच्छी है, इसकी तुलना में भारतीय उत्पाद कही अधिक मंगहे और निम्न गुणवत्ता के हैं। अतः इतना ही तय है कि इस वर्ष निम्न गुणवत्ता के हैं। अतः इतना तो तय है कि इस वर्ष अप्रैल के बाद इन सभी देशों से भारतीय बाजार में प्रवेश करने वाली वस्तुएँ भारतीय उद्योग पर बहुत बुरा प्रभाव डालने वाली है। इस वर्ष से भारतीय अर्थव्यवस्था को सबसे ज्यादा खतरा अमेरिका से नहीं बल्कि चीन से होगा। पिछली कई

केन्द्र सरकारों ने देश के लघु उद्योगों को बहुत अधिक सुरक्षा तो प्रदान की, मगर किसी भी सरकार ने इन लघु उद्योगों के आधुनिकीकरण और इनके उत्पादों की गुणवत्ता सुधारने की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया है कि किस तरह से इन उ़द्योगों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार किया जाये।

यहाँ तक कि 1971 मे लघु उ़द्योगों के आधुनिकीकरण पर दी गयी आबिदहुर्सन समिति की रिपोर्ट पर भी कोई विचार नहीं किया गया है। भारत में अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन उन इकाइयों में होता है जो लघु उद्योगों के दायरे में आती है। भारतीय अर्थ व्यवस्था उपभोक्ता वस्तुओं के दाम पर ही आगे बढ़ रही है। मगर अब उस पर विश्व व्यापार संगठन के दबाव में एक जबरदस्त प्रहार होने वाला है। सस्ते आयातों के कारण हमारे उद्योगों के लिए उत्पादन करना मुनाफे का सौदा नहीं दिखता। अतः वे कम्पनियों, जिनके पास विपणन व विज्ञापन का अच्छा नेटवर्क है, अपने आपको मैन्यूफैक्चिरिंग से निकालकर मार्केटिंग की

ओर से ले जा रही है। इस विषय पर सरकार और योजना आयोग गम्भीर नही है। विश्व व्यापार संगठन की शर्तों के तहत और अमेरिका के दबाव में भारत ने कृषि उत्पादों के आयात पर से सारे नियंत्रण हटाने का फैसला किया है।

हमारे देश कृषि प्रधान देश अवश्य है, किन्तु इस क्षेत्र में अभी तक हमने केवल मात्रात्मक सफलता अर्जित की है, और गुणवता पर ध्यान नहीं दिया गया है, यही कारण है कि जब हमारा कृषि उत्पाद विश्व बाजार में पहुँचता है तो उसकी कीमत लागत से भी हम आंकी जाती है, अनेक बार यह देखा गया है कि विदेशें में हमारे उत्पादन टिकटें नहीं, बल्कि पिटते हैं।

ऐसी स्थिति में भारतीय किसान को अन्तर्राटष्ट्रयी बाजार के मगरमच्छों के बीच असहाय छोड़ दिया जा रहा है। कृषि उत्पादों के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर दुनिया के अमीर देशों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का वर्चस्व है, दुनिया में अपना वर्चस्व बनाये रखने व उत्पाद बेचने के लिए विकसित देश अपने किसानों और कम्पनियों को बहुत भारी अनुदान देते हैं।

इसका सबसे बढ़िया उदाहरण स्वयं अमेरिका है। जबकि भारत सरकार राजकोषीय घाटे के पूरा करने के लिए कृषि क्षेत्र को मिलने वाले अनुदान को समाप्त करने की ओर अग्रसर है। अनुदान देना अगर सरकार ने बन्द कर दिया तो यह तय है कि हमारे कृषि उत्पादों की लागत और बढ़ जायेगी। हमारे कृषि उत्पाद और मंहगे हो जायेंगे। ऐसे में हमारे किसानों की स्थिति का आसानी से अंदाजा लगाया जा सकता है । उदारीकरण की नीति के तहत कपड़े के आयात को छूट देने के कारण भारतीय कपड़ा उद्योग भी संकटग्रस्त हो गया है। आज स्थिति यह है कि 340 कपड़ा मिले बन्द हो गयी है। उनमें से 92 तो अप्रैल 1999 में ही बन्द हुई थी। विदेशों से सस्ते कपड़े के आयात ने भारतीय कपड़ा उद्योग की कमर ही तोड़ दी है।

1998-99 के दौरान कपड़ा मिलों का घाटा 2410 करोड़ रुपये था। इधर सरकार द्वारा छोटे उद्योगों को मिलने वाले आरक्षणों मे भी कमी की गयी है और हैण्डलूम और पावरलूम के लघु उद्योग भी संकटग्रस्त हो गये हैं।

भारत के कई कपड़ा उद्योगपति भी अपने यंत्रों को समयानुसार आधुनिक नहीं बना पाये है। उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में उतरने की न तो प्रेरणा मिली है और न ही उनमें उत्साह है।

आज हालत यह है कि जो देश भारत से कपड़ा आयात करते थे, वही देश भारत को कपड़ा निर्यात कर रहे है, यह सभी है कि उदारीकरण धनी देशों व नवधनाढ्यों के लिए व्यवसाय की असीम सम्भावनाएं पैदा कर रहा है। दर यह सब अर्द्धविकसित व विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था की कीमत पर होल है। धीरे-धीरे विश्व व्यापार संगठन के सदस्य देशों में कानून व्यवसाा, रक्षा, विदेश, सामान्य प्रशासन व राजस्व जैसे विषय ही सरकार के विषय रह जायेगें। जिसकी पानी, सड़क परिवहन, रेल, हवाई सेवायें, जनस्थ्य, शिक्षा तेज खनिज, खाद्यान्नों की खरीद व वितरण आदि का सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न उपक्रम जो अब तक बेशक सरकार के विषय रहे हों, पूरी तरह निजी क्षेत्र के लिए खोल दिये जायेंगे। कृषि समेत औद्योगिक व अन्य उत्पादक व गैर उत्पादक व्यापारिक

गति–विधियों में हमारे देश को बहु–राष्ट्रीय कम्पनियों से प्रतिस्पर्धा करनी होगी, कई देशों की सरकारें अपने जन–कल्याणकारी स्वरूप की रक्षा नहीं कर पायेगी। हमारे देश में लगभग 38 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा से नीचे रहती है और ऐसे में सरकार के जनसेवी अथवा कल्याणकारी स्वरूप का रहना आवश्यक है, लेकिन वैश्वीकरण के चलते इस स्वरूप का कायम रहना मुश्किल है। उदारीकरण के पक्ष में यह तर्क बड़े जोर–शोर से दिया जाता रहा है कि इससे उपभोक्ताओं को बाजार में सस्ते एवं बेहतर गुणवत्ता वाले उत्पाद उपलब्ध होंगे।

विदेशी निवेश तथा व्यापारिक गतिविधियों के बढ़ने से रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी, उत्पादन के साधनों का अनुकूलतम प्रयोग होगा और उत्पादकता बढ़ेगी। किन्तु यह सुनहरा सपना तभी पूरा होगा, जब हम अपने आपकों अर्न्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार करें एवं आधुनिक उत्पादन तकनीक का प्रयोग करें। ज्यादातर उद्योगपतियों को यह एहसास है कि वे लम्बे अरसे तक संरक्षण की नीत पर भरोसा नही कर सकते है और नहीं वह अक्षम बुनियादी संरचना,

अधिक पूँजी लागत और कठोरश्रम कानूनों के चलते उत्पादन लागत में कमी कर सकते हैं। अगले वित्तीय वर्ष में ढेर सारी वस्तुओं पर आयात प्रतिबध हट जायेगा, तब शायद भारतीय उद्योगों और सरकार की तन्द्रा टूटेगी।

पंडित नेहरू ने अपनी विख्यात पुस्तक डिस्कवरी आफ इण्डिया में ठीक ही लिखा था "हमारा देश गुलाम हुआ" इसके कारणों में से एक प्रमुख कारण यह था कि हम हमेशा अर्न्तमुखी रहे। हमने हमारे देश के बाहर यह देखने की परवाह नहीं की कि दूसरे देशों ने किन-किन क्षेत्रों में कितनी प्रगति कर ली है एवं कौन सी तकनीक अपना ली है। हमने दुनिया के देशों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने पर ध्यान नही दिया, इसलिए हम पिछड़ गये और गुलाम हो गये।" आज भी हमारी स्थिति बहुत बेहतर नहीं हुई है। हम दूसरे देशों से बहुत कम सबक ले रहे है। उपभोक्ताओं की प्राथमिकताएँ व आवश्यकताएँ तेजी से बदल रही है, ऐसे बदलावों पर हमारा ध्यान नहीं है। विदेशी निवेशक सुरक्षित स्थान मानते हैं। क्योंकि भारत में एक मजबूत प्रजातंत्र है,

कानून का राज्य है, और अंग्रेजी भाषा का अच्छा चलन है। भारत के लिए यह सर्वोत्तम अवसर है।

यदि भारत अपनी नौकरशाही पर अंकुश लगा कर इंसपेक्टर राज को खत्म करे और निरर्थक आथ्रिक अंकुशों को समाप्त करें तो विदेशी निवेशक अपने पैसें एवं तकनीक के साथ हमारे देश के प्रति तेजी से आकर्षित होगें। इस तरह देश में निवेश, बढ़ेगा, रोजगार के अवसर बढ़ेगें, साधन और संसाधनों का बेहतर प्रयोग होगा, परिणामतः आर्थिक विकास को गति मिलेगी तथा हमारे उद्योग पति प्रतिस्पर्धा का समाना करने में समक्ष हो सकेंगे।[22]

दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान लघु उद्योग क्षेत्र पर 44 लाख अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित करन की जिम्मेदारी डाल दी गयी है। इसे पूरा करने के लिए इस अवधि में लघु उद्योग क्षेत्र के लिए 12 फीसदी की विकासदर का लक्ष्य रखा गया है। इन लक्ष्यों को पूरा करने को लेकर स्वयं लघु उद्योग मंत्रीय असमंजस में है। मंत्रालय के

---

[22] अमर उजाला, मंगलवार 6 फरवरी, 2001, पृ0 6

अधिकारियों का मानना है कि मौजूदा नीतियों के तहत इन लक्ष्यों को पूरा करना बहुत मुश्किल है।

चालू वित्त वर्ष की मध्यावधि आर्थिक समीक्षा में वित्त मंत्रालय ने लघु उद्योग के लिए आरक्षित उत्पादों के अनारक्षण की वकालत की है। इससे पहले कलकर समूह द्वारा लघु उद्योग क्षेत्र को एक करोड़ रूपये तक के कारोबार पर मिलने वाली उत्पाद शुल्क छूट को घटाकर 50 लाख करने की सिफारिश की थी। इन सभी घोषणाओं के साथ ही लघु उद्योगों क्षेत्र को प्रोत्साहन देने की बात की जा रही है। विशेषज्ञों का कहना है कि इस प्रकार के दोहरने मानदण्डों से लघु क्षेत्र का अपेक्षित विकास नहीं हो सकता है।

योजना आयोग द्वारा नये रोजगार सृजन को लेकर अहलूवालिया और एस0पी0गुप्ता समितियों ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि लघु उद्योग क्षेत्र में नये रोजगार सृजन की सम्भावनाएँ सर्वाधिक है। मौजूदा समय में लघु उद्योग क्षेत्र में 1.93 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है, जबकि दसवी पंचवर्षीय योजना के दौरान लघु क्षेत्र में 44 लाख रोजगार के

अतिरिक्त अवसर सृजित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस पंचवर्षीय योजना के दौरान लघु उद्योग के लिए 12 फीसदी की विकास का दर निर्धारित किया गया है। मंत्रालय के अधिकारियों का कहना है कि योजना आयोग की रिपोर्ट में जो कुछ भी कहा गया है। वह पूरीी तरह से ठीक है लेकिन मौजूदा नीतियों में यह जिम्मेदारी पूरा करना काफी मुश्किल लग रहा है।

विभागीय अधिकारियों के अनुसार सबसे बड़ी दिक्कत वित्त पोषण की है। लघु उद्योग क्षेत्र को न सिर्फ बड़ी कम्पनियों की तुलना में कम ऋण दिया जा रहा है बल्कि उनके लिए वित्त पोषण की लागत भी बहुत अधिक है। इण्डियन बैक्स एसोसियेशन के चेयर मैन दलवीर सिंह ने भी इस बात को स्वीकार किया है। वित्त योजना की लागत कम करने के साथ ही अन्य कुछ उपायों पर हाल ही में योजना आयोग की एक बैठक में व्यापक विचार विमर्श हुआ है। इस

बैठक मे लघु उद्योग मंत्रालय ने लघु क्षेत्र को ऋण बढ़ाने और उसकी लागत को घटाने पर जोर दिया है।[23]

केन्द्र सरकार ने यह विश्वास जताया है कि वर्ष 2010 तक भारत का टैक्सटाइल निर्यात बढ़कर 50 अरब डालर के स्तर पर पहुँच जायेगा।

केन्द्रीय कपड़ा मंत्री काशीराम राजा ने कहा है कि वर्ष 2005 में कोटा प्रणाली के समाप्त होने के बाद अन्य देशों के मुकाबले भारतीय टेक्सटाइल की स्थित मजबूत होगी और मुझे उम्मीद है कि मात्रात्मक प्रतिबन्ध को समाप्त किये जाने के पांच साल बाद देश का टेक्सटाइल निर्यात 50 अरब डालर के स्तर पर पहुँच जायेगा। राजा आज यहाँ अखिल भारतीय टेक्सटाइल सम्मेलन को सम्बोधित कर रहे थे। राजा ने बताया कि तकनीकी उनायन फण्ड स्कीम के तहत 31 अक्टूबर तक कुल 15158 करोड़ रूपये की परियोजनाओं के लिए1928 आवेदन प्राप्त हुए है। इनमें से 5739 करोड़ रूपये आधुनिकीकरण व उन्नयन के लिए मंजूर किये जा चुके

---

[23] अमर उजाला – इलाहाबाद, 15 दिसम्बर 2002, पृ0 7

हैं। उन्होंने कहा कि सरकार विकास आधारित वित्तीय नियंत्रण व पाबंदियों से मुक्त करना चाहती है।

राजा ने बताया कि सरकार इंटीग्रेटेड अपैरेल पार्क स्थापित कर रही है, जो अनारक्ष्झित रेडीमेड गारमेन्ट उद्योग को आधुनिक इकाई के साथ-साथ ढांचागत सुविधाएँ विकसित करनेम ें मददगार होगा। इस सम्बन्ध में नौ अपैरेल पार्क स्थापित करने के लिए समझौते किये जा चुके हैं। वीजिंग क्षेत्र के आधुनिकीकरण पर राजा ने कहा कि सरकार ने 50000 शटललेस लूम का आधुनिकीकरण किया है, और सरकार का लक्ष्य वर्ष 2004 तक प्लेनलूमों को आटोमेटिक में बदलने का है।[24]

---

24 अमर उजाला – इलाहाबाद, 15 दिसम्बर 2002, पृ0 7

अ ाय पांच

विश्व व्यापार संगठन एवं भारत.... अमेरिका

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विश्व अर्थव्यवस्था में सतत् बहुआयामी परिर्वतन हुये हैं, जो अब भी जारी है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप अर्थव्यवस्थाओं के स्वरूप में भी परिर्तन होते रहे हैं। विश्व अर्थव्यवस्थाओं में यह परिवर्तन होते रहे हैं। विश्व अर्थव्यवस्थाओं में यह परिवर्तन अन्तिम चतुर्राश के प्रारम्भ से अधिक स्पष्ट एसवं तीव्र हुये हैं, विशेषकर अस्सी के दशक में । इस अवधि में विश्व के कई भागों में आर्थिक सुधारों एवं पुनर्सरचना की प्रक्रिया प्रारम्भ की गयीं इसके साथ ही साथ यूरोपीय अर्थव्यवस्था में उतार-चढ़ाव एवं बेरोजगारी की स्थिति देखी गयी । नब्बे के दशक में तो अति क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये जिसमें अर्थव्यवस्थाओं की वैश्वीकरण एवं उदारीकरण की प्रक्रिया सम्मिलित है। जिसके परिणामस्वरूप विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थायें सकारात्मक एवं नकारात्मक रूप में प्रभावित हो रही हैं। विश्व व्यापार संगठन एक्त आर्थिक सुधारों

आर्थिक पुनर्संरचना, उदारीकरण एंव वैश्वीकरण का एक अंग है।

विश्व व्यापार संगठ्न की स्थापना 15, अप्रैल 1994 को हुई। इसने 1 जनवरी, 1995 से कार्य करना आरम्भ किया। विश्व व्यापार संगठ्न की स्थापना पहले से चले आ रहे व्यापार और प्रशुल्क दर सामान्य समझौता के स्थान पर की गयी। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इसने गैट को प्रतिस्थापित किया है। विश्व व्यापार संगठ्न में गैट के आठवें दौर के प्रस्तावों को भी सम्मिलित किया गया है। इसलिये विश्व व्यापार संगठ्न की सम्यक जानकारी के लिये गैट के प्रविधानों और उद्देश्यों के साथ गैट के आठवें दौर के प्रस्तावों जिन्हें मुख्य रूप से डंकल प्रस्ताव कहा जाता है, का विश्लेषण आवश्यक है। इस परिप्रेक्ष्य में यहां गैट के प्रविधानों, डंकल प्रस्तावों की रूपरेखा और उसके भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले दूरगामी प्रभाव पर विश्लेषण किया गया है। विश्व व्यापार संगठ्न वस्तुतः उदारीकरण , वैश्वीकरण और निजीकरण

की एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्ययोजना हैं । उक्त तत्व ही नवीन अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के भी अवयव हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि विश्व व्यापार संगठन वास्तव में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था का संवाहक है।

पृष्ठ भूमि और प्राविधान

परम्परावादी अर्थशास्त्री विशेष रूप से स्वतंत्र व्यापार नीति के पक्षधर में थे जिसमें व्यापारिक लेन-देन पर न तो कोई प्रशुल्क और न मात्रात्मक प्रतिबन्ध होते हैं नहीं कोई ऐसी विधि अपनाई जाती है तो वस्तुओं एवं सेवाओं के आवागमन होने पर अवरोध उत्पन्न करें। यह माना जाता है कि स्वतन्त्र व्यापार नीति से बाजार विस्तृत होता है, संशाधनों का अनुकूलतम प्रयोग होता है, श्रम विभाजन और विशिष्टिकरण को प्रश्रय मिलता है, जिससे कुल उत्पादन बढ़ता है, और आर्थिक विकास की गति तीव्र होती है, इस व्यापार प्रणाली में प्रशुल्कं कोटा, विनिमय नियंत्रण ऋणात्मक अवरोध आदि का निषेध होता है। विश्व व्यापार में विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में नियमन और नियंत्रण

की विधियों का प्रयोग किया इससे विश्व व्यापार को गम्भीर समस्याओं का सामना करना पड़ा।

अतः द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उदारवादी विश्व व्यापार प्रणाली अपनाने की प्रक्रिया आरम्भ की गयी। और विभिन्न देश नियंत्रण और संरक्षण की व्यापारिक नीति की अन्तर्निहित विसंगतियों के कारण अंशतः स्वतन्त्र व्यापार नीति के प्रति अग्रसर हुए। उदारवादी विश्व व्यापार व्यवस्था इस परिकल्पना पर आधारित है कि इससे संसाधनों का अनुकूलतम विदोहन होगा। विश्व स्तर पर वस्तुओं के उत्पादन और लेनदेन में वृद्धि होगी। पूर्ण रोजगार की दशायें निर्मित होगी और लोगों की जीवन स्तर में सुधार आ सकेगा।

द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व और उसके बाद भी अमरीका इस नीति का समर्थक रहा है, कि विश्व की सार्वत्रिक समृद्धि और शान्ति के लिए उदारवादी व्यापार व्यवस्था सहायक है। इस परिप्रेक्ष्य में अमेरिका ने द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व कुछ देशों से द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते

किये जिसमें प्रशुल्कों में कमी की गयी थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भी उदारवादी व्यापार नीति के परिप्रेक्ष्य में विश्व व्यापार के विस्तार और विविधीकरण के लिए प्रस्ताव किये गये, उदार व्यापार व्यवस्था की कार्यविधि निश्चित करने के लिए व्यापार और रोजगार का अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 1947 में हवाना मं आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में 53 देशों ने भाग लिया और अन्तर्राष्ट्रीय संगठ्न की स्थापना का एक चार्टर स्वीकार किया गया। परन्तु अमरीकी कांग्रेस द्वारा इसका समर्थन न किये जाने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठ्न का गठ्न नहीं किया जा सका। परन्तु व्यापार रियासतों पर बातचीत करने के लिए भारत सहित 23 देश सहमत हुए और 30 अक्टूबर 1947 को व्यापार एवं प्रशुल्क सम्बन्धी सामान्य समझौते पर हस्ताक्षर किये, जो 1 जनवरी 1948 से लागू हुआ। प्रशुल्क एंव व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौता अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रणाली को उदार बनाने के लिए नियमों की एक संहिता है। इस समझौते पर 30 अक्टूबर 1947 को हस्ताक्षर किये गये। उस समय भारत सहित कुल 23 देशों

ने हस्ताक्षर किये थे। अतः भारत गैट का प्रारम्भिक सदस्य है। गैट समझौता 1 जनवरी 1948 से लागू हुआ। इस समझौते के अब कुल 126 देश सदस्य हैं और विश्व के कुल व्यापार का अधिकांश भाग सदस्य देशों के बीच होता है। प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौता सदस्यों द्वारा ही निर्मित कतिपय आधार-भूत संहिताओं पर आधारित है। जिनके अनुपालन हेतु सदस्य देशों ने स्वतः अपनी स्वीकृति दे रखी है। इसलिये इसकी व्यवहार संहिता को प्रत्येक सदस्य देश बिना किसी भेद-भाव के पालन हेतु नैतिक रूप से जिम्मेदार है। गैट के विविध प्राविधानों, जिनका सदस्य देशों द्वारा पालन किया जाना आवश्यक है, का विश्लेषण निम्नवत् है :

1. **परममित्र राष्ट अनुच्छेद –**

परममित्र राष्ट्र का सिद्धांत यह व्यवस्था करता है कि प्रत्येक राष्ट्र किसी दूसरे सदस्य राष्ट्र के प्रति सर्वाधिक प्रिय राष्ट्र के समान ही व्यवहार करें। समझौते में यह उल्लेख किया गया है कि कोई सदस्य

देश किसी दूसरे सदस्य देश के उत्पादन के लिए लाभ एवं रियायतें देगा। वे सभी बिना किसी भेदभाव के अन्य समस्त सदस्य देशों के उत्पादन के लिए स्वतः प्राप्त होगी। सदस्य देशों के बीच होने वाली द्विपक्षीय समझौते के अन्तर्गत फेरियायतें दी जाती हैं वे सभी सदस्य देशों में आपसी भेदभाव की समाप्ति होती है, और विवेचनात्मक व्यवहार की पुष्टि होती है, गैट प्राविधान में यद्यपि सीमा संघों और स्वतंत्र व्यापार क्षेत्रों के स्थापना का प्राविधान है, परन्तु उसी विशिष्ट स्थिति में जब सम्बन्धित क्षेत्रों में व्यापार मुक्ति जनक हो और अन्य सदस्य देशों के व्यापार में प्रतिकूल प्रभाव न हो।

2. अन्योन्यता का सिद्धांत

प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौते का एक प्रमुख मार्गदर्शक सिद्धांत अन्योन्यता की परिकल्पना है। अन्योन्यता की परिकल्पना के अनुसार कोई सदस्य देश यदि किसी दूसरे देश को व्यापार सम्बन्धी

रियायत देता है। तो लाभ प्राप्तकर्ता देश से भी अपेक्षा की जाती है कि वह प्रथम देश के लिए रियायत प्रदान करें। इसके पश्चात् परम मित्र राष्ट्र अनुच्छेद के अनुसार वे रियायतें अन्य समस्त सदस्य राष्ट्रों को स्वतः ही उपलब्ध हो जाती है। अन्योन्यता के सिद्धांत से विभिन्न देशों के व्यापार सम्बन्ध प्रगाढ़ होते है और व्यापार में वृद्धि होती है

3. मात्रात्मक प्रतिबन्धों की समाप्ति

प्रशुल्क और व्यापार सम्बन्धी समझौता की क्रियाविधि में व्यापार पर लगाये जाने वाले मात्रात्मक प्रतिबन्धों का निषेध है। गैट प्राविधान में विभिन्न सदस्य देशों से मात्रात्मक प्रतिबन्धों के आधार पर नहीं बल्कि आयात शुल्कों के द्वारा व्यापारिक लेन देन की नियमन की अपेक्षा की गयी है। दूसरे शब्दों में यह कहा जाता है कि सदस्य देश आयात कोटा निधारित करके को प्रतिबन्धित न करें। इस कम में यह भ व्यवस्था है कि गैट सदस्य देशों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करें कि वे न्यूनतम सम्भव स्तर पर आयात-शुल्कों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने

का प्रयास करें। अर्थात आयात शुल्कों का दर संभव त्र तक नीची रखी जायें गैट वार्ताओं के अब कि के विभिन्न दौर में निर्मित वस्तुओं की सीमा शुल्कों में कमी करने का प्रयास किया है। इसके प्रयासों के परिणामस्वरूप विभिन्न देशों ने आयात शुल्कों में कमी किया गया है और व्यापार विस्तार हेतु यह क्रम जारी है।

4. प्रशुल्क रियायतों की व्यवस्था

गैट का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटक समझौता करने वाले देशों के बीच परस्पर शुल्क के दरों की कमी से सम्बन्धित है। यह स्वीकृत अवधारणा रही है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्यक विकास में प्रशुल्क सबसे बड़ी बाधा रही है। इसलिए सदस्य देशों को प्रशुल्क में परस्पर कमी करने का प्रयास करना चाहिए। गैट ने यह प्राविधान है कि प्रशुल्क में कटौती का आधार पारस्परिक हित होना चाहिए और प्रत्येक सदस्य देश को पारस्परिक सदस्यता के आधार पर प्रशुल्क में कमी करनी चाहिए। अस प्रकार यह समझौता प्रशुल्क में कमी करने या अत्यन्त कम

प्रशुल्क लागू करने के लिए किया जाता है। गैट में प्रशुल्क कमी करने की द्विपक्षीय विधि अपनायी जाती है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के साथ एक-एक वस्तु चुनकर समझौता करनते हैं। फिर परम मित्र राष्ट्र की परिकल्पना के आधार पर यह रियायतें अन्य समस्त सदस्य राष्ट्रों को मिलने लगती है। और यह एक बहुपक्षीय संधि हो जाती है। गैट में परस्पर सीमा शुल्क कम करने और कभी-कभी न लेने के लिए प्रत्येक राष्ट्र तत्पर होते हैं। इससे प्रशुल्क रियायतों का आधार अत्यन्त व्यापक हो जाता है और व्यापारिक लेन देन अधिक जटिल हो जाता है।

5. विवादों का निराकरण

गैट प्राविधानों के नियमों का उल्लंघन होने पर यदि विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाय और इस समझौते के उद्देश्य में व्यवधान होने लगे तो उसके सम्यक निराकरण हेतु भी व्यवस्था की गयी है। गैट के स्वतन्त्र विशेषज्ञों के समूह की सिफारिश के आधार पर इस प्रकार के विवादों का निराकरण किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा

कोष और विश्व बैंक की निर्णय प्रक्रिया में भारतीय मतदान विधि अपनायी जाती है। इससे पृथक गैट की निर्णय प्रक्रिया में यद्यपि वार्ता के विषय के अनुसार मतदान विधि प्रथक-प्रथक होती है। परन्तु आधारित रूप से प्रत्येक देश चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, एक मत देने का अधिकार रूप में प्रशुल्कों में कमी की गयी। गैट के एन्टी टारेक्वाय और जेनेवा के सम्मेलनों में कुछ विशिष्ट उत्पादों पर लगाये जाने वाले प्रशुल्कों में कटौती की गयी। 1960-62 के जेनेवा सम्मेलन मे प्रशुल्कों में औसतन 20 प्रतिशत की कटौती की गयी। इस प्रकार गैट के प्रथम पांच सम्मेलन मुख्य रूप से प्रशुल्क कटौती से सम्बद्ध रहें है। गैट का छठा सम्मेलन जेनेवा में 1964 में आरम्भ हुआ इस सम्मेलन के लिए विशेष प्रयास अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति स्व0 केनेडी ने किया था। इस कारण यह सम्मेलन कनेडी राउण्ड के नाम से विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इस सम्मेलन में राष्टपति केनेडी ने सभी प्रकार की प्रशुल्क दरो में कटौती का सुझाव दिया था। ताकि यूरोप के देशों के साथ अमेरिका के व्यापार में वृद्धि हो सके।

इसी प्ररिप्रेक्ष्य में अमेरिका में अपने दो तिहाई आयातों पर औसतन 35 प्रतिशत शुल्क रियायतें दी। इस अधिवेशन में जो रियायतें प्रदान की गयी वे मुख्य रूप से उद्योग निर्मित वस्तुओं पर ही रही। यह अधिवेशन 1967 तक चला। गैट का सातवां अधिवेशन 1973 में टोकियों में आरम्भ हुआ। और जनेवा में 1979 में समाप्त हुआ। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य व्यापार की गैर प्रशुल्क बाधाओं को दूर करना था। टोकियो अधिवेशन में इस बात पर भी बल दिया गया है कि बहुपक्षी या वार्ताओं में विकासशील देशों की विशेष रूचि पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। गैट के विभिन्न सम्मेलनों में पारित प्राविधानों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रकिया सरल हुई है। 1948 से लेकर अब तक की अवधि में प्रशुल्कों में उल्लेखनीय कमी आयी है।

व्यापार एवं प्रशुल्क पर सामान्य समझौते की वार्ता का आठवां दौर में यूरूग्वे में पूताडेल एस्ते नामक नगर सितम्बर 1986 में आरम्भ हुआ। इस दौर की विभिन्न बैठकें मांट्रियल, जेनेवा, ब्रुसेल्स आदि में हुई। गैट

का यूरूग्वे दौर पिछले सभी चक्रों से पृथक और विशिष्ट रहा है। गैट के पूर्व दौर की वार्तायें वस्तु व्यापार से सम्बन्धित थी, और विशेष रूप से सीमा शुल्क में कटौती के प्रति सचेष्ट रही है। सेवा व्यापार, कृषि उत्पादन और वस्त्र व्यापार इसकी क्रियाविधि में सम्मिलित न थे। गैट के प्राविधान किसी देश की सीमा पर पूर्ण हो जाते थे। और देश के सीमाओं के भीतर उनकी क्रियाशीलता न थी। गैट के यूरूग्वे दौर की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें गैट के कार्यक्षेत्र में सेवा व्यापार, कृषि उत्पाद, बौद्धिक सम्पदा और वस्त्र उत्पाद भी लाया गया है, अब गैट का व्यवहार क्षे.ख सीमा और सीमा शुल्क तक सीमित न रहकर सदस्य देशों और प्रस्ताव करने वाले देशों की सीमाओं के भीतर भी कियाशील रहेगा। यूरूग्वे दौर की मुख्य विशषता यह रही है कि इससे विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की विशष रूचि न थी। इसके प्रति विकासशील देशों में विरोध के स्तर भी उभरे। परन्तु अन्ततः विकसित अर्थव्यवस्थाओ के मन्तव्य से सहमत होना पड़ा।

यूरूग्वे में 1986 में हुए "गैट सम्मेलन" ने 103 देशों ने भाग लिया और इस सम्मेलन में हुए विचार विमर्श का अन्तिम प्रारूप गैट के तत्कालीन महानिदेशक आर्थर डंकल ने सितम्बर, 1991 में तैयार किया। इसे डंकल प्रस्ताव के नाम से जाना जाता है। इस प्रस्ताव को डंकल ने टिप्पणी और विचार विमर्श हेतु जनवरी 1992 में जारी किया। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की व्यापक परिकल्पनाओं में जारी आर्थर डंकल द्वारा प्रस्तुत उक्त प्रस्ताव भारत सहित अन्य विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में चर्चा का विषय बना रहा और अभी भी चर्चा का विषय वन्य है। यूरूग्वे दौर की प्रस्ताव की एक मुख्य बात है कि इसे सम्पूर्ण रूप मेंू या तो स्वीकृत किया जाना है या अस्वीकृत करना है इसे खंडों में या आंशिक रूप से स्वीकृत नहीं किया जा सकता है। भारत इसकी प्रारम्भिक बैठक में1986 में भी सम्मिलित रहा और 15 दिसम्बर 1993 को सरकारी रूप से इसकी स्वीकृति जेनेवा में दिया। यहां युरूग्वे दौर के प्रस्ताव डंकल प्रस्ताव के प्रमुख प्राविधानों को उल्लेख किया गया है।

(1) व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा अधिकार

बौद्धिक सम्पदा से आशय किसी डिजाइन प्रौद्योगिकी वस्तु का किसी व्यक्ति या निगम द्वारा आविष्कार करना है और अधिकार से आशय आविष्कार का किसी अन्य के द्वारा प्रयोग किये जाने पर आविष्कारक से स्वीकृति लेने और आविष्कारक को प्रतिफल ले सकने की व्यवस्था है। पेटेन्ट, कापीराइट और ट्रेडमार्क के स्वीकृति की व्यवस्था इस अधिकार के व्यावहारिक पक्ष है। इस समय विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं ने अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर बौद्धिक सम्पदा अधिकार नियम बनाये हैं। विकासशील अर्थव्यवस्थायें आविष्कारकर्ता को अत्यन्त सीमित स्वत्वाधिकार प्रदान करती है। जिसके विपरीत विकसित अर्थव्यवस्थायें दीर्घकाल हेतु व्यापक अधिकार प्रदान करती है। विकसित देशों का तर्क है कि सम्यक बौद्धिक सम्पदा अधिकार न होने के कारण अन्वेषकों और शोधकर्ताओं को हानि उठानी पड़ रही है। यू0एस0ए0 का अनुमान है कि इससे उसकी 60 विलियन डालर की वार्षिक क्षति हो रही है। व्यापारिक एवं उत्पादन क्रियाओं के सन्दर्भ में डंकल

प्रस्ताव का मुख्य सम्बन्ध स्वत्वाधिकार से है। स्वत्वाधिकार से आशय किसी राष्ट्र, संस्था अथवा व्यक्ति के उस अधिकार से है जिससे वह अपनी वस्तु, पदार्थ, उत्पाद अथवा ट्रेडमार्क अथवा बौद्धिक सम्पदा के किसी भी पक्ष का स्वामी होता है। स्वत्वाधिकार के व्यवस्था के अनुसार निर्माणकर्ता की अनुमति के बिना न उसे बेचा जा सकता है, न खरीदा जा सकता है और न ही उसे परिवर्द्धित, परिवर्तित और नष्ट किया जा सकता है। भारत की स्वत्वाधिकार से सम्बद्ध व्यवस्था अपेक्षाकृत अधिक उदार है। यहां भारत की स्वत्वाधिकार के कुछ पक्षों की और फिर डंकल प्रस्ताव के साथ इसकी तुलना की गयी है।

1. भारत में किसी आविष्कार के लिये आविष्कारक को 14 वर्ष का स्वत्वाधिकार दिया गया है। इस अवधि में आविष्कार के प्रयोग और वितरण पर देश के भीतर पूर्ण स्वामित्व रहेगा परन्तु इसके देश के बाहर होने वाले उपयोग पर आविष्कारक का स्वत्वाधिकार नहीं रहता है। इसके अतिरिक्त

स्वत्वाधिकार कानून, खाद्य सामग्री एवं अन्य उपभोक्ता वस्तुओं को छोंड़कर लागू होता है।

2. भारतीय स्वत्वाधिकार कानून दवाओं, रसायनिक मिश्र धातुओं एवं खाद्य पदार्थो पर केवल 5 या 7 वर्ष के लिए लागू होता है। परन्तु इस अवधि में भी सरकार जनहित में पेटेन्ट अधिकार वापस ले सकती है।

3. दूसरे देशों से पेटेन्ट आयात के सन्दर्भ में यह व्यवस्था की गयी है कि पेटेन्ट आयात सरकारी तंत्र द्वारा किया जायेगा और पेटेन्ट आयात का उद्देश्य राजकीय एवं जनहित होगा।

4. भारतीय पेटेन्ट कानून का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें शोधकार्य अथवा अध्ययन के लिए किसी पेटेन्ट की व्यवस्था नहीं की गयी है। शोध एवं अध्ययन हेतु किसी पेटेन्ट का कोई भी उपभोग कर सकता है। इसके प्राविधान अनुसंधान और विकास कार्यो के प्रति

प्रोत्साहनात्मक है। भारतीय पेटेन्ट कानून उदार एवं सरल है। भारत में स्वत्वाधिकार की व्यवस्था भारतीय पेटेन्ट ऐक्ट, 1970 के अनुसार है। 19970 के पेटेन्ट कानून की एक मुख्य विशेषता यह है कि इसके अनुसार किसी शोध कार्य अथवा अध्ययन के लिये किसी भी पेटेन्ट का कोई भी उपयोग कर सकता है। डंकल प्रस्ताव का प्रारुप भारत के 1970 के पेटेन्ट कानून से लगभग सभी बिन्दुओं में पृथक है। इस प्रस्ताव की व्यवस्थाओं की स्वीकृति देने के पश्चात् भारत को अपने पेटेन्ट कानूनों मे भी परिवर्तन करना होगा। निम्नलिखित तत्व भारतीय पेटेन्ट कानून और डंकल प्रस्ताव में अंतर प्रदर्शित करते हैं।

1 – भारत का स्वत्वाधिकार कानून नाभकीय ऊर्जा, कृषि प्रणाली, लागान प्रणाली, जैव प्रौद्योगिकी प्रक्रिया, और उपभोक्ता वस्तुओं

को छोंड़कर लागू किया जाता है। इन क्षेत्रों में किये गये शोध परिणामों को प्रयोग पेटेन्ट कानून की सीमा में नहीं आता है। डंकल प्रस्ताव में नाभिकीय ऊर्जा, कृषि एवं बागान प्रणाली, जैव प्रौद्यागिकी तथा उपभोक्ता उत्पाद भी पेटेन्ट प्रकिया के अन्तर्गत आ जायेंगे। ऐसी स्थिति में उपभोक्ता क्षेत्र में प्राप्त शोध परिणामों के प्रयोगकी स्वतन्त्रता न रह जायेगी।

2. भारतीय पेटेन्ट कानून की व्यवस्थानुसार जिन वस्तुओं के लिए 'उत्पाद प्रक्रिया पेटेन्ट' लागू किया जाता है, उसकी अवधि केवल 7 वर्ष है और वे वस्तुयें जहां उत्पाद पेटेन्ट लागू किया जाता है, वहां पेटेन्ट अवधि 14 वर्ष निर्धारित की गयी है। डंकल प्रस्ताव की "ट्रेड रिलेटेड इन्टलेक्चुअल प्रापर्टी राइट्स" की व्यवस्थानुसार दोनों अवस्थाओं में पेटेन्ट

अधिकार 20 वर्ष का हो जायेगा। इसका स्पष्ट निहितार्थ है कि किसी खोज का 20 वर्ष वाद ही स्वतंत्र प्रयोग किया जा सकेगा।

3. भारतीय स्वत्वाधिकार कानून की व्यवस्था के अनुसार उत्पादन प्रक्रिया पेटेन्ट दवाओं और रसायनिक उत्पादों के लिए लागू किया जाता है। डंकल प्रस्ताव लागू कर दिये जाने पर इन पर भी 'उत्पाद पेटेन्ट' लागू हो जायेगा। जिससे उनको निर्धारित अवधि तक सुगमतापूर्वक बनाया न जा सके।

4. डंकल प्रस्ताव की व्यवस्था के अनुसार प्रौद्योगिकी की आयातकर्ता देश प्रौद्योगिकी आयात के प्रति अविवेचनात्मक व्यवहार न कर सकेगा। इस प्रकार भारत भी उस प्रौद्योगिकी आयात के प्रति विवेचनात्मक

व्यवहार कर सकेगा। जिसके द्वारा उत्पादित सामान के निर्यात से भुगतान संतुलन के घाटे को कम या समाप्त किया जा सके। अब तक की व्यवस्थानुसार भारत विदेशी पूंजी का इक्विटी अंश निर्धारित करता रहा है। अब बिदेशी कम्पनियों का प्रवेश अत्यन्त सुगम हो जायेगा।

(2) व्यापार सम्बन्ध विनियोग शर्तें

हाल के वर्षो में विदेशी विनियोग औद्योगिक एवं आर्थिक प्रगति का प्रमुख माध्यम बन गया है। विकसित देशों के विभिन्न निगम विकासशील देशों में प्रत्यक्ष विनियोग करते हैं। विकासशील देश विदेशी विनियोग समझौतों में विनियोगकताओं पर विनियोग हेतु कुछ शर्तें लगाते हैं इन्हें विनियोग शर्तें कहा जाता है। विनियोग शर्तो के परिप्रेक्ष्य में मेजबान देश यह अपेक्षा करते हैं कि निर्मित वस्तुओं स्थानीय कच्चे पदार्थो या स्थानीय मध्यवर्ती उत्पादों का प्रयोग हो। स्थानीय नियमों का अनुपालन हो। स्थपित

ईकाई में निर्यात सामर्थ्य हो, इकाई में आयात अवयव हो। भारत के लगभग 10 प्रतिशत विदेशी विनियोग समझौतों में इस प्रकार की शर्त है। इन शर्तों का उद्देश्य राष्ट्रीय उद्योगों को विदेशी विनियोक्ताओं की अनुचित प्रतियोगिता से बचाना, रोजगार अवसरों में अग्रगामी और पश्चगामी सहलग्नता के आधार पर वृद्धि करना और विदेशी विनिमय प्राप्त करना है। विकसित देशों का यह मन्तव्य है कि इस प्रकार की विनियोग शर्तों का परिणाम वही होता है जो संरक्षणात्मक प्रशुल्कों का होता है। इस प्रकार यह अनुचित है और इसे निरस्त किया जाना चाहिए। गैट के आठवें दौर की बैठक के प्रस्ताव की व्यापार व्यवस्था के अनुसार मेजबान देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियां बिना किसी नियंत्रण के क्रियाशील हो सकेंगी।

(3) कृषि क्षेत्र से सम्बद्ध प्राविधान

गैट के पूर्व सम्मेलनों मे औद्योगिक उत्पादों के व्यापार विस्तार हेतु प्रशुल्कों मे कमी करने के प्राविधान थे और कृषि तथा बागवानी क्षेत्र गैट प्राविधान में सम्मिलित न

थे। परन्तु गैट के यूरूग्वे दौर में कृषि उत्पादों और उससे सम्बद्ध कार्यो को भी गैट प्राविधान में लाया गया। गैट प्राविधान लागू होने के पश्चात् सदस्य देश की कृषिकों भी गैट व्यवस्था के अनुरूप व्यवस्थित किया जा सकेगा। गैट के आठवें दौर की व्यवस्था में कृषि क्षेत्र से सम्बद्ध प्राविधान में बाजार पहुंच, घरेलू सहायिका मे कमी पौध सुरक्षा प्राविधान आदि मुख्य रूप से सम्मिलित किये गये है। गैट के आठवें दौर के प्रस्ताव में कहा गया है कि कृषि क्षेत्र में उर्वरक, दवाइयां, विद्युत और सिंचाई आदि के लिये दी जाने वाली सहायिका में कमी की जानी चाहिए। यह व्यवस्था की गयी है कि कृषि क्षेत्र को दी जाने वाली सरकारी आर्थिक सहायिकाओं को 6 वर्षो की अवधि में विकसित देशों को 20 प्रतिशत और विकासशील देशों को 13.3 प्रतिशत कमी करना है। गैट के आठवें दौर में घरेलू सहायिकाओं का उल्लेख कुल सामग्रीकृत सहायिका प्राविधान के अन्तर्गत किया गया है। जिसमें कृषिकों मोदी जाने वाली समस्त सहायिकाएं सम्मिलित है। यह व्यवस्था की गयी है कि समस्त सहायिका उत्पादन लागत के 10 प्रतिशत से

अधिक नही होना चाहिए। परन्तु कुछ क्षेत्रों यथा अन्वेषण और विकास फसल रोग नियंत्रण, प्रसार सेवा और अवस्थापना सृजन के लिए अधिक सहायिका प्रदान करने की छूट है। गैट प्राविधानों में बाजार पहुंच बढ़ाने की व्यवस्था है। ताकि कृषि वस्तुओं का विभिन्न देशों के बीच आयात-निर्यात बढ़े। दूसरे, प्रत्येक देश को अपने 1986-88 के उपभोग स्तर के आधार के अनुसार 3 प्रतिशत भाग आयात करना होगा। जो क्रमशः 5 प्रतिशत तक बढ़ाया जायेगा। यह प्राविधान समस्त सदस्य देशों के लिए होगा भले ही वे खाद्यान्नों के संदर्भ में आत्मनिर्भर हों। तीसरे कृषि क्षेत्र में भी बौद्धिक सम्पदा अधिकार के प्राविधान लागू होंगे। बीज उत्पादकों को अपने बीज पर रायल्टी प्राप्त कर सकने का अधिकार होगा। प्रस्ताव में यह उल्लेख किया गया है कि कृषि आयातों पर लगायी जाने वाली मात्रात्मक सेवा को हटाया जाना चाहिये। मात्रात्मक रोक के स्थान पर प्रशुल्कों में प्रयोग की संस्तुति की गयी है। परतु टैरिफ की नीची दर रखने के लिए भी जोर दिया गया है। प्रस्ताव में यह उल्लेख किया गया है कि विकसित

देशों को 1999 तक अपने प्रशुल्क में 36 प्रतिशत तक और विकासशील देशों को 2003 तक अपने प्रशुल्क में 24 प्रतिशत तक कमी करना है। इसी प्रकार कृषि वस्तुओं के निर्यात के लिए दी जोन वाली सहायिका में भी कमी करने का प्राविधान है। निर्यात प्रतिस्पर्धा प्राविधान निर्यात योग्य कृषि उत्पादों पर निर्यात सहायिका देने का निषेध करते हैं।

(4) सेवा व्यापार में सामान्य समझौता

सेवा व्यापार से आशय किसी देश द्वारा किसी सदस्य देश की सीमा में किसी सेवा के उत्पादन, वितरण, विनिमय, और भंडार की सुविधा प्रदान करने से है। सेवाओं के अन्तर्गत वित्तीय सेवायें, दूर संचार, यातायात और प्राविधिक सहयोग आदि सम्मिलित है। वर्तमान स्थिति में विश्व व्यापार में सेवा क्षेत्र का व्यापार अत्यन्त तेजी से बढ़ रहा है। इस समय बैंक, बीमा, परिवहन, दूरसंचार आदि से सम्बन्धित व्यापार विश्व व्यापकता लगभग एक चौथाई भाग है। विश्व के विकसित देशों की निर्यात संरचना में सेवा क्षेत्र

का अंश लगातार बढ़ रहा है। सेवा क्षेत्र के विकास मे प्रौद्योगिकी और ज्ञान का प्रयोग अधिक होता है, जिसमें विकसित देश श्रेयस्कर स्थिति में है। कृषि उत्पादन और वस्त्र उद्योग की भांति सेवा क्षेत्र का व्यापार भी गैट के कार्य क्षेत्र में यूरूग्वे दौर में ही लाया गया। इसके अनुसार सेवा क्षेत्र अर्थात बैंक, बीमा, परिवहन दूर संचार आदि से सम्बन्धित कम्पनियां भी अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर दूसरे सदस्य देशों में क्रियाशील हो सकेंगी। गैट के यूरूग्वे दौर के अनुसार मेजवान देश में किसी अन्य देश से आने वाली सेवा क्षेत्र की कम्पनियों के साथ किया जाने वाला व्यवहार राष्ट्रीय कम्पनियों के साथ किये जाने वाले व्यवहार से कम प्रिय नहीं होना चाहिये। इस प्रावधान से भारत में बैंकिंग और बीमा कम्पनियों का प्रवेश बढ़ेगा। इस प्राविधान में विकसित देशों के निर्यात प्राप्तियों में अत्यन्त तीव्र वृद्धि की सम्भावना है। विकसित देशों के पास वस्तु निर्यात की तुलना में सेवा निर्यात की सम्भावनायें अधिक हैं। सेवा व्यापार में सामान्य समझौते का उद्देश्य सेवा बाजार में उदारीकरण के उच्चतर स्तर को प्राप्त करना है। यह भी

सोचा गया है कि इससे सेवा व्यापार में विकासशील देशों की सक्रियता बढ़ेगी।

भारत और विश्व व्यापार संगठन

यूरूग्वे प्रस्ताव आने के बाद इसकी सकारात्मक और नकारात्मक सम्भावनाओं पर विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में लगातार चर्चा हुई है। कई स्थानों पर इसके प्रति विरोध के स्तर आन्दोलनात्मक प्रकृति के रहे हैं। भारत में तो प्रस्ताव आने के बाद 3 वर्षो तक इस विषय पर लगातार चर्चा और विचार विमर्श होता रहा है।

डंकल प्रस्ताव के आधार पर बन डब्ल्यू0टी0ओ0 के समर्थन में यह कहा जाता है कि इससे विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की स्थिति में सुधार आयेगा। इससे विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को उच्च स्तरीय शोध परिव्ययों को प्राप्त करने और उसका प्रयोग कर सकने की सुविधा होगी। इसी तर्क पर भारत भी लाभान्वित होगा। बौद्धिक सम्पदा अधिकार की व्यवस्था के कारण प्रत्येक क्षेत्र में शोध और विकास को प्रोत्साहन प्राप्त होगा। शोधकर्ताओं को

प्रोत्साहन मिलने के कारण इसके प्रति उनकी रूचि बढ़ेगी। इससे प्रौद्योगिकीय परिवर्तन को प्रश्रय प्राप्त होगा। विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में जनसंख्या का दबाव बढ़ने के कारण प्राकृतिक संसाधनों के अति विदोहन की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। उत्पादन प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी के उच्चस्तर प्रतिमान का प्रयोग होने पर कम संसाधनों से भी उत्पादन बढ़ाया जा सकेगा। इस प्रकार यह संसाधन संरक्षण में सहायक होगा।

यूरूग्वे दौर की व्यवस्थानुसार प्रत्येक सदस्य देश की कृषि क्षेत्र के लिए दी जाने वाली सहायिका को कम करना होगा। पश्चिमी विकसित देशों में कृषि क्षेत्र को दी जाने वाली सहायिका का स्तर अत्यन्त ऊँचा और उत्पादन लागत का 40 प्रतिशत तक है। भारत ने सहायिका का वर्तमान स्तर अभी ही अपेक्षाकृत कम है। सहायिका में कमी होने से विश्व बाजार में उत्पादन लागत और कीमत में वृद्धि होगी। प्रस्ताव की व्यवस्थानुसार प्रत्येक देश को अपनी अनाज की खपत के कम से कम 3 प्रतिशत भाग

तक अन्य देशों के निर्यात के लिए खोलना होगा। इससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का क्षेत्र अधिक व्यापक हो जायेगा। भारतीय कृषकों की व्यापकता और अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में कृषि वस्तुओं की बिक्री से सहायिका घटने के कारण बढ़ी हुई कीमतों से, अधिक लाभप्रद कीमतें प्राप्त होने लगेंगीं कृषकों को अन्य देशों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के द्वारा विकसित बीजों के प्रयोग का विकल्प रहेगा। वे लाभदायकता की दशा में इसका प्रयोग करेंगे। इन बीजों को प्रयोग करने की दशा में इसका प्रयोग करेंगे। इन बीजों को प्रयोग करने की बाध्यता नहीं रहेगी। समर्थन में यह भी विचार व्यक्त किया जाता है कि यदि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा विकसित किये गये बीजों से कृषकों को लाभ होता है तो लाभ का कुछ अंश बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भी दिया जा सकता है। समर्थन में यह भी कहा जा सकता है कि यदि आर्थिक उदारीकरण का लाभ आद्योगिक विकास की गति प्रदान कर सकता है, अर्थव्यवस्था को विकासोन्मुख कर सकता है, तो उदारीकरण के माध्यम से कृषि क्षेत्र को भी लाभ प्राप्त हो सकता है। इस समय विश्व की विभिन्न

अर्थव्यव्थायें उदारीकरण नीति की ओर अग्रसर हो रही है। ऐसी दशा में भारत को भी पविर्तित परिवेश के अनुरूप अपनी कृषि एंव औद्योगिक नीति में परिवर्तन लाना चाहिए।

यह अनुमान किया गया है कि यूरूग्वे प्रस्ताव लागू होने से विश्व व्यापार में 250 बिलियन डालर की वृद्धि होगी। इसका लाभ भारत को भी प्राप्त होगा। भारत और कई अन्य विकासशील देशों की स्थिति वस्त्र उद्योग के संदर्भ में अत्यन्त श्रेयस्कर है। विकसित देशों में भारत से वस्त्र निर्यात बढ़ने की सम्भावना है। यह सम्भावना व्यक्त की जा रही है कि बौद्धिक सम्पदा अधिकार की व्यवस्था होने के कारण भारत में शोध और विकास की सम्भावना अधिक बढ़ेंगी जिससे विकास गति अधिक तीव्र और विविध होने की सम्भावना है। व्यापार क्षेत्र बढ़ने से विभिन्न देशों के मध्य व्यापार और आत्मनिर्भरता बढ़ने की सम्भावना है। इस प्रस्ताव की व्यवस्थानुसार प्रोद्योगिकी आयात सुगत हो जायेगा जो आर्थिक विकास की पूर्वापेक्षा है।

डब्ल्यू0टी0ओ0 के उपरोक्त सकारात्मक आयातों की सम्भावना के बाद भी इस प्रस्ताव के दूरगामी हानिकारक प्रभावों को ध्यान में रखकर विभिन्न वर्गों द्वारा इसका विरोध किया जा रहा है। यह तर्क दिया जाता है कि डंकल प्रस्ताव के अधिकांश प्राविधान भारतीय अर्थव्यवस्था और विशषकर कृषि क्षेत्र के लिए हानिकारक होगें। यह भी शंका व्यक्त की गयी है कि इस प्रस्ताव की क्रियाशीलता के कारण भारत विभिन्न विदेशी कम्पनियों और राष्ट्रों का मुखापेक्षी हो जायेगा। जिससे इसकी राजनीति और आर्थिक क्रियाशीलता पर कुप्रभाव होंगें। यदि डंकल प्रस्ताव के कतिपय महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विचार किया जाये तो इसके संभावित परिणामों का आंकलन किया जा सकता है। 'ज्ञान' मान विकास की कुंजी है। विकसित देशों में प्रौद्योगिकी ज्ञान के स्तर में अन्तर बना रखा है। प्रौद्योगिकी ज्ञान का आयात इस दृष्टि से लाभदायक होता है कि आयातकर्ता देश को आयातित प्रौद्योगिकी के लिये समान साधन और शक्ति नहीं, व्यय करना पड़ता है। परन्तु प्रौद्योगिकी ज्ञान के प्रसार विकसित देशों में इस प्रकार की

रोक लगी है। कि इसका सुगम आयात सम्भन नहीं है। प्रौद्योगिकी आयात कभी–कभी अत्यन्त महंगा भी सिद्ध होता है। प्रौद्योगिकी आयात में स्वेदशी अनुसंधान और विकास का ढांचा अविकसित रह जाता है। और प्रौद्योगिकी आयात के लिए जो कीमत देनी पड़ती है वह अनुसंधान और विकास की ही कीमत होती है। प्रौद्योगिकी देने वाला देश प्रौद्योगिकी देते समय कई प्रतिबन्ध लगा देता है। जो आयात कर्ता देश के हित में नहीं होता है। विकसित देश कभी–कभी पुरानी प्रौद्योगिकी हस्तांतरित कर देते हैं जो थोड़े समय मे ही अत्यन्त की स्थिति में आ जाती है। इन आधारों पर यह कहा जा सकता है कि यद्यपि प्रौद्योगिकी आयात सरल हो जायेगा, परन्तु इसका यह स्पष्ट परिव्यय होगा कि भारत में इसकी अधिक कीमत देनी होगी। और देश के भीतर विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे प्रौद्योगिकी विकास के प्रयास बाधित होगें।

इसी प्रकार प्रस्ताव का महत्वपूर्ण बिन्दु राष्ट्रीय कम्पनियों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ समान स्तर

पर व्यवहार करने से सम्बन्धित है। इस अविवेचनात्मक व्यवहार की स्थिति में विदेशी कम्पनियों का भारतीय सीमा में प्रवेश बढ़ेगा। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का उद्देश्य लाभ कमाना है। अतः वे भारत के प्राकृतिक संसाधनों का निर्ममता पूर्वक विदोहन करेंगें। जबकि भारत का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन के साथ पोषण करना भी है। भारत की समस्या प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और संवर्धन की है। आगामी पीढ़ी को प्राकृतिक सम्पदायुक्त पृथ्वी हस्तांतरित करना वर्तमान पीढ़ी का दायित्व है। प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण के प्रति बहुराष्ट्रीय निगमों की कोई रूचि न होने के कारण भारत को कोई लाभ न हो सकेगा। डंकल प्रस्ताव में बैंकिंग और बीमा क्षेत्र में भी विदेशी कम्पनियों के प्रवेश हेतु प्राविधान किया गया है। इन क्रियाओं इस व्यवस्था से विदेशी कम्पनियों की सक्रियता बढ़ जायेगी। इन कार्यों में लगी घरेलू कम्पनियों को इससे नुकसान होगा। विदेशी बैंक और बीमा कम्पनियां भारत में मुनाफा कमाकर ले जायेगी। भारतीय पूजी जिसका उत्पादन बढ़ाने के लिए पुर्न विनियोग किया जा सकता था। वह

अन्य देशों में जाने लगेगी। युरुग्वे प्रस्ताव में कृषि क्षेत्र पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभावों की विशेष चर्चा की गयी है। प्रस्ताव में उल्लेख किया गया है कि कृषि उत्पादन के लिए दी जाने वाली सहायिका में कमी की जायेगी। कृषि क्षेत्र के लिए जिन सहायिकाओं की अनुमति है, उनका आधार यद्यपि कृषकों को सुविधा प्रदान करना है, परन्तु वे उत्पादन से सम्बद्ध नहीं है। इसलिये इन्हें 'डिकपुल्ड इनकम सपोर्ट' कहा गया है। डंकल प्रस्ताव में यह भी उल्लेख किया गया है कि कृषि वस्तुओं के निर्यात में दी जाने वाली आर्थिक सहायिका में भी कमी की जानी चाहिए। कृषकों को समर्थन मूल्य और विभिन्न कृषि आगतों के माध्यम से दी जाने वाली आर्थिक सहायिका में कमी करने से कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव होगा। इसी प्रकार कृषि उत्पादों के निर्यात के सम्बन्ध में सहायिका से निर्यात प्राप्तियों में कमी आयेगी।

भारतीय कृषि प्रणाली की अत्यन्त प्रमुख विशेषता यह रही है कि यहां किसी फसल के बीजों की

बहुतायत थी। कृषक के विभिन्न खेतों में पृथक–पृथक किस्म के बीजों का स्वाद, गुणवत्ता, बीमारियों को सहन कर सकने की क्षमता, परिपक्वता अवधि और गुणधर्म पृथक–पृथक थे। हरति क्रांति के आरम्भ से ही गेहूँ, धान, बाजरा आदि बीजों की परम्परागत किस्में कम होने लगी। अधिक उपज देने वाली किस्मों की प्रधानता बढ़ती गयी, और अब तो इन फसलों के कई परम्परागत बीज चलन से बाहर हो गये हैं। कुछ मोटे अनाजों की तो समग्र प्रजाति ही खतरें में है, इनका निषेध इनकी अल्प उत्पादकता के आधार पर किया जाता है। अब जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से जिन हस्तांतरण की प्रक्रिया द्वारा इन बीजों को अत्यन्त लाभदायक और उत्पादक बनाया जा सकता है। इन बीजों को बचाये रखने के लिए आवश्यक है कि बीज व्यापार में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के निर्बाध प्रवेश को रोका जाये। अथवा भारत की जैव सम्पदा पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का अधिपत्य हो जायेगा। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां बीच एकत्र करके ले जायेंगी और उनसे सामान्य परिवर्तन कर अत्यन्त ऊँची कीमतों पर बौद्धिक सम्पदा अधिकार कानून की

आवश्यकतानुसार बेंचेंगी। डंकल प्रस्ताव में यह प्राविधान है कि आयातित बीजों का प्रयोग केवल उपभोग हेतु फसल उत्पादन के लिए किय जा सकेगा। अर्थात इन बीजों से प्राप्त उत्पादन को बीज के रूप में पुनः प्रयोग न किया जा सकेगा। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक वर्ष बीज खरीदना पड़ेगा। इसके पुनः प्रयोग हेतु यदि आरोप लगाया गया तो प्रयोग कर्ता देश को सिद्ध करना पड़ेगा कि वह दोष रहित है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा प्रसारित बीजों की क्रियाशीलता के कारण भारतीय कृषि वैज्ञनिकों के शोध प्रयास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

आगामी अवधि में समग्र आर्थिक विकास में जैवकीय विज्ञान की प्रमुख भूमिका होगी, यह अनुमान किया गया है कि 70 प्रतिशत विश्व अर्थव्यवस्था जैव सम्पदा पर आधारित होगी, परन्तु विकसित देशों की तुलना में विकासशील देश जैव सम्पदा की दृष्टि से अधिक धनी देश है। वस्तुतः विकसित देश 'बीज गरीब' और विकासशील देश 'बीज धनी' है। विकासशील देशों में जैव सम्पदा की

बहुलता है। डंकल प्रस्ताव में जैव प्रजातियों के बीजों के पेटेन्ट कानून के अन्तर्गत लाने का प्राविधान है। इस व्यवस्था के आधार पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियां भारतीय कृषकों और कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित किये गये बीजों, जिनके लिए भारत अत्यन्त धनी है, में कुछ परिवर्तन करके उन्हें पेटेन्ट कानून की सीमा में कर लेगी। इन्हीं कुछ परिवर्तन करके उन्हें पेटेन्ट कानून की सीमा में कर लेगी। इन्हीं मूल बीजों के किंचित परिवर्तित स्वरूप का जब भारतीय कृषक प्रयोग करेंगे तो उन्हें सभी कीमतें होंगी, कृषकों ने पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी सोंच और मेहनत से बीजों का संरक्षण और सम्वर्द्धन किया है। किसी फसल के हजारों किस्म के बीजों को कृषि प्रणाली में बनायें रखना, उनको नवीन आयाम देते रहना, भारतीय कृषक के कौशल और बुद्धि का परिणाम है। भारतीय कृषि प्रणाली में अनेकों बीजों को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों यहां से एकत्र किये बिना किसी कीमत और दबाव के और वही बहुराष्ट्रीय कम्पनियां उनमें थोड़ा परिवर्तन करके उसके लिये हमसे भारी कीमत वसूल करना चाहती है। डंकल प्रस्ताव का स्वाभाविक परिणाम यह हो गा

कि भारत की जैव सम्पदा और बीजों परे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आधिपत्य स्थापित हो जाये।

आर्थर डंकल द्वारा तैयार किये गये स्वत्वाधिकार की संकल्पना स्वीकार कर लेने पर भारत स्वत्वाधिकार के सम्बन्ध में 1970 के पूर्व की स्थिति में आ जायेगा। 1970 के पूर्व विभिन्न बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपने उत्पाद एकाधिकार को बनाये रखने में स्वतंत्र थी। इनको उत्पाद पेटेन्ट अधिकार था। इस कारण भारतीय कम्पनियां इन उत्पादों में प्रवेश नहीं कर समती थी। 1970 के पेटेन्ट कानून के पूर्व नवीन दवाइयां विदेशी बाजारों में आने के 10-15 वर्ष बाद ही भारत में चलन मे आती थी। आयातित दवाइयां अत्यन्त ऊँची कीमत पर प्राप्त होती थी। 1970 के पेटेन्ट कानून के बाद अब भारतीय कम्पनियां किसी दवा की खोज के समय में 3 से 5 वर्ष बीतने के बाद अपनी प्रक्रिया द्वारा उससे दवाइयां उत्पन्न करके बाजार में ला सकती है। इसके ही परिणामस्वरूप आज विभिन्न दवाइयों की कीमत भारत में विश्व स्तर से भी कम है।

'ट्रिप्स' प्राविधान लागू होने के बाद पुनः विभिन्न उत्पादों की कीमतें पूर्ववत ऊँची हो जायेगी। कई गम्भीर बीमारियों के लिए दवाइयां निर्मित करने के लिए रायल्टी भुगतान करना होगा। यह अनुमान किया गया हैकि लगभग 10 प्रतिशत आवश्यक दवाइयों की कीमतों में वृद्धि की सम्भावना है। भारत में स्वत्वाधिकार से सम्बन्धित पेटेन्ट उत्पाद प्रक्रिया पेटेन्ट पर मुख्य रूप से आधारित है। अर्थात उत्पाद प्रक्रिया में परिवर्तन करके उससे मिलती जुलती वस्तु बनायी जा सकती है। डंकल प्रस्ताव की क्रिया विधि स्वीकृति कर लिये जाने पर पेटेन्ट कानून "उत्पाद आधारित" हो जायेगा। इस स्थिति में विभिन्न फसलों के संकर बीज तैयार करने वाले भारतीय वैज्ञानिकों को अपने अन्वेषण कार्य और नवीन किस्म के बीत तैयार करने में कठिनाई होगी। इसके परिणामस्वरूप जैच प्रौद्योगिकी के विकास और अन्वेषण में की कठिनाई होगी। जबकि आगामी कृषि विकास समर्थ बीजों के उत्पादन और जैव प्रौद्योगिकी के विकास पर ही निर्भर है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा विकसित किये गये बीजों में "उत्पाद पेटेन्ट'8 होने के

विकास पर ही निर्भर है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा विकसित किये गये बीजों में "उत्पाद पेटेन्ट" होने के कारण उसके अनुरूप बीज बनाने में वैधानिक कठिनाई होगी। आन्तरिक शोध प्रयासों को क्षति पहुचाने की दृष्टि से किसी बीज पर शोध कार्य पूरा होने के पूर्व ही आन समरूप उत्पाद भेज देती है जिससे आन्तरिक शोध प्रयास व्यर्थ हो जाता है।

डब्ल्यू0टी0ओ0 के स्थापना के समय इसके समर्थकों द्वारा इससे बहुविध लाभों का उल्लेख करते रहे हैं। यह सोचा गया था कि इससे विश्व व्यापार में लगभग 225 बिलियन डालर की वृद्धि होगी परन्तु विश्व व्यापार की वास्तविक बृद्धि अत्यन्त कम है। भारत के आयात अधिक रहे हैं। इसलिए व्यापार घाटा बना है। डब्ल्यू0टी0ओ0 की **'टिप्स'** की व्यवस्था का आधार लेकर कई विदेशी कम्पनियां भारतीय संपदा यथा अदरक, नीम, बासमती चावल आदि। पर अपना पेटेन्ट अधिकार ले रही है। इस प्रक्रिया मे भारत की सम्पन्न जैविक सम्पदा पर

विदेशी पेटेन्ट का खतरा बढ़ गया हे। कई विकसित देश भारतीय उत्पादों के निर्यात पर 'एन्टी डम्पिंग' प्राविधान लगाकर निर्यातों को रोक देते हैं।

भारत की वर्तमान आर्थिक नीति उदारीकरण की ओर अग्रसर हो रही हैं। डंकल प्रस्ताव भी उदारीकरण की नीति का पोषक रहा है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि यदि खुलेपन की नीति से विभिन्न औद्योगिक और सेवा क्षेत्र की क्रियाओं को लाभी होगा तो इससे कृषि और सम्बन्धित क्रियाओं को भी लाभ होगा। परन्तु कुछ व्यवसाय और प्राकृतिक सम्पदा किसी अर्थव्यवस्था की बहुमूल्य विधि होती है। औद्योगिकी क्रियाकलापों और उत्पादनों की उपयोगिता समान रुप से सर्वकालिक नहीं होती। इसके सापेक्षिक महत्व में परिवर्तन होते रहे हैं परन्तु कृषि एवं सम्बन्धित क्रियायें एक सर्वकालिक है। और आन्तरिक

व्यवसाय है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का कृषि में हस्तक्षेप, कृषि की क्रिया शीलता में बाधक होगा देश में पर्याप्त वैज्ञानिक क्षमता उपलब्ध है और भारतीय कृषकों ने नीवन प्रौद्योगिकी का बड़े पैमाने पर प्रयोग कर यह स्पष्ट कर दिया है कि वे नव प्रवर्तनों को प्रयोग में पीछे नहीं रहेंगे। अतः विभिन्न कृषि आगामों की पूर्ति के लिए हमें शोधकर्ताओं और संस्थाओं को सुविधा और वरीयता देनी चाहिये ताकि कम से कम कृषि व्यवसाय के लिए देश पर मुख्य पेक्षी न बने। डंकल प्रस्ताव के आधार पर बने डब्ल्यू0टी0ओ0 लागू होने के बाद अभी भी कई क्षेत्रों में कठिनाई अनुभव होने लगी है। अतः देश अपने लिए विशेष कानून पारित और लागू किये जाने की आंवश्यकता अनुभव की जाने लगी है।

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – जगदीश नारायण मिश्र, संस्करण – 2000
प्रकाशक – किताब महल, 22–ए, सरोजिनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद।
मुद्रक – सेन्चुरी प्रिंटर्स, 22, सरोजिनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद। पृ0–978

भारत द्वारा पेटेन्ट नियमों में परिवर्तन

17 दिसम्बरत्र, 1998 को सरकार ने पेटेंट (संशोधन) विधेयक 1998 को संसद में प्रस्तुत किया, इस विधेयक के तहत 'टिप्स' समझौते `के अनुच्छेद 70.8 व 70.9 के प्रावधानों के तहत भारत के पेटेंट अधिनियम 1970 में संशोधन करने के प्रावधान है :

संशोधन विधेयक के प्रमुख प्रावधन निम्नलिखित है –

1. कृषि रसायन व दवा कम्पनियों को विशेष मार्केटिंग अधिकार दिये जायेंगे।

2. फार्मास्युटिकल व एग्रो केमिकल के क्षेत्र में पेटेंट आवेदनों के लिए मेलबाक्स की सुविधा प्रदान की जायेगी।

3. भारत में इ0एम0आर0 हासिल करने की इच्छुक कम्पनियों को उत्पाद पेटेंट के लिए भी आवेदन करना होगा। इसके अलावा उसे विश्व व्यापार

संगठन के किसी सदस्य देश में पेटेंट और मार्केटिंग अधिकार प्राप्त होने चाहिए।

4. ई0एम0आर0 पांच साल की अवधि के लिए प्रदान किया जायेगा।

5. विधेयक में सरकार को अधिकार दिया गया है कि सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए ई0एम0आर0 के तहत आने वाले किसी भी उत्पाद के गैर व्यवसायिक इस्तेमाल का अधिकार ई0एम0आर0 धारक के अलावा किसी अन्य को भी दे सकती है।

6. सरकार को विशेष परिस्थितियों में ई0एम0आर0 के तहत आने वाले किसी उत्पाद का मूल्य निर्धारित करने का अधिकार भी होगा।

7. देश की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए सरकार किसी भी पेटेंट को रखकर सकती है। इस

सम्बन्ध में वह कोई विवरण देने के लिए बाध्य नहीं होगी।

उल्लेखनीय है कि संशाधित पेटेंट प्रणाली लागू करने के लिए विश्व व्यापार संगठ्न ने 19 अप्रैल 1999 की आय सीमा निर्धारित की थी। विश्व व्यापार संगठ्न के प्रावधानों के अनुपालन के लिए इस समय सीमा के भीतर ही इस विधेयक को पारित करना आवश्यक था।

सन् 2004 तक उत्पाद पेटेन्ट प्रणाली हेतु सहमति

विश्व व्यापार संगठ्न के बौद्धिक सम्पदा अधिकार मानकों को पूरा करने के उद्देश्य से भारत ने सन 2004 तक उत्पाद पेटेंट व्यवस्था अपनाने की सहमति दी है। इसी संदर्भ में पेटेन्ट नियमों आदि शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए एक इंस्टीट्यूट आफ इन्टेलेक्चुअल प्रापर्टी स्टडीज की स्थापना मुम्बई में की गयी है, जहां पेटेंट नियमों व प्रक्रिया पर एक वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम इस वर्ष से प्रारम्भ किया जा रहा है।

डब्ल्यू0टी0ओ0 के मंत्रि स्तरीय सम्मेलन

सम्मेलन	वर्ष	स्थान
पहला	9-13 दिसम्बर, 1996	सिंगापुर
दूसरा	18-20 मई, 1998	जेनेवा
तीसरा	30 नवम्बर-03 दिसम्बर,1999	सिस्टल
चौथा	9-14 नवम्बर, 2001	दोहा (कतर)
पाँचवां	2003	मैक्सिको (प्रस्तावित)

भारत सरकार द्वारा सभी आयातों पर परिमाणात्मक प्रतिबन्धों की समाप्ति

भारत सरकार ने देश के आयातों पर से सभी वस्तुओं से परिमाणात्मक प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया गया, विश्व व्यापार संगठन के एक फैसले के परिप्रेक्ष्य में भारत ने अमरीका के साथ इस आशय के एक समझौते पर 29 दिसम्बर, 1999 को हस्ताक्षर किये थे।

उल्लेखनीय है कि विश्व व्यापार संगठन की शर्तो को पूरा करने के लिए हाल के वर्षो में भारत सरकार ने लगभग सभी उत्पादों के आयात में परिमाणात्मक प्रतिबन्ध हटा दिये हैं। इनमें अधिकांशतः उपभोक्ता उत्पाद है, देश के भुगतान संतुलन की प्रतिकूल स्थिति को देखते हुए यद्यपि भारत सरकार इन प्रतिबन्धों को शीघ्र ही हटाने के पक्ष में नहीं थी। किन्तु व्यापार के भागीदार विकसित देशों के दबाव के चलते भारत ने इन सभी उत्पादों के आयात पर से अप्रैल 2002 तक परिमाणात्मक प्रतिबन्ध हटाने को सहमत हो गया था। भारत ने इस आशय का एक समझौता यूरोपीय देशों के साथ किया था, किन्तु इस समय सीमा में असंतुष्ट अमरीका इा मामले को जुलाई 1997 में विश्व

व्यापार संगठन में ले गया। विश्व व्यापार संगठन के विवाद निपटान निकाय के समक्ष भारत ने यह दलील पेश की कि देश के भुगतान संतुलन की प्रतिकूल स्थिति को देखते हुए उन सभी उत्पादों (उस समय परिमाणात्मक प्रतिबंन्धों के अधीन उत्पादों की संख्या 2714 थी) के आयात पर से प्रतिबंधों की समाप्ति के लिए 6 वर्ष का समय उचित है, भारत की दलील को अस्वीकार करते हुए विवाद निपटान निकाय ने 6 अप्रैल 1999 को अमरीका के पक्ष में फैसला सुनाया, डी0एस0वी0 के इस फैसले के विरूद्ध भारत ने विश्व व्यापार संगठन के अपीली निकाय में अपील की किन्तु अपीली निकाय ने 23 अगस्त 1999 के अपने फैसले में विवाद निपटान निकाय के फैसले को बरकरार रखा। अपीली निकाय द्वारा भारत की अपील के ठुकराये जाने के पश्चात विश्व व्यापार संगठन के विवाद निपटान निकाय ने भारत को 22 सितम्बर 1999 को यह निर्देश दिया कि वह इस मामले में अमरीका के साथ समझौता करें, अन्यथा भारत से किये जाने वाले आयातों पर दण्डात्मक प्रशुल्क लगान की उसे छूट होंगी, इसी फैसले के

परिप्रेक्ष्य में भारत ने सभी 1429 उत्पादों के आयात पर से अप्रैल 2001 तक प्रतिबन्ध हटाने के लिए अमरीका से अपनी सहमति व्यक्त की थी।

अमरीका के साथ सम्पन्न ताजा समझौते के तहत भारत को 714 उत्पादों के आयात पर से प्रतिबन्ध 1 अप्रैल 2000 तक हटाने थे जिसकी घोषणा भारत सरकार ने अपनी आयात निर्यात नीति 2000-2001 के अन्तर्गत कर दी थी। जबकि शेष 715 उत्पादों को 1 अप्रैल 2001 से मात्रात्मक आयात नियंत्रण से मुक्त कर दिया है, नियंत्रण मुक्त किये गये 715 उत्पादों में 300 उत्पादों को अति संवेदनशील बताया गया है जिनके आयात निगरानी रखने के लिए उच्च स्तरीय वार रूम का गठन सरकार ने किया है।

2.प्रतियोगिता दर्पण, उपकार प्रकाशन, 2/11ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा-282002

(5) वस्त्र और परिधान व्यापार के लिए समझौता

यूरूग्वे दौर के पूर्व वस्त्र व्यापार गैट के कार्य क्षेत्र में सम्मिलित नहीं था। उदारवादी व्यापार के प्राविधान वस्त्र व्यापार में सम्मिलित न थे। विभिन्न विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की स्थिति सूती, ऊनी, रेशमी और सेन्थेटिक धागों और वस्त्रों के उत्पादन में श्रेयस्कर है। विकसित देश संरक्षणात्मक माध्यमों का उपयोग करके घरलू वस्त्र उद्योगों के विकास का प्रयास करते रहे हैं। विकासशील देशों से वस्त्र और परिधान आयात पर कोटा निर्धारित किया जाता रहा हैं। यह व्यवस्था 1961 में अल्पकालीन व्यवस्था के रूप में और 1964 में अगले 10 वर्षो के लिए दीर्घकालीन व्यवस्था के रूप में लागू की गयी। वस्त्र और परिधान व्यापार 1994 में बहु तन्तु व्यवस्था के प्राविधान की व्यवस्था के अन्तर्गत होता है। इसके प्राविधान के अनुसार विकसित औद्योगिक देश विभिन्न विकासशील देशों से वस्त्र आयात के लिये कोटा निर्धारित करते हैं। जिसे वे औद्योगिक देशों में बेच सकते हैं। एम0एफ0ए0 का प्रयोग पहले के अल्पाकलीन और दीर्घकालीन प्राविधानों के स्थान पर लागू किया

गया जिसे गैट ने भी स्वीकृति किया है। वस्त्र व्यापार के अन्तर्गत समझौते का उद्देश्य वस्त्र व्यापार को भी गैट प्रविधानों के अन्तर्गत लाना है। गैट प्राविधानों में यह व्यवस्था की गयी है कि आगामी 10 वर्षो में वस्त्र व्यपार क्षेत्र का सम्बद्ध कोटा क्रमशः समाप्त किया जायेगा। वस्त्र और परिधान व्यापार क्षेत्र का गैट प्राविधान के साथ समन्वय चार चरणों में होगा । प्रथम चरण 1 जनवरी 1995 से, द्वितीय चरण 1जनवरी 1998 से, तृतीय चरण 1 जनवरी 2002 से और अन्तिम चरण 1 जनवरी 2005 से आरम्भ होगा। यह भी व्यवस्था की गयी है कि धागा, वस्त्र और निर्मित परिधानों से सम्बद्ध कोटा क्रमबद्ध आधार पर 2005 तक समाप्त कर दिया जायेगा।

उरूग्वे में 1986 में 'गैट' सम्मेलन के विचार विमर्श का अन्तिम प्रारूप गैट के तत्कालीन महानिदेशक आर्थर डंकल ने सितम्बर 1991 में तैयार किया और इसे सदस्य देशों को विचार विमर्श हेतु जनवरी 1992 में जारी किया गया। डंकल प्रस्ताव पर लगातार कई वर्षो तक विचार विमर्श हुआ और 15 दिसम्बर 1993 को सरकार रूप से इसे स्वीकृत किया गया।

अत्यन्त सामान्य संशोधनों के साथ डंकल प्रस्ताव को ही स्वीकृति प्रदान की गयी। डंकल प्रस्ताव की व्यवस्थानुसार 1995 में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना की गयी। विश्व व्यापार संगठन ने गैट को प्रतिस्थापित किया और गैट के स्थान पर विश्व व्यापार संगठन ने 1 जनवरी 1995 से कार्य करना आरम्भ किया। इससे वैश्विक उदारीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई। विश्व व्यापार संगठन में प्राविधान है कि प्रत्येक दो वर्ष बाद विश्व व्यापार संगठन के कार्यों के आंकलन और नीतिगत विषयों पर विचार विमर्श हेतु एक मंत्री स्तरीय सम्मेलन दिसम्बर 1996 में सिंगापुर मे हुआ। इस सम्मेलन में विचार का मुख्य बिन्दु यह था जिन कार्यक्रर्मे के लिए विश्व व्यापार संगठन स्थापित किया गया था। उनमें हुई प्रगति का आकलन किया जाये। इस सम्मेलन में व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा अधिकार, कृषि क्षेत्र से सम्बद्ध प्राविधान, वस्त्र और परिधान व्यापार, व्यापार सम्बद्ध विनियोग शर्ते आदि से सम्बद्ध विश्व व्यापार संगठन के प्राविधानों औन उनमें हुई प्रगति पर चर्चा हुई। विश्व व्यापार संगठन ने अपनी स्थापना के बाद से ही कई नवीन क्षेत्रों में प्रवेश किया गया। इस संदर्भ में विश्व व्यापार संगठन ने तीन अत्यन्त

महत्वपूर्ण समझौते किये है – सूचना तकनीकी पर समझौता बुनियादी दूर संचार पर समझौत और वित्तीय सेवायें उदारीकरण समझौते किये हैं। सूचना तकनीकी पर समझौते किये हैं – सूचना तकनीकी पर समझौता, बुनियादी दूरसंचार पर समझौता और वित्तीय सेवायें उदारीकरण समझौता। इन समझौतों को विश्व व्यापार संगठन के प्रमुख रेनाटो, रूज्जियरो ने विश्व व्यापार संगठन की अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि माना है। पिछले कुछ वर्षो में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में सर्वाधिक बहस का मुद्दा यहश रहा है कि विश्व व्यापार संगठन का विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था पर तथा उनकी आर्थिक नीतियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। विश्व व्यापार संगठन के समर्थन और विकसित देशों के प्रतिनिधि विश्व व्यापार संगठन के सम्भावित लाभों का बढ़ा चढ़ाकर लेखा जोखा प्रस्तुत कर रहे हैं और यह तर्क दे रहे हैं कि इससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का निर्वाध प्रसार से विश्व आय स्तरों मे वृद्धि होगी, उदारीकरण की गति तेज होगी।

विश्व व्यापार संगठन को भारत की वचन बद्धता

सरकार ने निम्नलिखित घोषणायें की है :

1. विश्व व्यापार संगठन का सदस्य बनने के बाद भारत सरकार ने 67 प्रतिशत शुल्क लाइनों पर अधिकतम सीमा की घोषणा की जबकि उरूग्वे दौर से पहले केवल 6 प्रशितत शुल्क लाइनों पर अधिकतम सीमा की व्यवस्था थी। गैर कृषि वस्तुओं की लिए कुछ अपवादों को छोड़कर अन्तिम वस्तुओं पर अधिकतम 40 प्रतिशत मूल्यानुसार शुल्क तथा मध्यवर्ती वस्तुओं , मशीनरी व उपकरण पर 25 प्रतिशत शुल्क निर्धारित किया गया। इन स्तरों तक प्रशुल्क दरों को एक चरणबद्ध तरीके से 1995 से 2005 के बीच लाने की वचनवद्धता है। टेक्सटाइल के क्षेत्रों में प्रशुल्क दरों में चरण वद्ध तरीके से कमी 10 वर्ष की अवधि में की जानी है। परन्तु भारत सरकार को यह अधिकार प्राप्त है कि यदि टेक्टसटाइल और क्लोदिंग समझौते के अनुरूप विश्व

में प्रगति नही होती है तो वह 1990 के पहले की दरों को फिर से लागू कर सकती है।

2. भारत सरकार ने 1997 में विश्व व्यापार संगठन को भुगतान शेष आधार पर आयातों पर परिमाणात्मक प्रतिबंध 8 अंक स्तर पर 2714 शुल्क लाइनों के लिए अधिसूचित किये गये थे। भारत के भुगतान शेष में सुधार को देखते हुए विश्व व्यापार संगठन ने भारत सरकार से इन प्रतिबंधों को चरण वद्ध तरीके से समाप्त करने को कहा है। अपने मुख्य व्यापारिक सहयोगियों से परामर्श के बाद भारत सरकार ने इस प्रक्रिया के लिए 1997 से शुरू होकर 6 वर्ष की अवधि निर्धारित की (अर्थात) 2003 तक की अवधि परन्तु भारत के प्रमुख व्यापारिक सहयोगी अमेरिका को यह मान्य नहीं था। इसलिये उसने भारत के विरूद्ध विश्व व्यापार संगठन की विवाद निपटान प्रक्रिया के तहत शिकायत दर्ज की । विवाद

निपटान पैनल ने भारत के विरूद्ध निर्णय दिया। इसका अर्थ यह है कि भारत को अब 6 वर्ष से कम अवधि में अपने सभी परिमाणात्मक प्रतिबन्धों को समाप्त करना होगा। अमेरिका सरकार के साथ समझौते के तहत अब भारत सरकार यह बात मान गयी है कि अप्रैल 2001 तक सभी परिमाणात्मक प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया जायेगा। 2000-2001 की निर्यात आयात नीति की मार्च 31, 2000 को घोषणा से पूर्व 1429 मदो पर वरिमाणात्मक प्रतिबन्ध थे। इस नीति में 714 मदों पर से परिमाणात्मक प्रतिबन्ध हटा लिये गये इस प्रकार अब केवल 715 मदों पर परिमाणात्मक प्रतिबन्ध रह गये हैं, अप्रैल 1, 2001 से पहले इन पर से भी परिमाणात्मक प्रतिबन्ध हटा लिये जायेंगे।

3. भारत सम्बन्ध बौद्धिक सम्पदा अधिकारों में पेटेंट व कापीराइट संरक्षण की व्यवस्था है। इस संदर्भ में

अमेरिका और यूरोपीय संघ के देशों ने विश्व व्यापार संगठन के विवाद निपटान पैनल में भारत के विरूद्ध शिकायत दर्ज की कि भारत ने अपने पेटेंट (संशोधन) ऐक्ट पेश किया जिसे मार्च 1999 में संसद की स्वीकृति मिली। इस संशोधन के अधीन भारत सरकार ने 2005 में वस्तु पेटेंट को अपनाये जाने तक अनन्य विपणन अधिकार प्रदान करने की व्यवस्था की है। जहां तक कापी राइट तथा सम्बद्ध अधिकारों का प्रश्न हैं भारत का 1957 में अपनाया गया (1994 में संशोधित कापीराइट ऐक्ट भारत के हितों की सुरक्षा करता है तथा टिप्स) की आवश्यकताओं को भी पूरा करना है। ट्रेडमार्क के क्षेत्र में हमारा अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुरूप है। दिसम्बर 1999 में पारित विधेयक के द्वारा अब सेवा मार्क प्रदान करने की भी व्यवस्था की गई है।

4. जहां तक व्यापार सम्बद्ध निवेश उपायों का सम्बन्ध है। विकासशील देशों को दिसम्बर 31, 1999 तक की 5 वर्ष की संक्रमण अवधि दी गयी। जिसमें वे इस मुद्दे पर किये गये समझौते को अतिक्रमण कर सकते है। भारत सरकार ने 2 टिम्स की अधिसूचना दी है। नवम्बर 1999 में सियेटल मंत्रिस्तरीय सम्मेलन में विकासशील देशों द्वारा संक्रमण अवधि को और बढ़ाने के अनुरोध पर विचार किया जाना था। परंतु इस सम्मेलन के असफल होने के कारण स्थिति अभी अस्पष्ट व अनिश्चित है।

5. सेवाओं के व्यापार सम्न्धी सामान्य समझौते के अधीन भारत सरकार ने 33 गतिविधियों के सम्बन्ध में अपनी वचनवद्धता प्रदान की है। इन गतिविधियों में विदेशी सेवा संभरकों को हिस्सा लेने की छूट होगी। भारत सरकार के अनुसार इन गतिविधियों का चुनाव राष्ट्रीय हितों के अनुरूप

किया गया है। अर्थात इस आधार पर विदेशी सेवा संभरकों द्वारा इन गतिविधियों में हिस्सा लेने का पूंजी अन्तर्प्रवाहों पर प्रौद्योगिकी पर तथा रोजगार इत्यादि पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

भारत पर प्रभाव

विश्व बैंक आर्थिक सहयोग और विकास संगठन तथा गैट के अनुसार उरूग्वे दौर में किये गये समझौतों के परिणाम स्वरूप विश्व आय में प्रतिवर्ष 213 से 274 बिलियन डालर की वृद्धि होने की संभावना है। गैट का अनुमान है कि इन समझौते परिणामस्वरूप 2005 तक वस्तुओं के विदेश व्यापार में 745 बिलियन डालर की वृद्धि होगी जिसमें 60 प्रतिशत की सर्वाधिक वृद्धि कपडे के क्षेत्र में 20 प्रतिशत की वृद्धि कृषि वन सामग्री तथा मछली उत्पादन में तथा19 प्रतिशत परिष्कृत खाद्य सामग्री में होने की सम्भावना है। भारत सरकार का तर्क है कि क्योंकि भारत को तीन वस्तु समूहों में तुलनात्मक लाभ प्राप्त है विश्व व्यापार में प्रसार का भारत की निर्यात आय पर अनुकूल प्रभाव पडेगा

और उसमें वृद्धि होगी। यह मान्यता लेने पर कि विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा 0.5 प्रतिशत से बढ़कर 1 प्रतिशत बढ़ जाता है। तथा हम व्यापार प्रसार से पैदा होने वाली सम्भावनाओं का लाभ उठा पाने में सफल हो जाते है। भारत को प्रतिवर्ष 2.70 विलियन डालर की अतिरिक्त निर्यात आय प्राप्त हो सकती है। कुछ अन्य अनुमान 3.50 से 7.0 बिलियन डालर की अतिरिक्त निर्यात आय की बात करते हैं –

1. मुचकुंद दुबे केअनुसार, ये सारे अनुमान गलत हैं। पहली बात हो यह है कि गैट द्वारा विदेशी व्यापार की वृद्धि में जो अनुमान लगाया गया है वह अवास्तविक है और उसे प्राप्त नही किया जा सकेगा। दूसरी बात यह है कि भारत का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हिस्सा अभी हाल के वर्षो तक कम होता रहा है। यदि यह भी मान लिया जाय कि उसमें आने वाले वर्षो में वृद्धि होगी तथापि यह कहना है कि वह 0.5 प्रतिशत से बढ़कर 1 प्रतिशत हो जायेगा अतिशयोक्ति है। तीसरी बात यह है कि विश्व व्यापार में वृद्धि केवल व्यापार उदारीकरण पर ही निर्भर नहीं करती परन्तु कई अन्य बातों पर

भी निर्भर करती है जैसे कि वस्तुओं की गुणवत्ता, निर्यात उत्पादन के लिये उचित आधारित संरचना की उपलब्धि निर्यात उत्पादों की आपूर्ति, औद्योगिकी का स्तर इत्यादि।

2. विश्व व्यापार संगठन के विशेषज्ञों का मानना है कि 2005 तक वह फाईबर समझौते के समाप्त होने से विकासशील देशों को बहुत लाभ मिलेगा। क्योकिभारत कपड़ो व वस्त्रों का काफी निर्यात करता है इसलिये एम0एफ0ए0. के खत्म होने पर उसे विकसित देशों का एक बहुत बडा बाजार मिल जायेगा। इस विकासित देशों की चाल है कि क्योंकि इसमें एक ओर कुछ वर्षा तक विकासशील देशों के कपड़ा व वस्त्र निर्यातों को वे टालने में सफल हो गये तथा दूसरी ओर उन्हें इतना समय मिल गया कि वे अपने वस्त्र उद्योगों को और अधिक मजबूत बना सकें।

जहां तक भारत का प्रश्न है इस संदर्भ में इस बात पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि जब कोटा खत्म किये जायेंगे तो वे केवल भारत के लिये नहीं बल्कि सभी देशों के लिये खत्म किये जायेंगें। इसलिये अन्तर्राष्ट्रीय बाजार

में भारत के वस्त्र उद्योग को चीन, वियतनाम, पाकिस्तान, मलेशिया इत्यादि देशोके वस्त्र उद्योग से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ेगी।

3. भारत के दृष्टिकोण से एक अत्यन्त चिंता का विषय व्यापार संबद्ध बौद्धिक संपदा अधिकारों का क्षेत्र है। उरुग्वे दौर में विकसित देशो ने इन अधिकारों के संरक्षण के लिये कई शर्तो को विकासशील देशो पर थोपा है। इसका उद्देश्य विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों को लाभ पहुंचाना है। भारत के 1970 के पेटेंट ऐक्ट के अधीन औषधियों पर केवल पेटेंट लेने की जरूरत होती थी अर्थात् किसी भी भारतीय कंपनी के लिये इतना काफी था कि वह कोई बनाने की अपनी प्रक्रिया या रीति विकसित करें और फिर उस पर पेटेंट ले ले। यह जरूरी नहीं था कि वह औषधि की स्वयं खोज करे। परन्तु अब उत्पाद पेटेन्ट लागू होने पर औषधियां का उत्पादन वही कंपनी कर पायेगी जिन्हें इनका उत्पाद पेटेंट प्राप्त है।

इससे से भी अधिक चिन्ता की स्थिति कृषि क्षेत्र में हो सकती है। भारत में बीज का उत्पादन और पौधों के प्रजनन संबन्धी अनुसंधान सरकारी एजेन्सियों द्वारा किये जाते हैं। इन अनुसंधानों द्वारा जनित बीजों का वितरण केन्द्र व राज्य के बीज निगमों द्वारा किया जाता है। इसका कारण है कि भारत एक गरीब देश है इसलिय यह सरकार की जिम्मेदारी बनती है कि वह सस्ती कीमतों पर किसानों को अच्छी किस्म के बीजों की उपलब्धि सुनिश्चित करें सरकार उद्देश्य लाभ कमाना नहीं बल्कि एक ओर ग्रामीण जनता को आय के उचित साधन उपलब्ध कराना है। जैसा कि सुमन सहाय ने कहा है कि ''दुर्भाग्यवश अनुसंधान के लिये जितनी आवश्यकता बौद्धिक क्षमता की होती है उतनी ही आवश्यकता धन की भी होती है। ज्यादा धन का अर्थ है पौधों के प्रजनन व बीज अनुसंधान पर ज्यादा साधनों का निवेश और इसका अर्थ है बाजार में जल्दी व तेज गति से नई किस्मों की आपूर्ति'' इन परिस्थतियों में स्वाभाविक है कि नई पौध प्रजातियों व बीजों पर बहुराष्ट्रीय निगमों को पेटेंट प्राप्त हो जायेंगे और भारत मे बीज उत्पादन पर उनको प्रभुत्व स्थापित हो जायेगा। इससे भारत की पूरी

खाद्य सुरक्षा प्रणाली के लिये खतरा पैदा हो सकता है। मुचकुंद दुवे का तर्क सही है कि हालांकि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में विकसित देश खुली व मुक्त व्यापार व्यवस्था की दुहाई देते रहते है परन्तु वे खुद संरक्षणात्मक नीतियां अपनाते हैं। बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के संरक्षण के प्रयास अपने आप में मुक्त व्यपार में बाधा है और प्रतिस्पर्धा व उदारीकरण की भावना के विपरीत है अगर वे संरक्षणात्मक नीतियों का हिस्सा नहीं तो और क्या है?

4. जहां तक व्यापार संबद्ध निवेश उपायों का संबद्ध है, वे भी विकसित देशों के हितों के ध्यान में रखकर बनाये गये हैं विकासशील देशों के दृष्टिकोण में टिप्स को संतुलित बनाने का तरीका यह होना चाहिए था कि विदेशी निवदेश को प्रतिबद्धात्मक व्यवसायिक व्यवहार पर अंकुश लगाने के लिये कुछ कदम उठाये जाते हैं परन्तु इन महत्व पूर्ण मुद्दे पर टिम्स समझौता पूरी तरह खामोश है। उसे केवल व्यापार संबद्ध निवेश उपायों के उन्मूलन के लिये सीमित कर विकासशील देशों को केवल भुगतान शेष में असंतुलन होने की स्थिति में

दी गयी है परन्तु जैसे ही संतुलन फिर प्राप्त हो जाता है वैसे ही उल्लंघन करने वाले उपायों को वापिस लेना होगा। चाहे देश के अन्य महत्वपूर्ण समष्टिचरों व अन्य आर्थिक आधारों पर उनकी आवश्यकता महसूस की जा रही है।

5. विश्व व्यापार संगठन के समझौते के अधीन सेवा क्षेत्र को भी खोलने की व्यवस्था की गयी है। सेवा क्षेत्र में बहुत सी आर्थिक गतिविधियां आ जाती हैं। जैसे बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार इत्यादि। इन सभी क्षेत्रों को खोलने पर विकसित देशों को विकासशील देशों की तुलना में कहीं ज्यादा लाभ प्राप्त होंगें। इसके अलावा जैसे-जैसे विदेशी निवेशको का विकासशील देशों के सेवा क्षेत्र में हस्तक्षेप बढ़ता जायेगा। उनकी आय भी बढती जायेगी। और विकासशील देशों को लाभ ब्याज, रायल्टी इत्यादि के रूप में विदेशी विनिमय का काफी भुगतान करना पड़ेगा जिसकी विदेशी मुद्रा संकट की स्थिति आ सकती है। इस वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि आगे आने वाले समय में विश्व व्यापार संगठन के तत्वाधान में विकसित देशों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त होगें। एक

अन्य बात जिसकी ओर ध्यान दिलाना आवश्यक यह है कि बहुत सारे मुद्दे जिन पर निर्णय पहले सरकारों द्वारा लिये जाते थे अब नयी अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के तहत उन पर निर्णय विश्व व्यापार संगठन द्वारा लिये जायेगे चाहे व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा का प्रश्न हो या व्यापार सम्बद्ध निवेश उपायों का प्रश्न ? या सेवा क्षेत्रमें विभिन्न उपक्षेत्रों का प्रश्न हो या कृषि क्षेत्र को प्रश्न हों, या सार्वजनिक विततरण प्रणाली का प्रश्न हो या और भी कोई अन्य आर्थिक गतिविधि हो, अब विश्व व्यापार संगठन का प्रभाव सब नीतियों पर दिखाई देगा। जैसा कि एस0पी0 शुक्ल ने कहा है विश्व व्यापार संगठन के हस्तक्षेप के कारण अब स्वतंत्र राष्ट्रो की प्रभुसत्ता खतरे में पड़ जायेगी। इतना ही नहीं विकसित देशों का अब प्रयास यह है कि बहुत से सामाजिक मुद्दे भी विश्व व्यापार संगठन के कार्य के क्षेत्र में शामिल किये जायें जैसे श्रम मानदण्ड, बालश्रम, पर्यावरण की सुरक्षा इत्यादि।

विश्व व्यापार संगठन अपने अस्तित्व के पांच वर्ष पूरे कर चुका है इन पांच वर्षो के अनुभव से पता चलता है

कि हलांकि सभी देशो को समान अधिकार प्राप्त है। तथा विकसित देशो का बोलबाला है वस्तुतः 'समानता' की ब ढ्कोसला है सभी विवादों का निदान मुक्त व्यापार के कि आदर्श सिद्धान्तों को आधार पर नहीं होता अपितु इस बात होता है कि ताकतवर कौन है तथा किसकी सौदाशक्ति सब ज्यादा है स्पष्ट है कि विवादों में अन्तिम जीत विकसित दे को ही होती है सारे मूल समझौते और सभी संशोध विकसित देशों के पक्ष में किये गये हैं। विश्व व्यापार संगठ विवाद निपटान प्रक्रिया केवल दो बराबर शक्तिशाली राष्ट्रो बीच विवादों का निदान करने के ही उपयुक्त है। स्पष्ट किअधिकतर विकासशील देश विकसित देशों के खिलाफ ब की कार्यवाही नही कर पायेगा। और चुप रहने में ही भल समझेंगे।" यही कारण है कि विश्व व्यापार संगठन के पि पांच वर्षो के इतिहास में विकसित देश और विशेष तौर अमेरिका विकासशील देशों पर पूरी तरह हावी रहे हैं। हैर की बात यह कि विश्व व्यापार संगठन के विवाद निपट संस्था ने अभी हाल में अमेरिका के ट्रेड ऐक्ट (1974 के ऐक्ट) के अधीन अमेरिका सहयोगियो पर धारा 301

310 के अन्तर्गत कार्यवाही कराने की अनुमति दी है यदि अमेरिका यह समझता है कि यह सहयोगी उसके हितों के विरूद्ध काम कर रहे हैं। यह निर्णय विश्व व्यापार संगठन ने अमेरिका और यूरोपीय संघ के बीच उठे एक विवाद के संदर्भ में दिया। यूरोपीय संघ की तरफ से 11 महत्वपूर्ण देश भारत, जापान, कनाडा कोरिया इत्यादि भी इस विवाद में शामिल हुये थे। अमेरिका के पक्ष में यह निर्णय विश्व व्यापार संगठन के बहुपक्षीय चरित्र पर एक कुठाराघात है।

न्यूक्लियस साफ्टवेयर एक्सपोर्ट लिमिटेड को मध्य पूर्व देश से 5 लाख अमेरिकी डालर का निर्यात आर्डर मिला है। इस आर्डर के तहत कम्पनी को अरब नेशनल बैंक में फिलेन सॉल्यूशन लागू करना है। इससे पहले कम्पनी ने बैकार्ड फिलीपीन्स से 147 लाख रूपये का आर्डर मिलने की घोषणा की थीं इसके तहत कम्पनी को फिलीपीन्स में बैठक की शाखाओं के लिए एडवांस सल्यूशन विकसित करना है।

अमर उजाला , 3 दिसम्बर, 2002

1995 में विश्व व्यापार संगठन में शामिल होने के बाद भारत द्वारा विश्वीकरण की नीतियों का अनुमान करने के परिणामस्वरूप भारत के निर्यात में 1994-95 में 4.1 अरब डालर की वृद्धि हुई और 1995-96 में यह वृद्धि 5 अरब डालर की वृद्धि हुई और हमारे निर्यात 31.8 अरब डालर पर पहुंच गए जब ये गत वर्ष 26.3 अरब डालर थे। परन्तु 1996-97 के दौरान भारतीय निर्यात में केवल 4.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई और वे 33.5 अरब डालर तक पहुंच गए। 1997-98 में निर्यात में 1.5 अरब डालर की वृद्धि हुई किन्तु 1998-99 में इनमें 1.35 अरब डालर में गिरावट आयी।

परन्तु आर्थिक समीक्षा (1994-95) में यह बात साफ तौर पर की गयी है कि जहां विकसित देश विश्व व्यापार संगठन जैसे राज्योपरि संगठन दे दवावाधीन विकासशील देशों को अपने व्यापार-अवरोधक कम करने और वस्तुओं के बेरोक टोक प्रवाह के लिए मजबूर करते हैं वहां वे अपने हितों की रक्षा के लिए संरक्षणात्मक नीतियां चलाने के लिए व्यापार

अवरोधक खड़े करते हैं। आर्थिक समीक्षा (1994-95) में इसी कारण स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है : "नब्बे के दशक में औद्योगिक देशों में वेरोजगारी चरम सीमा पर है। इस कारण न केवल इन्हीं देशों में समस्यायें उत्पन्न हुई है, बल्कि इसके परिणाम स्वरूप अन्य देशों में संरक्षणवाद का शोर भयंकर बन सकता है और इससे बहुपक्षीय व्यापार को खतरा पैदा हो सकता है। चाहे बहुत से विकासशील देशों ने आर्थिक सुधारों के अंग के रूप में अपने व्यापार को महत्वपूर्ण रूप में उदार बना दिया है। विकसित देशों ने अवरोध खडे किये और विकासशील देशों के लाभ की मदों को बाजार प्राप्त करने में खतरा पैदा हो गया है। इस प्रकार की परिस्थिति का विद्यमान होना इन देशो की कथनी और करनी में अन्तर्विरोध को व्यक्त करता है। इसी कारण भारतीय लोक सभा ने पेटेन्ट संशोधन अध्यादेश (1994) को जो 31 दिसम्बर 1994 को जारी किया गया था। अपनी स्वीकृति नही दी है। इसी प्रकार व्यापार और वाणिज्य चिन्ह कानून (1958) को जो 1993 में ये लोकसभा में पेश किया गया था। अपनी स्वीकृति नहीं दी है। इसका कारण यह कि भारतीय लोकसभा के सदस्य यह

महसूस करते हैं कि विकसित देशों के इरादे सही नहीं है। और वे गैट का प्रयोग कर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के अधिकतर लाभों को स्वयं हड़प करना चाहते हैं और विकासशील देशों के लिए कुछ बचे खुचे लाभ छोड़ देना चाहते हैं।

विश्वीकरण और इसका भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

आर्थिक सुधार के पैकेज में विश्वीकरण एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। परन्तु प्रश्न उठता है कि विश्वीकरण की धारणा में किन बातो का समावेश है। अर्थशास्त्रयों के अनुसार विश्वीकरण के चार अंग हैं :

1. व्यापार अवरोधकों को कम करना ताकि वस्तुओं का विभिन्न देशों में वेरोक-टोक आदान-प्रदान हो सके।

2. ऐसी परिस्थति कायम करना जिसमें विभिन्न राज्यों में पूंजी का स्वतंत्र रूप में प्रवाह हो सके ।

3. ऐसा वातावरण कायम करना कि तकनीकी का निर्वाध प्रवाह हो सके।

4. अन्तिम परन्तु विकासशील देशों की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं ऐसा नहीं वातावरण कायम करना। जिसमें विश्व के विभिन्न देशों में श्रम का निर्वाध प्रवाह हो सके। विश्वीकरण के समर्थन विशेषकर विकसित देशों को समर्थक, विश्वीकरण की परिभाषा को पहले तीन अंगों तक ही सीमित कर देते हैं।

1. परिमाणात्मक प्रतिबन्ध

संयुक्त राज्य अमेरिका के विरूद्ध भारत आयात पर परिमाणात्मक प्रतिबन्ध लगोने का मुकदमा विश्व व्यापार संघ में हार चुका है। जबकि भारत में यूरोपीय संघ जापान, आष्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड के साथ द्विपक्षीय समझौते कर लिये थे अमेरिका ने यह पेशकश ठुकरा दी और विश्व व्यापार संगठन में मामला विवाद के रूप मे भेज दिया।श्री रामकृष्ण हेगड़े ने 1999-2000 के लिए जारी निर्यात आयात नीति में 894 मदो पर से पमिाणात्मक प्रतिबन्ध हटा दिये और इसके अतिरिक्त 414 मदों का विशेष आयात लाइसेंस प्रणाली में डाल दिया। अतः भारत को उपभोग वस्तुओं जैसे कारों, घरों

के उपयोग के लिए उपकरणों , उपभोक्ता इलैक्ट्रानिक्स के बारे में बात चीत करनी होगी। चूंकि संयुक्त राज्य अमेरिका दन पर से पूर्णतः परिमाणात्मक प्रतिबन्धों को हटाने पर लगा हुआ है।

सेवा क्षेत्र और भारत

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में सेवा क्षेत्र में जो सेवायें शामिल की जाती है वे हैं दलाली, संचार, पट्टेदार और किराये संयंत्र तकनीकी एंव व्यावसायिक सेवाएं इनके अतिरिक्त श्रम और सम्पत्ति की गतिशीलता से उत्पन्न होने वाली आय जजन सेवायें, परिवहन और यातायात शामिल है। विकसित देशों ने सेवा –व्यापार संधि के बारे में पर्याप्त ध्यान नही दिया परन्तु यह बात रेखांकित करने की जरूरत है कि विभिन्न देशों में श्रम शीलता को बढ़ावा देना पूंजीगत गतिशीलता के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले प्रवाहों का उप–परिणाम है। भारत को जो मुद्दे विश्व व्यापार संगठन की बैठकों में उठाने होने वे हैं : श्रम का कानून प्रवाह, विदेशी श्रमिकों का शोषण, उनके

रोजगार की शर्तें, श्रमिको प्रेषण, श्रमिको के परमिट और रोजगार सम्बन्धी सुविधायें।

श्री सिद्धार्थ रामगोपालन निर्देशक, सूती वस्त्र निर्यात प्रोन्नति परिषद ने इस सम्बन्ध में साफ शब्दों में कहा है : ''डम्पिंग-विरोध शुल्क का भारत से निर्यात पर नकारात्मक प्रभाव होगा और इसका भार छोटे निर्यातकों को सहन करना पड़ेगा। इसका रोजगार पर भी प्रभाव पडेगा क्योंकि टेक्सटाइल उद्योग देश के सबसे बड़े रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों में से एक हैं इन समीकरण तत्वों के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था की गति मन्द हो जायेगी और अन्ततः इससे प्रतिसार की प्रवृत्तियां प्रकट हो जायेगी। चूंकि इस क्षेत्र द्वारा कुल निर्यात का लगभग 32 प्रतिशत जुटावा जाता है संरणवादी नीतियों का टेक्सटाइल उद्योग गम्भीर प्रभाव पड़ेगा और इसके परिणामस्वरूप हमारी कृषि तथा ग्राम अर्थव्यवस्था पर भी इसका असर पड़ेगा जिससे इस क्षेत्र का गहरा सम्बन्ध है।

(5) भविष्य में विश्व व्यापार संगठन के साथ बातचीत के मुद्दे

भारत टैरिफ एवं व्यापार पर सामान्य संन्धि का संस्थापक सदस्य है और यह अब विश्व व्यापार संगठन का रूप धारण कर गया है और भारत को इस संघ की भावी बैठकों में बहुत से मुद्दो पर बात-चीत करनी है। ताकि राष्ट्रीय हितों की रक्षा की जा सके। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को उल्लेख का करना रूचिकर होगा : पूंजी प्रवाह और निर्वाध तकनीकी तकनालीजी प्रवाह वे विकासशील देशों पर विश्वीकरण की इस परिभाषा को स्वीकार करने के लिए दबाव डालते हैं और उनके द्वारा तय की गयी परिधि में विश्वीकरण विचार विमर्श करने पर बल देते हैं परन्तु विकासशील देशों के बहुत अर्थशास्त्री यह मत रखते हैं कि यह परिभाषा अपूर्ण है और यदि विश्वीकरण के समर्थकों को अन्तिम लक्ष्य समस्त संसार को एक सार्वभौमिक ग्राम के रूप में परिकल्पित करना है, तो इसके चौथे अंग अर्थात श्रम के निर्वाध प्रवाह की उपेक्षा नहीं की जा सकती। परन्तु इस सारे मसले पर चाहे वाद-विवाद

विश्व व्यापार संगठन या अन्य मंचों पर किया गया परन्तु श्रम प्रवाहों की पूर्णतया उपेक्षा की गयी, भले ही यह विश्वीकरण का अनिवार्य अंग है।

कृषि उत्पाद निर्यात पर अमेरिकी बाधाएँ

अमेरिका ने भारतीय फार्म उत्पादों की लेबलिंग के लिए नये दिशा निर्देश जारी किये हैं। इन दिशा निर्देशों का मतलब होगा, भारत से अमेरिका को मांस, फल, सब्जियों की तरह कृषि उत्पादों के निर्यात पर और ज्यादा व्यापार कर सकें।

फार्म बिल 2002 के तहत अमेरिकी सरकार ने पैकिंग लेबल पर मूल देश का नाम लिखना अनिवार्य कर दिया है। नये नियम अन्य देशों से माल खरीद पर निर्यात करने के भारत जैसे देशों के व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव डालेंगे। नये नियम के अनुसार फ्रेश व फ्राजन गोमांस, बछड़े का मांस, भेंड, सुअर का मांस, मछली व ताजे जमाये गये फल व सब्जियों के पैंकिंग लेबल पर इनके मूल देश का नाम अंकित करना होगा।

सेन्टर फार इण्टरनेशनल ट्रेड इन एग्रीकल्चरल के कार्यकारी निदेशक विजय सरदाना ने बताया कि अगर खाद्य सुरक्षा नियमों पर भारतीय उत्पाद खरे उतरते हैं तो अब इस तरह के नये नियमों को लागू करना व्यापारिक बाधायें खड़ी करने के समान है। उन्होंने कहा कि कंट्री आफ ओरिजिन दिशा निर्देश में खाद्य सुरक्षा की स्थिति में कोई सुधार नहीं किया गया है। और न ही उपभोक्तओं के लाभ के लिए कुछ किया गया है।

अमर उजाला - 15 अक्टूबर, 2002 पृ0 - 7

अ ाय छः

समस्या सुझाव एवं उपसंहार

भारत का विदेशी व्यापार (समस्या :

स्वतन्त्रता के कद प्रारम्भिक समस्यायें :-

स्वतन्त्रता के बाद भारत के विदेशी व्यापार को अनेक महत्वपूर्ण समस्याओं का सामना करना पड़ा। देश के विभाजन और अन्य की कमी ने इन समस्याओं को कई ने देश के व्यापार को अनेक नये मोड़ प्रदान किये। खाद्यान्न की कमी को पूरा करने के लिए विभिन्न राज्यों के साथ व्यापार सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बाध्य होना पड़ा। देश के विभाजन ने जूट पैदा करने वाले अनेक इलाकों को पाकिस्तान में रखा जबकि इन सम्बन्धित मिलें भारत मे रहे।

1947 के बाद भारत विदेशी व्यापार को निम्न परिस्थितियों का सामना करना पड़ा।

(1) मुद्रा प्रसारः- स्वतन्त्रता के बाद में ही भारत में वस्तुओं की कीमतें लगातार बढ़ती जा रही थी जिसके फलस्वरूप देश में आर्थिक मन्दी की स्थिति पैदा हो गयी। नवम्बर 1947 के

बाद कीमतों का सूची पत्र आश्चर्य जनक रूप से बढ़ गया। उपभोक्ता वस्तुओं की मांग की पूर्ति कठिन हो गयी। मांग बढ़ने के साथ-साथ उत्पादन की मात्रा बढ़नी चाहिए थी किन्तु उसके विपरीत वह गिर गयी देश के उत्पादन की मात्रा थोड़ी बढ़ने पर भी माल दायक नहीं था, क्योंकि इसके लिए पर्याप्त ऊँची कीमत का भुगतान करना पड़ा। ''उत्पादन लागत अधिक होने के कई कारण थे-

(1) कच्चे माल की कमी थी तथा उसकी कीमतें पर्याप्त ऊँची थीं

(2) मजदूरी के असन्तोष ने उनकी उत्पादन क्षमता को घटा दिया।

(3) सरकारी नीति अनिश्चित हाने के कारण उद्योगपतियों में पर्याप्त निराशा थी।

(4) साम्प्रदायिक दंगों ने देश-व्यापी अस्थिरता को जन्म दिया, जिसके कारण समस्या अत्यन्त जटिल बन गयी।

(5) यातायात के साधनों की कठिनाइयों एवं प्रतिबन्धित आयात नीतियों ने अभाव की स्थिति को पर्याप्त बढ़ा दिया।"[1]

मूल्य वृद्धि के कारण ने केवल आयात वरन निर्यात भी प्रभावित हुए। इसके कारण सट्टेबाजों का बाजार खूब गरम हुआ। युद्ध के बाद भारत आवश्यक कच्चे माल के पूर्तिकर्ता के रूप में लाभप्रद स्थिति में था।

2. **निर्यातों में निर्मित माल की अधिकता** : स्वतन्त्रता के बाद भारत के निर्यात व्यापार में तैयार तथा निर्मित माल अधिक आने लगा है। औद्योगिक विकास के फलस्वरूप भारत में अनेक वस्तुओं का निर्माण प्रारम्भ हो गया। दूसरी ओर देश के विभाजन के कारण कच्चा माल कम हो जाने के कारण उसकी मात्रा निर्यात में घट गयी। यद्यपि पहले की अपेक्षा भारत में निर्मित माल की अधिकता है किन्तु आज भी चाय और सूती कपड़ा एवं जूट का माल अधिक प्रमुख स्थान रखता है। इन वस्तुओं से प्राप्त होने वाली आय अत्यन्त अस्थिर

---

1. डा0 डी0एन0 गुर्टू-अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, कालेज बुक डिपो, जयपुर- 2, 1971-72,

होती है। संसार में मांग की परिस्थिति बदलने के लिए इनके निर्यात पर भारी प्रभाव पड़ेगा जिस वर्ष इन तीन वस्तुओं का निर्यात घट जाता है उसी वर्ष हमारे विदेशी व्यापार को धक्का लगता है।

3. **प्रतिकूल व्यापार सन्तुलन** : स्वतन्त्रता के बाद भारतीय आयात और निर्यातों में लोचशीलता रही। देश के विभाजन के बाद से ही व्यापार का शेष भारत के प्रतिकूल बनने लगा। इसके कारण देश के सामने विदेशी विनियम के अभाव की स्थित पैदा हुई। स्वतन्त्रता के बाद खाद्यान्न, पँजीगत माल एवं अन्य आवश्यक मालका भारी आयात करना पड़ा था। विकास कार्यो के बढ़ाने के लिए कच्चे माल तथा मशीनों का आयात करना पड़ा किन्तु प्रयास करने पर भी निर्यात आवश्यक मात्रा में नहीं बढ़ सका।

4. **खाद्यान्न का अयात** : भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व ही अनाज की पर्याप्त कमी आ गयी थी। देश के विभिन्न भागों में अकाल की सी स्थिति पैदा हो गई। युद्ध के बाद यह स्थिति

और अधिक खराब हो गयी। भारत ने स्वतन्त्रता के बाद एक बड़ी मात्रा में अनाज का अयात कया। विभाजन के बाद जब देश के औद्योगिक कच्चे माल का भण्डार पाकिस्तान में चला गया तो देश की आवश्यकताओं को अयात से पूरा किया गया। निर्यातोंकी तरह देश का आयात भी कुछ वस्तुओं तक केन्द्रित रहा जैसे–पेट्रोल, कपास, खाद्यान्न, मशीनरी का सामान आदि।

स्वतन्त्रता के बाद आयात के क्षेत्र में उदार नीतियाँ अपनाई गई। 1945 में जब नियंत्रण हटा दिया गया तो मुद्रा–प्रसार की प्रवृत्तियाँ पर्याप्त सक्रिय बन गयी। अतः यह सोचा गया कि देश की व्यापार नीत को मुद्रा संकुचन कार्यक्रम के साथ एकीकृत किया जाए। देशों में मुद्रा–प्रसार की स्थिति और उदार आयात–नीति ने मिलकर भारत के बाजार को अन्य बाजारों की अपेक्षा विदेशी विक्रेताओं के लिए अधिक आकर्षित बना दिया। इसके फलस्वरूप विदेशी वस्तुओं के आयात की मात्रा बढ़ गई।

5. **व्यापार के मार्ग** : विभाजन के बाद भी अधिकांश भारतीय व्यापार समुद्री मार्ग से ही होता है। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के बदन्रगाह भारत के विदेशी व्यापार के मुख्य केन्द्र हैं। इन पर अत्यधिक भीड़ रहने के कारण विशाखापट्नम, कोचीन और कांगला बन्दरगाहों का विकास किया गया है।

स्वतन्त्रता के बाद भी भारत के व्यापार का अधिकतर लाभ विदेशियों को ही मिलता है। आयात–निर्यात करने वाली फार्म, जहाजी कम्पनियाँ और विनियम बैंक प्रारम्भ से ही विदेशियों के प्रबन्ध में रहे हैं, किन्तु अब धीरे–धीरे इनका भारतीयकरण किया जा रहा है। यद्यपि विश्व का व्यापार पहले की अपेक्षा पर्याप्त बढ़ गया है फिर भी उसमें भारत का हिस्सा अपेक्षाकृत कम है।

6. **व्यापार की नई दिशाएँ** : भारत का विदेश व्यापार बहुत समय से ग्रेट–ब्रिटेन के साथ अधिक रहा है। पिछले कुछ वर्षो से वह अमेरिका, रूस, यूरोपीय आर्थिक समाज के देशों, पूर्वी यूरोपीय देशों, राष्ट्र मण्डल के सदस्यों तथा जापान के साथ

भी पर्याप्त बढ़ गया है।

7. **द्विपक्षीय व्यापार समझौते :** स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत ने कई देशों के साथ द्विपक्षीय व्यापार किये। समझौतों का उद्‌देश्य भारत के विदेशी व्यापार को विनियमित करना नहीं है। कठोर मुद्रा वाले क्षेत्रों से मूलभूत वस्तुओं का आयात किया जा सकेगा। देश के समस्त व्यापार घाटों को कम किया जा सकेगा, यह आशा भी आकाश–कुसुम बनी रही और समस्त समझौतों में भारत का व्यापार सन्तुलन विपरीत रहा। व्यापार के नये मोड़ भारत के विपरीत जाने लगे। विभिन्न कारणों से भारत की निर्यात क्षमता घट गयी। भारत सरकार ने कभी भी यह देखने की चेष्टा नहीं कि आयात और निर्यात के क्षेत्र में अपेक्षित लक्ष्यों को प्राप्त किया गया है या नहीं। आयातोंके साथ–साथ निर्यातों को बढ़ावा नहीं दिया गया।

विभिन्न समझौतों के परिणाम स्वरूप भारत को कुछ गैर मूल वस्तुओं को लेने के लिए मजबूर होना पड़ा। आज भारत में कच्चे माल का अयात स्वतन्त्रता से पूर्व की तुलना में बहुत अधिक किया जाता है। आज जो निर्यात किया जाता

है, उसमें कच्चे माल की मात्रा कम है। औद्योकीकरण के कारण पर्याप्त कच्चा माल देश के लिये आवश्यक बन गया है। बढ़ती हुई जनसंख्या और शहरी जनसंख्या के कारण भविष्य में इसके बढ़ने की सम्भावनायें हैं। सुधरी हुई औद्योगिक स्थिति के कारण अब निर्मित माल का निर्यात अपेक्षाकृत अधिक होने लगा है किन्तु खाद्यान्न का आयात जो स्वतन्त्रता की पूर्व बेला से ही प्रारम्भ हुआ, अभी तक देश के विदेश व्यापार के लिए समस्या बना हुआ है।

भारत में निर्यात की प्रमुख समस्याएँ :

भारत में निर्यात बढ़ाने की निम्नलिखित प्रमुख समस्यायें हैं–

1. देश में उत्पादन एवं निर्यात योग्य वस्तुओं का आभाव।
2. यातायात की असुविधाएँ।
3. निर्यात के लिए उपयुक्त संस्थाओं का आभाव।
4. देश में जनसंख्या वृद्धि के कारण अधिक उपभोग।

5. अन्तराष्ट्रीय बाजारों में भारतीय उत्पादों का अधिक मूल्य।

6. विदेशी सरकारों द्वारा लगाए गए आयात, आयात करों, अन्य विदेशी विनिमय पर प्रतिबन्ध।

7. विदेशी प्रतियोगिता।

8. वस्तुओं की खराब किस्म एवं किस्म में विविधता।

9. स्थानापन्न वस्तुओं का प्रभाव, जैसे जूट के पैकिंग के स्थान पर विदेशों में अन्य स्थानापन्न पैकिंग उत्पादों का विकास"[2]

निर्यात व्यापार की कुछ अन्य समस्यायें :

निर्यात व्यापार की कुछ मुख्य समस्याएँ हैं –

1. विदेशों में बिक्री करने वाली भारतीय संस्थाएँ:

भारतीय विदेशी व्यापार की एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या यह है कि विदेशों में बिक्री के लिए जो संस्थागत

---

2. जे0के0 जैन एवं प्रदीप जैन- क्रियात्मक प्रबन्ध, प्रतीक प्रकाशन, 12, ए0 बन्दरोड, इलाहाबाद, 1988, पृ0 - 354

रूपरचना की इस समय स्थिति है, वह अनुपयुक्त है। अधिक वस्तुओं की मांग होने के कारण यह दोष और भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है, वह अनुपयुक्त है। अधिक वस्तुओं की मांग होने के कारण यह दोष और भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। विदेशों में हमारे व्यापार संगठनों की अपर्याप्तता का एक कारण तो हमारी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है और दूसरा कारण भारत के विदेशी आर्थिक सम्बन्धों की परिवर्तित प्रकृति है। अतीत काल में भारतीयों में उत्पादकों एवं निर्यातकर्त्ताओं को अपने बाजार की रचना के लिए विदेशों में प्रतिनिधित्व करने की आवश्यकता नहीं थी। इसके अतिरिक्त भारत में विदेशी आयात-कर्त्ताओं के अभिकरण या प्रतिनिधि थे जो उनकी ओर से खरीददारी कर सकें।

इस प्रकार व्यापार की पहल विदेशी खरीददारों द्वारा की जाती थी और भारत में वस्तुओं का उत्पादन ऐसे बाजारों के लिए किया जाता था जो पहले से ही स्थित थे। अब हमारे विदेशी व्यापार में मौलिक परिवर्तन आ गये हैं। जिन अनेक वस्तुओं में पहले भारत को एकाधिकार प्राप्त था

उनमें पर्याप्त प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो गयी है। हमारे निर्यात–व्यापार में अनेक ऐसी चीजें आ गयी हैं जिनका व्यापार पहले नहीं किया जाता था। इसके लिए विदेशों में उपयुक्त संगठन बनाना अब जरूरी हो गया है।

2. **अनुचित व्यवहार** : भारतीय निर्यात–कर्त्ताओं के अनुचित व्यवहार के विरूद्ध अनेक शिकायतें की जाती हैं। जैसे–माल भेजने में देरी, मांगे गये माल के गुण और भेजे गये माल के गुण में अन्तर, खराब पैकिंग तथा खराब मार्किंग आदि। नियमित रूप से भारतीय निर्यात–कर्त्ताओं के विरूद्ध यह शिकायत की जाती है कि वे माल भेजने की तारीख का पालन कदाचित ही कर पाते हैं। कुछ विदेशी आयात–कर्त्ताओं को यह सन्देह भी रहा कि भारतीय निर्यात–कर्त्ता वस्तुओं के दाम बढ़ने पर माल को दूसरी जगह भेज देते हैं और अधिक लाभ कमाते हैं। यद्यपि ये शिकायतें सभी मामलों में लागू नहीं की जाती वे विदेशों में भारतीय व्यापार के सम्मान को गिराती हैं और जो प्रदान किए जाते हैं। भारत के निर्यात–कर्त्ताओं द्वारा बहुत कम नमूने प्रदान किये जाते हैं

और जो प्रदान किए जाते हैं वे अत्यन्त छोटे तथा अव्यवस्थित रूप से बधें होते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे प्रतिद्वन्दी नमूने भेजने और उनको आकर्षक रूप से पैक करने में अत्यन्त उदार हैं।

3. **पैकिंग :** भारतीय निर्यात व्यापार की एक अन्य समस्या पैकिंग से सम्बन्धित है जिस पर प्रायः ध्यान नहीं दिया जाता। भारत के निर्यात–कर्त्ता इसे फालतू का अतिरिक्त खर्चा मानते हैं। भारतीय माल विदेशी बाजारों में जब पहुँचता है तो बड़े अव्यवस्थित रूप में पैक किया हुआ होता है। विदेशों में लोग आकर्षक पैकिंग पर बहुत अधिक ध्यान देतेहैं। भारत में अभी तक पैकिंग उद्योग शिशु अवस्था में है। निर्यात वृद्धि समिति ने 1957 में इस बात पर जोर दिया था कि पैकिंग पर विशेष रूप से ध्यान दिया जना चाहिए।

4. **माल का गुण :** निर्यात किये गये माल के गुणों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की शिकायते की जाती हैं। ये शिकायते रूई के निर्यात माल, चमड़े एवं खनिज पदार्थों के बारे में बहुत होती हैं। स्वस्थ व्यापारिक सम्बन्धों की रचना

के लिए यह जरूरी है कि जिन नमूनों के आधार पर व्यापक समझौता किया जाय उन्हीं के अनुसार माल भेजा जाय। जब एक ही चीज को विभिन्न कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है तो ऐसी स्थिति में उसके गुणों का निर्धारण करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

5. **विक्रय के समझौतेः** भारतीय निर्यात व्यापार के अधिकांश समझौते जिन शर्तो पर किये जाते हैं वे विदेशी आयात–कर्त्ताओं द्वारा निर्धारित की जाती है। कभी–कभी तो समझौते की शर्तों में विदेशी आयात–कर्त्ता को अनुचित रूप से लाभ प्रदान किया जाता है।

व्यापार को स्वस्थ तरीके से संचालित करने के लिए यह जरूरी है कि समझौते के प्रमाणीकृत मापदण्डों को स्थापित किया जाय।

6. **निर्यात व्यापार का संकीर्ण क्षेत्रः** विभिन्न राजनैतिक और आर्थिक कारणों से भारतीय निर्यात व्यापार पौण्ड के क्षेत्रों और विशेष रूप से ग्रेट–ब्रिटेन के साथ है। कुछ बाजारों पर अनुचित रूप से हमारी आश्रितता हमारे विदेशी

व्यपार की एक कमजोरी है।

7. **निर्यात–कर्त्ताओं का पंजीकरणः** निर्यात–कर्त्ताओं को संगठित करने के लिए उनको पंजीकृत करने की योजना पर्याप्त महत्व रखती है। इस समय निर्यात–कर्त्ताओं को पंजीकृत करने की कोई व्यवस्था नहीं है। इसका कारण यह है कि अनेक ऐसे निर्यात–कर्त्ता हैं जो अनेक अनुचित तरीके अपनाकर निर्यात करते हैं।

प्राथमिक निर्यातों से सम्बन्धित समस्याएँ :

बहुत लम्बे समय तक भारत की निर्यात आय का एक महत्वपूर्ण अंश प्राथमिक वसतुओं के निर्यात से प्राप्त होता था। लेकिन कई आन्तरिक व वाह्य कारकों से इनसे हाने वाली निर्यात आय में वृद्धि करना मुश्किल हो गया। प्रमुख वाह्य कारक निम्नलिखित हैं –

1. प्राथमिक वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में लगातार उतार–चढ़ाव होना।

2. संश्लिष्ट प्रतिस्थापकों का बढ़ता हुआ प्रयोग।

3. टैक्नोलाजी में परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उत्पादन में इस्तेमाल होने वाले माल के कम प्रयोग की आवश्यकता।

4. विकसित देशों में उपभोग पैटर्न में परिवर्तन (जिसके परिणामस्वरूप प्राथमिक वस्तुओं के उपभोग करने की प्रवृत्ति कम हुई है।)''[3]

5. औद्योगिक देशों द्वारा कुछ प्राथमिक वस्तुओं के आयात पर उच्च शुल्क लगाने की नीति तथा अन्य नियन्त्रण लगाने की नीति। भारत द्वारा निर्यात की जाने वाली बहुत सी प्राथमिक वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय मांग गतिहीन व स्थिर रही है और इसमें भी उसे अन्य अल्प विकसित देशों से बढ़ते हुए पैमाने पर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए इन वस्तुओं के निर्यात में अपना हिस्सा बनाए रखना भारत के लिए लगातार और मुश्किल होता जा रहा है।

जिन वस्तुओं में भारत को लगभग एकाधिकारी स्थिति प्राप्त थी या भारत का हिस्सा बहुत कम था, उन वस्तुओं में निर्यात आय कम होने में घरेलू नीतियाँ भी काफी हद तक जिम्मेदार थी। इस सन्दर्भ में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक है निर्यात योग्य वस्तुओं का बढ़ता हुआ घरेलू इस्तेमाल (उपभोग के लिए अथवा घरेलू उद्योगों में आगत के रूप में).

देश में कीमत स्तर में तेज वृद्धि होने के कारण घरेलू बिक्री पर लाभ की दरें बहुत तेजी से बढ़ी है और इससे प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। घरेलू बाजार में पाई जाने वाली इन दो प्रवृत्तियों (बढ़ती हुई घरेलू मांग और स्फीति) के अलावा, सरकार द्वारा समय–समय पर जो निर्यात नियन्त्रण लगाए गए तथा प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर जो शुल्क लगाए गए, उनसे भी प्राथमिक उत्पादों के निर्यात में भारत का हिस्सा कम हुआ है।

---

3. एस0के0 मिश्र एवं वी0के0. पुरी– भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, गिरगाँव, मुंबई– 400004, (1994), पृ0 708

आजादी के पश्चात् भारत के सम्यक विकास हेतु निर्यात बढ़ाना अति आवश्यक हो गया था लेकिन फिर भी वांछित उपलब्धि प्राप्त नही हो सकी। विभिन्न योजना अवधि के दौरान भारतीय निर्यात का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि देश ने निर्यात लाभ में वृद्धि की है। देश की उत्पादित एवं विदेशों से आयातित आवश्यक उपकरणों की प्राप्ति पर ही औद्योगिक क्षेत्र की प्रगति निर्भर करता है। देश के निर्यात में वृद्धि होना भी परम आवश्यक है। धीरे-धीरे भारत भी अपने बाजार को विस्तृत कर लिया है, और सम्पूर्ण व्यापार में विस्तार किया है लेकिन इन प्रगतियों के बावजूद निर्यात क्षेत्र कुछ सीमाओं और श्रमिकों से जूझ रहा है जों निम्नलिखित है :-

1. वस्तुओं का निम्न स्तर तथा ऊँचे लागत मूल्य :

निर्यात की जाने वाली भारतीय वस्तुओं की गुणवत्ता भिन्न होती है। जिससे उनकों विदेशी प्रतिस्पर्द्धा में खड़े रह पाना मुश्किल हो जाता है और अधिकांश भारतीय वस्तुओं की उत्पादन लागत अधिक होने के कारण उनका

विक्रय मूल्य अधिक होता है, जिससे वे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उचित स्थान प्राप्त नही कर पाती। अतः भारत सरकार को कई वस्तुओं के निर्यात में हानि के लिए सहायता देनी पड़ती है।''[4]

यद्यपि इससे निर्यातकों को तो क्षतिपूर्ति हो जाती है पर दीर्घकाल में सुविधाएँ अच्छे निर्यात व्यापार की सूचक नही है। पेट्रोलियम उत्पाद के निरन्तर बढ़ते मूल्यों के कारण अर्थव्यवस्था में स्फीति की दर लगातार बढ़ने वाली वस्तुओं में सबसे अधिक धनराशि पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियम उत्पादों पर अदा करनी पड़ती हैं।

भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव के अनुसार ''भारत जैसे बड़े लोकताँन्त्रिक देश के लिए अधिक सुधार का रास्ता बहुत आसान नही है लेकिन चालू आर्थिक सुधार कार्यक्रम हमारे लिए सर्वश्रेष्ठ विकल्प है जिनसे पीछे हटने का कोई प्रश्न नहीं है।[5]

---

4 . चतुर्भुज मेमोरियल एवं डा० एम०सी० जैन – भारतीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा 1986, पृ0 29

5. योजना 31 मार्च 1993, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ0–4

"गुट निरपेक्ष देशों एवं अन्य विकासशील देशों के श्रम मंत्रियों के पाँचवे सम्मेलन में बोलते हुए पूर्व वित्त मंत्री डा0 मनमोहन सिंह ने कहा कि सरकार न केवल आर्थिक सुधारों को जारी रखनें के लिए प्रतिबद्ध है बल्कि अपने वादे के अनुसार यह भी सुनिश्चित कर रही है कि इन सुधारों का बोझ कमजोर वर्गो पर नहीं पड़े। आर्थिक सुधार के लिए उठाये हर कदम का मूल्य उद्देश्य मानवीय पहलू का ध्यान रखकर सम्मेलन करना है। सरकार का यह कदम निश्चय ही स्वागत योग्य है, फिर भी जनता की व्यापाक सहभागिता तथा धैर्य एवं उदारीकरण की तीव्र गति वाँछनीय है।"[6]

राजनीतिक स्थिरता, शाँन्ति और गतिशील अर्थ व्यवस्था के कारण भारत ने अपनी खोई साख फिर से प्राप्त कर ली है। भारत की अर्थव्यवस्था के भविष्य के बारे में अविश्वास स्थान विश्वास ने अस्थिरता का स्थान स्थिरता ने और भय का स्थान साहस ने ले लिया है। वर्तमान समय

---

6. योजना 31 मार्च 1995, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित पृ0-4

में विश्व के सभी देश भारत में पूँजी लगाने के लिए इच्छुक ही नहीं, बल्कि उसके लिए कड़ी प्रतियोगिता कर रहें हैं।

"अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की नई गणना के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की छठी अर्थव्यवस्था है। अमरीका, जापान, चीन, जर्मनी, और फ्रान्स के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था है। वर्ष 2020 तक भारत दुनिया की चौथी बड़ी आर्थिक शक्ति बन जाएगा।"[7]

2. **माल की पर्ति में कठिनाइयाँः** पिछले वर्षो में तथा वर्तमान में भी पूर्ती की निरन्तरता को बनाये रखने में देश में काफी कठिनाई हो रही है। इसमें बिजली और परिवहन सबसे बड़ी बाधा है, जिसके कारण उत्पादन में रुकावट हुई है तथा हम निर्यात बढ़ा पाये हैं।

3. **देश में ही वस्तुओं की बढ़ती हुई घरेलू मांगः** देश में निर्यात उसी समय बढ़ाया जा सकता है जब हमारे पास निर्यात के लिए अतिरेक हो, किन्तु कठिनाई यह है कि देश में बढ़ती हुई आन्तरिक मांग के कारण हम निर्यात के

लिए अतिरेक का निर्माण नहीं कर पाते। बढ़ती हुई घरेलू मांग का कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है। जनसंख्या वृद्धि के कारण ही कृषि प्रधान देश होने पर भी खाद्यान्न का निर्यात करना सम्भव नहीं हो सका है। यद्यपि हाल के वर्षों में खाद्यान्न निर्यात की सम्भावना बन रही है और इस दिशा में सरकार उचित कदम उठा रही है।

4. **विदेशी प्रतियोगिताः** कुछ निर्यात वस्तुओं पर अन्य पूर्ति कर्त्ताओं के ,द्वारा प्रतियोगिता इतनी बढ़ गयी है कि भारतीय निर्यातक को इन मालों के निश्चित मात्रा में बेचने पर भी परेशानियों का सामना करना पड़ता है।

5. **समुद्र पार का शोषण विहीन सुअवसंरः** अन्तर्राष्ट्रीय बाजार कभी भी स्थिर नहीं रहा है, बल्कि परीक्षण, फैशन तथा तकनीक में लगातार परिवर्तन होता रहा है। ऐसी परिस्थिति में भारतीय निर्यातकों को बाजार उपस्थिति और नये बाजार को उत्पन्न करने के लिए जल्द परिवर्तन करना चाहिये ताकि उत्पादन की बाहरी मांग के सम्बन्ध में उत्पाद

---

7. योजना 31 जुलाई 1994, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित

बढ़ावा जा सके। जब भी आवश्यक हो नयी क्षमताओं का विस्तार और उत्पत्ति तथा उद्योग में बड़े रोजगार के सुअवसर तथा अपनी क्षमता का उपयोग करके विदेशी मांग की पूर्ति करना चाहिए तीसरे देशों में विपणन के लिए बड़े सुअवसर प्राप्त हैं। मुख्यतः ओ0पी0ई0सी0 देशों में और अन्य अफ्रिकी एशियाई और लैटिन अमेरिकी देशों में।

दुर्भाग्य से, भारतीय निर्यात घर बहुत ही कम समुद्र पार शाखाओं से जुड़े हैं। जापानी घर और व्यापारी औद्योगिकी घर, यू0के0, नीदरलैण्ड, यू0एस0ए0 और पश्चिमी यूरोप के घर के अन्तर्गत कई सुविधापूर्वक शाखायें खोली गयी हैं। आधुनिक बाजार गुप्तचर सफलता प्राप्त करने के लये चुने गये हैं। हमारे उत्पाद के लिये विदेशी बाजार में सदैव कई सुअवसर हैं।

6. **अन्य देशों की संरक्षणवादी नीतियाँः** कई देशों ने प्रभदकविहीन संरक्षण नीतियाँ अपनायी हैं जैसे-प्रभेदक लाइसेसिंग अभ्यास इत्यादि। उदाहरण के लिए ई0ई0सी0

देशों में, जूट, चमड़े के सामान, निर्मित कपड़े, नारियल की जटा उत्पाद, चाय और काफी, तम्बाकू, वनस्पति तेल इत्यादि के अधिक मात्रा में आयात पर रूकावट लागू किये गये हैं। चीनी और अन्य कृषि उत्पाद के लिए लाइसेसिंग में भी रोक लगा है। इसी तरह उच्च आयात-निर्यात शुल्क ने भारत से नये मशीन और साइकिल के निर्यात में रूकावट पैदा कर दी है। आस्ट्रेलिया में बिजली के मशीनों पर आयात-निर्यात कर 50 प्रतिशत तक ऊँची है, सूती कपड़ों पर 49 प्रतिशत, चप्पलों इत्यादि पर 40 प्रतिशत आदि ऊँचे कर लागू किये जाते हैं। यहाँ तक कि यू0एस0ए0 में भी कुछ कपड़ों के निर्यात पर 23 प्रतिशत, चमड़े के माल पर लगभग 17 प्रतिशत शुल्क लिया जाता है। इन देशों में ऐसे उच्च आयात कर हमारे देश के निर्यात व्यापार को प्रभावित करता है।

7. **भारतीय व्यापारियों की नीतयाँः** भारतीय व्यापारियों द्वारा अपनायी जाने वाली नीतियाँ भी निर्यात वृद्धि में रूकावट पैदा करती हैं जैसे-भारतीय व्यापारी नमूने के

अनुरूप माल नहीं भेजते हैं, जिसके फलस्वरूप करोड़ों रूपये का माल वापस ही नहीं लौट आता बल्कि देश की प्रतिष्ठा में गिरावट आ जाती है।

8. **प्रचार की कमीः** भारतीय वस्तुओं के बारे में विदेशों में विज्ञापन एवं प्रचार बहुत ही कम है, जिसके फलस्वरूप निर्यात हमारी आशा के अनुरूप नहीं बढ़ पाया है।

9. **सीमित बाजारः** भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की मात्रा सीमित है तथा उनका बाजार भी सीमित है। ‘‘यदि किसी प्रकार विदेशी बाजार में भारतीय वस्तु की मांग कम हो जाती है तो हमारे निर्यात स्वतः ही कम हो जाते हैं। जैसे–भारत द्वारा निर्यात की जाने वाली चाय का लगभग 2/3 भाग ब्रिटेन, खरीदता है। इसी प्रकार काजू के निर्यात का3/4 भाग केवल संयुक्त राज्य अमेरिका खरीदता है।

भारत के निर्यात में परम्परागत निर्यातों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यदि इन वस्तुओं की मांग विदेशों में कम होती है तो भारतीय निर्यात स्वतः ही प्रभावित हो जाता

है।"[8]

10. प्रतियोगिता में निम्न स्थानः वर्तमान वर्षों में देश द्वारा किये गये विभिन्न उपायों के बावजूद विकासशील देशों में प्रतियोगिता में भारत काफी पीछे हो गया है। प्रतियोगिता ज्ञात करने के लिए विश्व आर्थिक समिति द्वारा लागू सूची में 1992 में भारत 11वें स्थान पर था तथा 1991 में 10वें स्थान पर रहा। स्थान ज्ञात करने का स्तर निम्न चीजों पर आधारित होता है-

(A) घरेलू आर्थिक शक्ति।

(B) अन्तर्राष्ट्रीयकरण।

(C) सरकार।

(D) वित्त।

(E) अन्तः संरचना।

(F) प्रबंधन।

---

8. मेमोरिया एवं जैन - भारतीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा, 1986, पृ0-30

(G) विज्ञान और तकनीक

तालिका 8.1: प्रतियोगिता में भारत का स्थान (1992)

अन्तिम स्थान	देश	A	B	C	D	E	F	G
1.	सिंगापुर	1	1	1	1	1	1	2
2.	ताईवान	3	3	4	7	6	3	1
3.	हांगकांग	5	2	3	2	3	2	4
4.	मलेशिया	6	5	2	3	5	4	6
5.	कोरिया	2	6	6	8	2	5	3
6.	थाइलैण्ड	4	4	5	6	12	6	7
7.	मैक्सिको	9	7	7	5	8	8	10
8.	द0 अफ्रीका	12	10	10	4	7	7	5
9.	वेनेजुएला	11	8	9	9	9	9	11
10.	इंडोनेशिया	7	13	8	12	11	12	9
11.	भारत	8	14	11	11	13	11	12
12.	ब्राजील	13	12	14	10	4	10	14
13.	हंगरी	14	9	12	14	10	14	8
14.	पाकिस्तान	10	11	13	13	14	13	13

वर्ल्ड कम्पेटीटिवनेस रिपोर्ट 1992, वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम

स्रोत – डा0 एम0एल0 वर्मा– इन्टरनेशनल ट्रेड, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0 नई दिल्ली, 1996, पृ0–133

11. विश्व व्यापार में घटता हिस्साः पिछले वर्षो के दौरान आर्थिक विकास द्वारा प्राप्त औद्योगीकरण का स्तर भारत के

निर्यात क्षमता से ही पता चलता है कि इस आर्थिक शक्ति के आधार पर देश के निर्यात का ज्यादातर हिस्सा गैर परम्परागत निर्यात या प्राथमिक तथा कृषि आधारित वस्तुओं के स्थान पर निर्मित उत्पाद का होना है। पिछले पाँच वर्षो के दौरान जहाँ विश्व निर्यात औसत दर पर डालर में 6% बढ़ा है, वहीं पर हमारी निर्यात दर में विकास केवल 2.3% ही बढ़ा है। विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा 1951 में 2.3% से घटकर 1994 में 0.5% तक आ गया। भारत का यह थोड़ा हिस्सा पिछले छः वर्षो से है। भारत का निर्यात में हिस्सा नहीं बना पाया है।

12. जी0डी0पी0 में निर्यात का निम्न हिस्साः निर्यात में प्राथमिकता का स्थान कभी भी नहीं दिया गया। वर्तमान में ये प्राथमिकता देश के आर्थिक विकास को चालू रखने के लिए दिया गया। भारतीय निर्यात, जापान, सिंगापुर, हांगाकांग आदि जैसे निर्यात चलित विकास देशों की तुलना में विकास चलित निर्यात आर्थिकी पर आधारित है। यह भारत के जी0डी0पी0 में निम्न हिस्से का कारण है। नीचे

दिये गये निम्न तालिका से कुछ विकासशील देशों के निर्यात जी0डी0पी0 के अनुपात का तुलनात्मक चित्र का पता चलता है–

देश	1985	1992
मलेशिया	49.3	79.0
थाईलैण्ड	18.7	32.4
इंडोनेशिया	21.6	28.2
दक्षिण कोरिया	36.0	28.0
श्री लंका	20.1	30.0
पाकिस्तान	9.2	23.5
फिलीपाइन्स	15.4	22.5
चीन	9.4	18.6
बांग्लादेश	7.1	9.2
नेपाल	7.5	8.2
भारत	4.1	8.0

स्रोत – यूनाइटेड नेशन बुलेटिन आफ स्टैटिस्टिक, इन्टरनेशनल मोनेटरी फण्ड, इण्टरनेशनल फाइनेन्शियल स्टैटिस्टिक एण्ड वर्ल्ड बैंक

"कुछ एन0आई0सी0 का हिस्सा फिर भी ऊँचा है। यह हांगकांग के लिए 137% तथा सिंगापुर के लिए

190% है। कुछ अवधि में कुछ विकासशील देशों की निर्यात अच्छी रही। 1992 में भारत के 18 विलियन की तुलना में थाईलैण्ड का 23 विलियन, मलेशिया का 29 विलियन, दक्षिण कोरिया का 65 विलियन तथा चीन का 85 विलियान निर्यात रहा।"[9]

13. निर्माणकर्त्ता–निर्यातक स्थान में गिरावटः भारत निर्माण के निर्यात में विकासशील देशों में काफी पीछे है। यू0एन0 सी0टी0ए0डी0 अध्ययन के अनुसार 1970 में विकासशील देशों में भारत तीसरे स्थान पर था, केवल हांगकांग और ताइवान के बाद। 1980 में भारत निर्माण के निर्यात में 8वें स्थान पर पहुँच गय और 1988 में यह 10वें स्थान पर पहुँच गया। इन वर्षो के दौरान भारत द्वारा महसूस की गयी गिरावट की अपेक्षाकृति अन्य विकासशील देशों ने अपने स्थान में विकास किया है।

---

9. डा0 एम0एल0 वर्मा – इन्टरनेशनल ट्रेड, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0 नई दिल्ली,

तालिका 8.3: विकासशील देशों में भारत का स्थान (निर्यातित निर्माणकर्त्ता)

मूल्य- मिलियन यू0एस0 डालर

देश/क्षेत्र	मूल्य' 1988	स्थान 1988	मूल्य 1980	स्थान 1980	मूल्य 1970	स्थान 1970
कोरियागणतन्त्र	56,431.5	1	15,622.3	2	634.9	6
चीनका सूबाताइवान	55,486.2	2	17,428.6	1	1,082.3	2
सिंगापुर	27,553.7	3	9,048.4	4	427.7	7
हांगकांग	26,596.6	4	13,079.3	3	1,949.3	1
चीन	21,994.9	5	8,680.0	5	1,019.0	4
ब्राजील	17,261.9	6	7,491.9	6	362.5	10
मैक्सिको	10,392.9	7	1,839.2	11	391.3	9
यूगोस्लाविया	9,849.6	8	6,533.0	7	1,001.5	5
मलेशिया	9,196.9	9	2,426.7	9	110.41	4
भारत	8,604.5	10	4.404.3	8	1,040.2	3
थाईलैण्ड	8,032.7	11	1,604.1	12	32.2	26
तुर्की	7,491.9	12	782.0	16	52.6	21
इन्डोनेशिया	5,622.9	13	500.6	21	12.2	31
पाकिस्तान	2,960.5	14	1,247.2	13	397.6	8
अर्जेन्टिना	2,888.7	15	1,856.4	10	245.9	11

1996 पृ0-131

फिलीपीन्स	2,274.2	16	1,213.2	14	79.2	16
मिस्र	2,016.2	17	333.5	25	206.6	12
मोरोक्को	1,807.1	18	565.1	18	47.2	22
ट्यूनीसिया	1,617.5	19	797.8	15	34.9	19
कोलम्बिया	1,207.1	20	775.1	17	58.7	19
इक्वाडोर	1,024.5	21	74.3	33	3.3	34
बांग्लादेश	988.0	22	500.8	20	170.0	13
श्री लंका	689.7	23	193.5	28	4.7	32
मारीशस	623.6	24	115.0	32	1.2	35
चीली	620.9	25	416.8	23	53.3	20

(अंकटाड सेक्रेट्रीयेट)स्रोत–डा0 एम0एल0 वर्मा–इन्टरनेशलनल ट्रेड, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0 नई दिल्ली, 1996, पृ0134

कोरिया गणतन्त्र ने 1970 में 6 स्थान से 1980 में 2 स्थान पर तथा 1988 में 1 स्थान पर विकास किया। ब्राजील 1970 के 10वें स्थान से 1980 में 6वें स्थान पर पहुँच गया और 1988 तक इसी स्थान पर रहा। इन्हीं वंर्षो के दौरान सिंगापुर ने 7वें स्थान से तीसरे स्थान तक विकास किया है। मलेशिया, थाईलैण्ड और

इन्डोनेशिया ने अपने स्थान के विकास में अच्छा स्थान के विकास में अच्छा स्थान प्राप्त किया है। जहाँ इन्डोनेशिया ने 31वें से 13वें स्थान पर पहुँच गया है वहीं पर थाईलैण्ड ने 1970–88 में 26वें से 11वें स्थान पर पहुँच गया। वहीं दूसरी ओर भारत तीसरे स्थान से 10वें स्थान पर पहुँच गया। उपर्युक्त बातों से यह पता चलता है कि भारत अन्य देशों में अच्छे विकास दर, तकनीकी विकास में तथा औद्योगिकीकरण में अपना स्थान नहीं बना पाया है।

14. उच्च मूल्य और कम उत्पादनः अर्थव्यवस्था का निर्माण क्षेत्र बड़े उपयोग क्षमता से ग्रसित है, मुंख्यतः निम्न तथा मध्य स्तर उद्योगों में जो कि भारत के निर्यात में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। ये उद्योग अच्छे प्रकार के कच्चे माल की उपस्थिति तथा ज्यादा मात्रा में सही साख व्यवस्था और तकनीकी की परेशानियों से ग्रसित है। इन कारणों से उत्पादन का मूल्य बढ़ता है जो कि विश्व बाजार में प्रतियोगिता को प्रभावित करता है।

विद्युत शक्ति तथा दूर संचार जैसी सुविधा अपूर्ण

है। विश्व बैंक सूचना के अनुसार भारत से निर्यात का मूल्य औसत प्रतियोगिता एशियन देशों से 33% की वृद्धि हुई है। यहाँ तक कि उत्तरी भारत से जहाज के आन्तरिक विस्थापन में भी 10 से 25 दिन लगता है। सही प्रकार की सुविधा से इस अवधि को घटाया जा सकता है।

15. खराब रख-रखाव व्यवस्थाः भारत में रख-रखाव व्ययस्था का मूल्य यू0एस0ए0 तथा जापान की अपेक्षाकृत 80% ज्यादा है। सही सड़क व्यवस्था, वेयरहाउस, बिक्री तथा दूरसंचार तथा अन्य के आधार पर भारत में प्रति कार्यकर्त्ता उत्पादन यू0एस0ए0 तथा जापान की अपेक्षाकृति 20% घट गयी है।

16. अनुचित उत्पाद-बाजार दूरीः भारतीय निर्यात विकास की एक कमी अनुचित उत्पाद तथा सीमित बाजार क्षमता है। निर्यात उत्पाद और बाजार की पूर्ण धारा का अभी तक उपयोग नहीं किया गया है। यह सत्य कुछ प्रमुख निर्यात क्षेत्र के उदाहरण से पता चल सकता है। भारत जवाहर तथा आभूषण का सबसे बड़ा निर्यातक देश है, जिसकी निर्यात

योग्यता 1993–94 में रू0 12,000 करोड़ था। कटे तथा पालिस किये हीरे इस समूह के कुल निर्यात का 90 प्रतिशत है। निर्यात उत्पाद मुख्यतः हीरा विश्व में आभूषण निर्यात उद्योग के लिए कच्चा माल है। अन्य वस्तुओं की धारा मुख्यतः बहुमूल्य धातु, आभूषण, रंगीन हीरे पत्थर और चाँदी आभूषण को अच्छी तरह नही शुरू किया गया है। जवाहर और आभूषण के लिए मुख्य बाजार का 80% हिस्सा यू0एस0ए0, जापान तथा बेल्जियम देश का है।

निर्मित कपड़ा का एक अन्य प्रमुख निर्यात क्षेत्र है जो कि विदेशी विनिमय में रू0 5,000 करोड़ सालाना पैदा करता है। दो वस्तुएँ जो कि निर्यात के मुख्य भाग हैं, वे शर्ट और ब्लाऊज है। फैशन वस्त्रों, औद्योगिक कपड़ो के विस्त्रित दूरी और गुण की निर्यात धारा चालू नहीं हुई है। बाजार के विषय में इस क्षेत्र के निर्यात में यू0एस0ए0 तथा यूरोपियन समूह प्रमुख देश हैं।

समुद्री उत्पाद निर्यात का 1993 मेंरू0 2,000 करोड़ के निर्यात में केवल समुद्री केकड़ का निर्यात ही कुल

विदेशी विनिमय का 3/4 भाग हैं और अन्य वाणिज्यक मछलियों के अच्छी धारा को अभी शुरू नहीं किया गया है। बाजार में यू0एस0ए0 तथा जापान का सुयुक्त हिस्सा 80% है। फल और सब्जियों या खनिजों तथा अयस्कों का सम्बन्ध इससे अलग नहीं है। फलों में आम विदेशी विनिमय में मुख्य हिस्से के लिए केवल एक सबसे बडी वस्तु है। मध्य पूर्व तथा यू0के0 इसके मुख्य बाजार हैं। सब्जियों में प्याज निर्यात का एक मुख्य वस्तु है। इसके मुख्य बाजार बांग्लादेश तथा नेपालन हैं। यही दिशा कई अन्य निर्यात उत्पादों के लिए भी लागू होती है।

17. **शोकयुक्त विदेशी सीधा व्ययः**– अन्य विकासशील देशों द्वारा विदेशी व्यय को औद्योगीकरण सम्बर्द्धन के लिए मोटर की तरह तथा आर्थिक विकास के लिए इंजिन की तरह उपयोग किया जाता है। एशिया के विकासशील देश मुख्यतः चीन, मलेशिया, हांगकांग सिंगापुर, इन्डोनेशिया तथा अन्य देशों में विदेशी व्यय को निर्यात सम्वर्द्धन के लिए बहुत पहले से ही उपयोग किया जा रहा है। इन देशों ने बड़ी मात्रा में एफ0डी0आई0 को आकर्षित किया है। 1990 के

पहले भारत उन 10 विकासशील देशों में नहीं था, जो कि पूरे तीसरे विश्व के अन्तः व्यय 2/3 भागके लिए जिम्मेदार है।

1991 में जब कई विकासशील देश अपनी अर्थव्यवस्था खोलने लगे तो ऐसे देशों में विदेशी सीधा व्यय को जिन्होंने यह क्रिया पहले ही शुरू कर दिया था, उनको ज्यादा गति प्राप्त हुई। 1992 के गणना के अनुसार चीन में विदेशी व्यय 11 बिलियन, मलेशिया में 10 बिलियन और इन्डोनेशिया में 8 विलियन डालर था। इन देशों में आन्तरिक व्यय की तुलना में भारत में एफ0डी0आई0 1 बिलियन था। 1980 तथा 1970 के दशक के दौरान वार्षिक व्यय की तुलना में भारत में एफ0डी0आई0 1 बिलियन था। 1980 तथा 1970 के दशक के दौरान वार्षिक औसत आन्तरिक व्यय प्रथम 10 विकासशील देशों का निम्न तालिका में दिया गया है।

तालिका – 8.4: दश बड़े विकासशील देशों का विदेशी सीधा निवेश का औसत वार्षिक आयात

बिलियन यू०एस० डालर

	मेजबान देश.	1970	मेजबान देश	1980–90
1.	ब्राजील	1.3	सिंगापुर	2.3
2.	मैक्सिको	0.6	मैक्सिको	1.9
3.	गलेशिया	0.3	ब्राजील	1.8
4.	नाइजीरिया	0.3	चीन	1.7
5.	सिंगापुर	0.3	हांगकांग	1.1
6.	मिस्र	0.3	मलेशिया	1.1
7.	इन्डोनेशिया	0.2	मिस्र	0.9
8.	हांगकांग	0.1	अरजेन्टिना	0.7
9.	इरान	0.1	थाईलण्ड	0.7
10.	उरूगुवे	0.1	ताइवान	0.5
कुल विकासशील देश आयात का हिस्सा (प्रतिशत)		66.0		68.0

यूनाइटेड नेसन्स, वर्ल्ड इनवेस्टमेन्ट रिपोर्ट 1992

स्रोत– डा० एम०एल० वर्मा०–इन्टरनेशनल ट्रेड, विकास पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 1996, पृ०–138

18. उछाल/केन्द्रीय दृष्टिः 7वीं योजना के दौरान 15 उत्पाद समूह और 37 बाजारों को उछाल क्षेत्र और बाजार की तरह माना गया। 8वीं योजना के शुरूआत में 34 'अति आवश्यक दृष्टि उत्पाद' को पहचाना गया ताकि इनका निर्यात सम्वर्द्धन कार्य लागू किया जा सके। अत्यधिक मालों और अत्यधिक उत्पादों के उछाल या अत्यावश्यक दृष्टि के कारण ये कार्यक्रम धूमिल हो गये। जापान का अनुभव निर्यात के सम्बन्ध में एक अच्छा उदाहरण है। 40वीं दशक में जापान में वस्त्र के निर्यात विकास पर जोर दिया और आगे के वर्षा में स्टील पर जोर दिया और जापान विश्व मे एक अग्रणी देश बन गया। 60वीं दशक के दौरान गुण विकास पर ध्यान दिया गया और जापानी माल गुणवत्ता के लिए प्रसिद्ध हो गया। 1970 में मोटर उद्योग पर ध्यान देने के कारण जापान ने कार और अन्य गाड़ियों के निर्यात में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। 1980 में जापान को विद्युत उपकरण के क्षेत्र में महत्तवपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। इस समय जापान रसायनों, दवाओं, जहाज और उपग्रहों के

मूल्य जोड़ पर विशेष जोर दे रहा है। इस प्रकार का विकास हमारे देश में नहीं है।

जपापान में निर्यात सम्वर्द्धन और विकास के लिए सीमित चुनिन्दा उत्पादों औश्र क्षेत्रों के अलावा समय–समय पर कठिन परिश्रम, नियम, लगन और सहायक नीतियों ने विकास के लिए मूल्यवान सहायता प्रदान की है। देश के निर्यात क्षमता के विभिन्न स्तर पर विकास के लिए सरकार द्वारा निर्यात के नियमों का पालन करना चाहिए।

वर्तमान उदारीकरण नीति ने काफी हद तक नीति निर्माण के क्षेत्र में सरकार और उद्योग तथा व्यापार के बीच सम्बन्ध बनाया है। राष्ट्रीय स्तर पर वाणिज्य और उद्योग के चैम्बर, व्यापार समिति और उद्योग तथा व्यापार का अगुवा के प्रतिनिधि को नीति कार्यक्रम में हिस्सा प्रदान किया है।

19. अपूर्ण खोज और विकासः गुण बढ़ावा और मूल्य कमीसे विश्व बाजार में प्रतियोगी बनने में खोज और विकास एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह

लाभपूर्वक औजार तकनीक और विपणन में लागू होता है। जी0एन0पी0 के हिस्से के रूप में खोज और विकास पर हमारा खर्च 1988–89 में 0.96% से 1993–94 में 0.83% घट गया। विज्ञान और तकनीक विभाग द्वारा खोज और विकास पर एक सूचना के अनुसार तकनीक के आयात के सम्बन्ध में खर्च अनुमान से ज्यादा था। 1991–92 में जी0एन0पी0 के 0.2 प्रतिशत पर देश में खोज और विकास पर खर्च का अनुमान लगाया। दक्षिण कोरिया जैसा देश जो वर्तमान में आर0 और डी0 योजना पर 2% खर्च कर रहा है और वह अगले 5 वर्षो में खर्च बढ़ाने की कोशिश कर रहा है। दक्षिण कोरिया और ताइवान की तुलना में आर0 और डी0 में प्रति मिलियन वैज्ञानिकों और तकनीकी में भारत 10 को कार्य पर लगाता है। सिंगापुर की तुलना में 6, मैकिसको की तुलना में आधा और इन्डोनेशिया तथा थाईलैण्ड की तुलना में इससे भी कम।

20 निर्यात उत्पत्तिः देश ने लम्बे समय तक नियन्त्रण,

नियम और उद्योगों की तंगी तथा शासन पद्धति तरीका के कार्य का सामना किया है। यहाँ तक कि संरचना सुधार के अलावा सरकारी मशीन को बदलना कठिन है जब तक कि विभिन्न विभागों की भूमिका को निकाला नहीं जाता है। बड़े स्तर पर नियन्त्रण और लाइसेन्स प्रदान किया गया है और अप्रशासनिक तरीके से अपने अन्तराष्ट्रीय व्यापार में निर्णय लेने की छूट की आवश्यकता है।

विकास और सम्वर्द्धन पर ध्यान देने वाली निर्यात सम्वर्द्धन प्राधिकरण या वाणिज्यिक क्रियाओं में व्यस्त क्षेत्रीय संगठन का अपना क़ार्यभार सौपने का अधिकार अपूर्ण है। इन प्राधिकररण में व्यक्तिगत पहुँच और कार्य की कमी है। आर्थिक उदारीकरण के फल को चखने के लिए राज्य क्षेत्र निगम, निर्यात सम्वर्द्धन समिति, निम्न उद्योगों तथा निर्यात निगमों को व्यक्तिगत रूप से वाणिज्यिक रेखा की तरफ बढ़ना जरूरी है।

21. **योग्यता की कमीः** भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में

प्रतियोगी देशों द्वारा व्यूह रचना में उत्पादन आर0 और डी0 तथा विपणन योग्यता में कमी है। 1993 में विश्व विख्यात अवरोधों के सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता के विस्तार ने निम्न तथा मध्य आकार के कम्पनियों को परिवर्तित कर दिया है, क्योंकि ये इकाईयाँ सही व्यवस्था तथा नियन्त्रण के लिए अच्छे क्षेत्र प्रदान करती हैं। यह महसूस किया जा रहा है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की जटिलता को बड़े की तुलना में निम्न तथा मध्य आकार के कम्पनियों को दे देना चाहिए।

फिर भी यह सुनिश्चित नहीं होता है कि इन परिवर्तनों के बावजूद भी निम्न स्तर की इकाईयों को लाभ प्राप्त होगा। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ये छोटी इकाईयाँ हैं और विकसित देशों में एस0एम0ई0 की तुलना में हमारे बड़े स्तरीय उद्योग छोटे हैं। यू0एस0ए0 में छोटा व्यापार उसे कहते हैं जो कि 500 से कम व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करे तथा जिसका वार्षिक लाभ 14 मिलियन डालर हो।

सचमुच यू0एस0ए0 का 90% व्यापार इस भाग में आता है। जो कि कुल रोजगार तथा नौकरी के 66% के लिए उत्तरदायी है। इसी तरह पश्चिम यूरोप में भी व्यापार ईकाईयाँ हैं। हमको अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार क्रिया में लचीलापन तथा स्वतंत्रता की आवश्यकता है ताकि बदलती नीति, अनुभव तथा विपणन व्यूह रचना के अनुसार हम ढल सकें।

22. **अनिश्चित घटनाओं पर यथासम्भव नियन्त्रणः** एक अनुमान के अनुसार अप्रैल 97 की ट्रक मालिकों के हड़ताल के कारण आयात-निर्यात व्यापार पर लगभग 600 करोड़ रूपया प्रतिदिन का नुकसान हो रहा था।[10] यदि इस प्रकार के हड़तालों को यथासम्भव न होने दिया जाय तो निश्चित ही हमारा निर्यात अधिक होगा।

<u>उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त :</u>

(1) वर्तमान समय में निर्यात ऋण पर देश में 12 से 14 प्रतिशत के बीच व्याज लिया जाता है

जबकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्यात पर उच्च व्याज दर चल रही है। यहाँ तक की गलेशिया जैसे देश को क्षतिपूर्ण दी जाती है, परन्तु फिर भी वे रियायतें बहुत कम हैं।

(2) साख की कमी से बैंकों में जरूरत के मुताबिक धन उपलब्ध नहीं हो पाता है। ऊँची शुल्क दरों के चलते जरूरी कच्चा माल महंगा होने से देश का निर्यात अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धी नहीं रहा पाता है।

(3) निर्यातकों को 90 दिन से ज्यादा का रियायती कर्ज पर रिजर्व बैंक द्वारा लगाई गई रोक से भारतीय निर्यात माल विदेशी बाजार में पिटने लगेगा।[11]

(4) बांग्लादेश को रवाना होने वाला बेशुमार माल 15 से 20 दिन तक सड़कों पर पड़ा इंतजार करता

---

10. नादर्न इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद, 6-4-97

रहता है। इसी तरह बंदरगाह और जहाजों की उचित सुविधाओं के अभाव में अमेरिका और कनाडा को जानेवाला निर्यात भी अटका पड़ा रहता है।

(5) "अगर श्रमिक विवाद और ढांचागत दिक्कतें निर्यात उद्योगों के आड़े नहीं आती तो भारत का अनुमानित व्यापार घाटा पाँच अरब डालर की बजाए सिर्फ दो अरब डालर के बराबर होता। विभिन्न समस्याओं के कारण निर्यात उद्योगों को चालू वित्त वर्ष 1995-96 के दौरान 3.2 अरब डलार का घाटा हुआ।"[12]

(6) पेट्रोलियम पदार्थों के दामों में वृद्धि से निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इससे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में निर्यातकों को काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ेगा। डीजल के दामों में 15 प्रतिशत

---

11. नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, 22-12-1995, पृ0 - 12
12. नवभारत टाइम्स, नईं दिल्ली, 22-12-1995, पृ0 - 12

वृद्धि से निर्यातकों को अपने सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने में जहाँ में जहाँ रेल और ट्रक का अधिक भाड़ा अदा करना पड़ेगा। वहीं पानी के जहाज से भेजे जाने वाले सामान के भाड़े में भी बढ़ोत्तरी से निर्यात व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

(7) "भारतीय बन्दरगाहों की स्थिति ठीक नहीं है, ज्यादातर बन्दरगाह क्षमता से अधिक काम कर रहे हैं। भारतीय बन्दरगाहों पर भार के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिशत 55 से 65 फीसीदी के मुकाबले 120 से135 फीसदी तक भार है। जहाजों के ठहरने और दोबारा जाने का औसत समय चार से दस दिन है, जो कभी-कभी 60 दिन तक पहुँच जाता है जबकि विश्व के अन्य बन्दरगाहों पर सामान्य तौर पर 6 से 48 घेटे लगते हैं। बड़ा कन्टेनर पोर्ट भी कोलम्बों और करांची पोर्टसे कन्टेनर

ट्रेफिक में अभी पीछे है। भारतीय बन्दरगाहों पर कोर्ट का व्यय भी पड़ोसी देशों जैसे चीन, बांग्लादेश, श्रीलंका, थाईलैण्ड और सिंगापुर की तुलना में काफी अधिक है।"[13]

(8) निर्यात को प्रोत्साहित करने में सरकारी नियम बाधक है। भारतीय निर्यातकों के सामने मैट, उच्च दर पर निर्यात साख, आधारभूत सुविधाएँ एक बड़ी बाधा के रूप में सामने है। इसके कारण भारतीय निर्यातक प्रतिस्पर्धा का सही तरीके से सामना नहीं कर पा रहे हैं। सुप्रिम कोर्ट के आदेशानुसार मात्र दिल्ली जैसे शहर में 168 उत्पादन इकाइयों को प्रदूषण फैलाने के कारण बन्द करने का आदेश दिया गया।[14] निश्चित ही इन इकाइयों के द्वारा किया जाने वाला निर्यात बन्द हो हायेगा। यदि इन इकाइयों

---

13. आज (वाराणसी) 26 अगस्त 1996, पृ0-8
14. नार्दन इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद, 10-7-96

को बन्द करने के बजाय उन्हें प्रदूषण नियन्त्रण उपकरण को बाध्य किया जाता तो निश्चित ही साँप भी मर जाता और लाठी भी न टूटती।

(9) भारतीय विदेश व्यापार संस्थान के डीन प्रोफेसर वी० रामचन्द्रैया के अनुसार "देश में विदेशी बाजारों में उत्पाद के विपणन की समुचित शिक्ष का अभाव है। भारत के व्यापार में विपणन की समस्याएँ तो हैं ही साथ ही आधारभूत सुविधाओं का भी अभाव है। बन्दरगाहों और एयरपोर्ट पर भण्डारण की सुविधा, विद्युत, यातायात, संचार तथा प्रतिस्पर्द्धात्मक भावनाओं का विकास अभी अधूरा है। भारत में निर्यात सम्बन्धी कागजी कार्यवाई में भी देरी होती है जिससे निर्यात में बाधा उत्पन्न होती है।[15]

(10) फूल निर्यात भारत के लिए नया व्यापार है और

---

15. आज (वाराणसी), 26 अगस्त 1996, पृ0-8

जिसमें अत्यधिक वृद्धि की सम्भावना है यूरोपीय कमीशन द्वारा भारतीय फूल व्यापार पर 20% कर लगाया गया है जबकि अन्य विकासशील देश इससे मुक्त है। यदि इस प्रकार की कठिनाइयों को दूर किया जा सके तो निश्चित ही हमारा निर्यात पहले की तुलना में बेहतर हो सकता है।

ड्रा बैंक भुगतान में आवश्यक देरी :-

(11) निर्यातकों को ड्यूटी ड्रा बैंक का भुगतान चार महीने से रूका हुआ है। विभिन्न नियति संर्वधन परिषदों के अथक प्रयास क बावजूद अप्रैल के पूर्व भुगतान के आसार नही दिखते। वित्त वर्ष की अंतिम तिमाही में ड्रा बैंक रूकना सामान्य प्रक्रिया होती जा रही है जिससे विदेशी व्यापार से जुड़े लोगों की समस्या गम्भीर हो गयी है, तीन वर्षो से अयात शुल्क की दरों से हो रही कमी से अब कालीन पर ड्रा बैंक में भारी कटौती की

आशंका उत्पन्न हो रही है, निर्यातकों का सुझाव है कि आगामी बजट प्रस्तावों में उन, रंग व रसायन पर शुल्क की दरें कुछ बढ़ाकर कालीन पर ड्रा बैंक की दरें सामान्य तौर पर मई के अन्तिम सप्ताह में घोषित होती है।

निर्यात कारोबार से जुड़े सूत्रों के अनुसार नवम्बर से ड्यूटी ड्रा बैंक का भुगतान अटका हुआ है। अकेले कालीन क्षेत्र का इस मद के 50 करोड़ रूपये से भी अधिक बकाया बताया जाता है।

प्रदेश में मुरादाबाद व उसके आस–पास के क्षेत्रों में स्थित हस्तशिल्प निर्यातकों का सर्वाधिक बकाया बताया जाता हैं, हस्तशिल्प निर्यात संवर्धन परिषद के सूत्रों के अनुसार पूरे देश में दिसम्बर शिपमेंट का ड्रा बैंक निर्यातकों को नहीं मिला है।

मूल्य वर्धित उत्पादो के निर्यात में लघु व

कुटीर क्षेत्र का अत्यधिक महत्व है।इस क्षेत्र में कारीगरी की सामाजिक व आर्थिक समस्यायें काफी हद तक होती है। कालीन व हस्तशिल्प निर्यात क्षेत्र देश में इस समय 60 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध करा रहा है। कम पूँजी निवेश से श्रम लागत आधार पर मूल्य वर्धित उत्पाद निर्यात करने वाले इस क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं में ड्यूटी ड्रा बैंक का भुगतान समय पर न मिलना भी है। बताया जाता है कि प्रत्येक वर्ष अन्तिम तिमाही में तकनीकी कमियों के बहाने भुगतान रोक दिया जाता है जबकि वास्तविकता विभाग के पास फंड का अभाव होती है।

संवर्धन परिषद के आँकड़ों के अनुसार उत्तर प्रदेश से इस वित्त वर्ष के दौरान कशीदा व करोसिया कारी परिधानों, लकड़ी की वस्तुएँ,

आटमेटल वेयर, हैंड प्रिंटेड टेक्सटाइल व स्कार्फ जरी वजरी उत्पादों सहित हस्तशिल्प उत्पादों का निर्यात बढ़ा है। ऐसे में ड्यूटी ड्रा बैंक का नवम्बर से अब तक भुगतान न होने से निर्यातक परेशान है। वित्त वर्ष समाप्ति की निकटता से छोटे व मध्यम कारोबार वाले निर्यातकों के समक्ष आर्थिक संकट उत्पन्न हो रहा है।

(12)यूरो से घरेलू निर्यातकों के सामने प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी :

भारत के निर्यातकों को निकट भविष्य में भारी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ेगा। उन्हें मुख्य चुनौती पूर्वी यूरोपीय देशों की ओर से मिलेगी। यह बात यूरोपीय संघ के प्रतिनिधि मंडल के राजदूत माइकेल कैलाउट ने सी0आई0आई0, सेन्टर फार फलिसी रिसर्च और इंडो जर्मन एक्पोर्ट प्रमोशन प्रोजेक्ट–जी0टी0 रोड

द्वारा संयुक्त रूपसे व्यूरो से भारत के व्यवसाय पर प्रभाव विषय पर आयोजित एक से मिलर को सम्बोधित करते हुए कहीं। दूसरी ओर वित्त मन्त्रालय के संयुक्त सचिव नवीन कुमार ने कहा है कियूरोमुडा के चलन भारतीय निर्यातकों को काफी लाभ होगा।

उन्होने कहा कि यूरो का त्वरित प्रभाव यूरोपीय देशों के अन्तर्गत यह होगी कि यूरोजोन में लोनदेन की लागत में कभी आयेगी ओर व्यापार के तहत मुद्रा सम्बन्धी जोखिम कम हो जायेगे। हमसे यूरो जोन के अन्दर माल की खरीद अन्य देशों से खरीद के मुकाबले अधिक लाभकारी साबित होगी, क्योंकि इसमें लागत कम आयेगी, इन चुनौती का सामना करने के लिए भारत के निर्यातकों को यूरो मुद्रा की इनवाँयसिंग जल्दी शुरू करनी चाहिए। इसके चलते नये सौदों

में कानूनी बदलाव और इलेक्ट्रानिक डाटा इंटर चेंज प्रणाली में साफ्टवेयर में परवर्तन करना होगा।[16]

इस मौके पर वित्त मन्त्रालय में संयुक्त सचिव नवीन कुमार ने कहा कियूरो के चलन से यूरोपीय देशों के अन्दर वित्तीय एकीकरण अधिक मजबूत हुआ है। यूरो दुनिया में दूसरी सर्वाधिक प्रचलित मुद्रा बन गयी है। इसमें घरेलू निर्यातकों को काफी लाभ होगा। विदेश मुद्रा विनियम जोखिम में कमी आने से भारत का निर्यात सम्बन्धित देशों को बढ़ेगा।

13. आयात पर कर में साफ्टवेयर निर्यात घटेगा :

इलेक्ट्रानिकस व कम्प्यूटर साफ्टवेयर निर्यात संबद्धन परिषद (ई0एस0सी0) ने निर्यात सम्बर्द्धन दोनों में स्थित साफ्टवेयर कम्पनियों की

16. अमर उजाला - 17-04-2002

कुल आय के 10 फीसदी हिस्से को आयकर के दायरे में लाने पर चिन्ता करती है। परिषद द्वारा करायेगये एक सर्वेक्षण के अनुसार इससे कम्पनियों के अर्न्राष्ट्रीय में प्रतिस्पर्धा क्षमता समाप्त हो जाएगी और निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

परिषद के कार्यकारी निदेशक डी0के0 सरीन के अनुसार सर्वेक्षण में बड़ी न होती कुल 50 कम्पनियों को शामिल किया गया। यह सर्वेक्षण साफ्टवेयर कम्पनियों की आय के 10 फीसदी हिस्से को आयकर सीमा में लाने से इनके कारोबार पर पड़ने वाले प्रभाव को समाप्त करने के लिए किया गया। सवेक्षण में कम्पनियों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा पर पड़ने वाले असर का भी आकलन किया गया है।

सर्वेक्षण शमिल सभी कम्पनियों ने 10

फीसदी आय को आयकर दायरों में लाने के प्रस्ताव पर चिन्तायुक्त करते हुए कहा है कि इससे उनकी प्रतिस्पर्धा क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना निश्चित है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में मौजूद कड़ी प्रतिस्पर्धा के चलते 80 फीसदी लघु साफ्टवेयर पर निर्यातक वसूली लाभ मार्जिन पर ही आयकर रहे हैं। इसके साथ ही साफ्टवेयर व्यापार में नये प्रतिस्पर्धा देशों का भी प्रवेश हुआ है, इनमें रूस, विएतनामा, चीन और फिलीपीन्स आदि मुख्य है लगभग 70 फीसदी कम्पनियों ने कहा है कि दुबई, शारजहा, आम्यन और बहरीन अपने यहाँ में साफ्टवेयर निर्यात बढ़ाने के लिए साफ्टवेयर पार्क स्थापित कर रहे हैं। वहाँ के प्रतिनिधि मण्डल लगातार भारत का दौरा कर रहें है। इन देशों द्वारा कर रियायतों के साथ अन्य सुविधायें देने का भी प्रस्ताव है। ऐसी स्थिति में घरेलू साफ्टवेयर कम्पनियों द्वारा अपनी उत्पादन

सुविधाएँ स्थानांतरित की जा सकती है।[17]

13. गारमेन्ट निर्यात में भारी घपला 1200 फर्मो को नोटिस जारीः

अमेरिका को गारमेन्ट निर्यात में वित्तीय लेनदेन बड़े पैमाने पर अनियमितता की शिकायत पर 1200 से अधिक निर्यातकों के खिलाफ सरकार ने जाँच शुरू की है। बहुत सारे निर्यातकों द्वारा अमेरिका को भेजा गया माल वहाँ पहुँच ही नही है। इस सम्बन्ध में अप्रैल निर्यात सम्बर्द्धन परिषद (ए0ई0पी0सी0) ने इन निर्यातकों को नोटिस भेजकर जवाब माँगा है, जब कि एक अन्य मामले में डिपार्टमेन्ट आफ रेवेन्यू इंन्टलीजेन्स (डीआरआई) को निर्देश पर लगभग 300 गारमेन्ट निर्यातकों के ड्रा बैंक खाते फ्रीज कर दिये गये। एईपीसी चेयरमैन वीरेन्द्र उत्पल

---

17. अमर उजाला – 17-04-2002

ने भी इस कार्यवाई की पुष्टि की है। कुछ माह पहले यह तथ्य प्रकाश में आया था कि रायपुर के 14 निर्यातकों द्वारा अमेरिका को भेजा गया माल वहाँ पहुँचा हो निर्यात प्रदर्शन् के अधार पर ही कोटा का आवंटन किया जाता है। अमेरिका के कोटे का प्रीमियम काफी अच्छा होता है। इसके अलावाँ गतव्य तक माल के नही पहुँचने के बावजूद ड्रा बैंक लेने और विदेशी मुद्रा अर्जन की प्रक्रिया में गड़बड़ियों का शक होता है। सूत्रों के मुताबिक इस मामले की जाँच डीआरआई को देने के बाद इस बात का पता चलता है कि ऐसे और भी तमाम निर्यातक है जिनका यहाँ से इस मुद्दे पर कपड़ा मंत्रालय और डीआरआई के बीच वीचार विमर्श कर एईपीसी ने लगभग 12000 से अधिक निर्यातकों को नोटिस भेजकर इस सम्बन्ध में निर्यातकों से मिले एंट्री समरी चालान के लिए कहा गया है।

(14) **निर्यात उन्मुखी इकाईयों द्वारा धोखाधड़ीः** अमृतसर पंजाब के एक निर्यात उन्मुख इमार्द रायल इन्डस्ट्रीज ककि आद्यातित सामान को निर्मित करने के छोटे–छोट टुकड़ों में बेच रही है और इस प्रकार सरकार को लगभग 15 करोड़ रूपये का नुकसान दे रही है। ज्ञात हो कि निर्यात उन्मुख समस्या को आयात पर काई शुल्क नहीं देना होता।[18]

निराकरण हेतु सुझाव :

निर्यात के बढ़ाने के लिए हमें निम्नलिखित दिशाओं में प्रयत्न करना चाहिए।

1. **उत्पन्न में वृद्धिः** भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्याँ में वृद्धि हो रही है, निर्यात अतिरेक उसी समय सम्भव है जब उन वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाया जाय जिनकी घेरलू और विदेशों में विस्तृत मांग है। जब तक

---

18. जी न्यूज – मई 4, 2002

उत्पादन नहीं बढ़या जाता, निर्यात अतिरेक सम्भव नहीं है। इस दृष्टि से विदेशी मांग एवं निर्यात योग्य वस्तुओं के उत्पादन में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया जाना चाहिए।

2. **घरेलू उपभोग पर प्रतिबिन्धः** "कुछ वस्तुओं को निर्यात के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराने के लिए वित्तीय एवं अन्य तरीकों से घरेलू उपभोग पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए यह त्याग आवश्यक है"[19]

3. **अधिक प्रचारः** भारत सरकार व व्यापारियों को विदेशों में भारतीय वस्तुओं का विज्ञापन एवं प्रचार करना चाहिए, जिससे कि वहाँ पर वस्तु की मांग उत्पन्न हो सके और उसको पूरा कर निर्यात को बढ़ाया जा सके।

4. **वस्तुओं की लागतों में कमी तथा वस्तुओं की किस्म में सुधारः** निर्माताओं को वस्तुओं की

लागतों में कमी करनी चाहिए जिससे कि वस्तुएँ अन्तर्राष्ट्रीय लागतों पर तैयार हो सके और प्रतियोगिता में सफलता प्राप्त कर सकें। "विदेशों में राजनीतिक बाधाएँ, मुद्रा संकट, रूचि एवं फैशन में परिवर्तन तथा अन्य आर्थिक समस्याओं के कारण हमारे निर्यात व्यापार में स्थायित्व तथा गतिशीलता का अभाव रहा है। तथा हमें विदेशों से कड़ी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा है।"[20]

विदेशों में प्रतिस्पर्द्धा से मुकाबला करने के लिए भारतीय निर्माताओं को अपनी-अपनी वस्तुओं की किस्मों, पैकिंग व डिजाइनों में सुधार करना चाहिए तथा किस्म नियन्त्रण पर विशेष ध्यान रखनी चाहिए जिससे कि विदेशियों की अपनी आशाओं के अनुरूप वस्तु मिल सके।

5. **निर्यात उद्योगों की वित्तीय सहायताः** विश्व बाजार में

---

19. डा0 जे0 प्रकाश एवं डा0 वी0सी0 सिन्हा-भारतीय कृषि, उद्योग, व्यापार एवं यातायात, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1983 ऋ0 पृ0-438

भारत को औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों के साथ समान स्तर पर प्रतियोगिता करनी पड़ती है। इन देशों के बड़े पैमाने के उद्योगों की लागत भारत की तुलना में कम होती है और कुछ मामलों में उनकी वस्तुएँ भी श्रेष्ठ होती हैं भारत अपने निर्मित माल का निर्यात उसी समय बढ़ा सकता है। जब कुछ चुनी हुई ऐसी औद्योगिक इकाईयों की स्थापना की जाय जिनके निर्यात की प्रबल एवं भारी पैमाने की सम्भावनायें हैं। इन उद्योगों को उदार शर्तो पर वित्तीय सहायता दी जानी चाहिए।

6. कच्चेमाल का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों पर उपलब्धताः

निर्यात वस्तुओं के मूल्यों को प्रतिस्पर्धात्मक स्तर पर लाने के लिए यह आवश्यक है कि निर्यातित उद्योगों को आयातित कच्चे माल आदि को अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों पर उपलबध कराया जाय।

---

20. डा० जी०सी० सिंघई- अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा, 1993, पृ0-484

7. **मूल्यों में स्थिरताः** निर्यात में सुव्यवस्थित ढंग से वृद्धि करने के लिए मूल्यों में स्थिरता लाना आवश्यक है। जब तक आन्तरिक लागत मूल्य स्तरों को काफी सीमा तक कम नहीं किया जायेगा तब तक निर्यातकों की वास्तविक प्राप्तियों में कमी रहेगी और इसका परिणाम यह होगा कि निर्यातकों से प्राप्त साधनों का उत्तरोत्तर अधिक उपयोग देश में बेची जाने वाली वस्तुओं के उत्पादन के लिए किया जाता रहेगा।

8. **क्षमता में वृद्धिः** निर्यात क्षेत्रों की पहचान होने के बाद यह भी देखा जाना चाहिए कि क्या निर्यातों की मांग पूरी करने के लिए वर्तमान क्षमता पर्याप्त है? किसी भी वस्तु का निर्यात उसके घरेलू मांग पूरी होने पर बचे हुए अतिरेक पर निर्भर रहता है। अतः उत्पादन क्षमता का होना निर्यात के लिए पूर्व शर्त है। अतः जबतक उत्पादन क्षमता नहीं बढ़ेगी जाती हमारे निर्यातों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इस दृष्टि से निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र दोनों में उचित विनियोग

नीति निर्धारित की जानी चाहिए।

9. **कच्चे माल की निरन्तर उपलब्धिः** निर्यात मे वृद्धि करने के लिए मुख्य कच्चे मालों की भावी मांग को ध्यान में रखकर उनकी मात्रओं का अनुमान लगाया जाना चाहिए और उनकी निरन्तर उपलब्धि की व्यवस्था होनी चाहिए। पिछले कुछ वर्षो से हमारे निर्यात करने वालों की यह एक बड़ी शिकायत रही है कि उन्हें आवश्यकतानुसार कच्चा माल प्राप्त नहीं हो पाता। अतः कच्चे माल ठीक प्रबन्ध करना आवश्यक है।

10. **उद्योग और सरकार के बीच सहयोगः** निर्यात सम्भावनाओं का पूरा प्रयोग करने केलिए उद्योगों तथा सरकार के बीच काफी सहयोग और तालमेल का होना भी जरूरी है। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को जिनमें भारी पूँजी लगी हुई है, निर्यात वृद्धि की दिशा में सार्थक भूमिका निभाने योग्य बनाया जाना चाहिए। यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि लोक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के बीच निर्यात के मामले में प्रतिस्पर्धा का मौका

न आने दिया जाय।

11. **नवीन तकनीकी और तकनीकी हस्तान्तरणः** कोई देश किन वस्तुओं का निर्यात कर सकता है यह प्राकृतिक साधनों की मात्रा एवं प्रकार के साथ–साथ तकनीकी विकास पर निर्भर करता है। पुरानी रूढ़िवादी तकनीकों के साथ काम करते हुए किसी भी देश के लिए विश्व व्यापार में अपना स्थान बनाये रखना सम्भव नहीं है। हम पुरानी व परम्परागत तकनीकों का ही उपयोग कर रहें हैं जिसके कारण आज हमारी ऊँची लागत वाली घटिया किस्म की वस्तुएँ विश्व बाजार में आधुनिक तकनीकों द्वारा उत्पादित श्रेष्ठ किस्म की सस्ती वस्तुओं के साथ मुकाबला नहीं कर पा रही है। अतः यदि हमें विदेशों में अपनी वस्तुओं के लिए बाजारों का विकास करना है तो यह आवश्यक है कि हम उत्पादन की आधुनिक तकनीकों को अपनाने का प्रयास करें और उस पर अमल करे।

" निर्यात प्रोत्साहन का रूप नकद सहायता न होकर करों में रियायत और निर्यातकों के निर्यात वृद्धि के प्रयत्नों के फलस्वरूप प्राप्त अतिरिक्त विदेशी मुद्र0 की राशि के प्रयोग में अधिक स्वतंत्रता के रूप में होना चाहिए। विदेशी मुद्रा के निर्यात उद्योगों के लिए कच्चे माल तथा अन्यि वस्तुओं के आयात हेतु उपयोग के अतिरिक्त अन्य उपयोगों की भी छूट मिलनी चाहिए।[21]

भारत विकसित राष्ट्रों के मुकाबले में अनके कृषि वस्तुओं जैसे-फल, सब्जियां, फूल आदि के निर्यात में अधिक सफल हो सकता है। इसी प्रकार सरकार विशाल मात्रा में कच्चा लोहा, मैगनीज और मछली के निर्यात में सफलता प्राप्त कर सकती है। भारत के निर्यात विपणन में भी बहुत सुधान की आवश्यकता है। उत्पादन के डिजाइन, पैंकिंग आदि मे सुधार कर विदेशी उपभोक्ता की रूचि के अनुकूल बनाना चाहिए। सरकार को अन्य देशों के साथ

---

21 डा0 विष्णु दत्त नागर, डा0 राम प्रताप गुप्त- आर्थिक विकास के सिद्धान्त एवं समस्याएं- दि मैक मिलन कंपनी आफ इंडिया लि0 नई दिल्ली, 1977, पृ0 -482

द्विपक्षीय समझौते भी करने चाहिए निर्यात आमुख उद्योंगो में विदेशी निर्माताओं के साथ उत्पादन समझौतें को और अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। निर्यात वस्तुओं की किस्म नियन्त्रण पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। निर्यात वस्तुओं की किस्म अविश्विसनीय होने पर पर विदेशी क्रेताओं के विश्वास को ठेस पहुँचती है और वे उस वस्तु के साथ अन्यि भारतीय वस्तुओं को भी संदेह की दृष्टि से देखने लगते है। सरकार को निर्यात प्रोत्साहन में चयन नीति अपनानी चाहिए, केवल उन्हीं उद्योगों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए, जिनमें निर्यात वृद्धि की संभावना अधिक हो।

सराकर ने निर्यात प्राथमिकता के तौर पर 15 देशों के बाजारों की पहचान की है। इनमें अमरीका, जापान, जर्मनी, ब्रिटेन, हांगकांग, अरब अमीरात, बेल्जियम, इटली, दिक्षण अफ्रीका, रूस, बाग्लादेश, सिंगापुर, हालैण्ड, फ्रास और थाईलैण्ड शामिल हैं। दुनिया के 15 बाजारों में भारतीय निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सरकार को निर्यात

सलाहकारों तथा अथवा संवर्धकों की सेवाये ली जानी चाहिए। विभिन्न दूतावासों में विभिन्न देशों में वहां के बाजार मांग के मुताबिक व्यवसायिक प्रतिनिधित्व होना चाहिए ताकि पहचान किये गये बाजारों में भारतीय निर्यातको के हितों को सुरक्षित रखा जा सके।

विश्व में तेजी से बदल रहे आर्थिक परिवेश में भारत को विश्व बाजार में माल बेचने के लिए विदेशी कंपनियों से जबरदस्त मुकाबला करना पड़ रहा है। हम अपना माल तभी बेच सकते हैं जब उसकी गुणवत्ता बेहतर ओर दाम काम हो। इसलिए हमें अपने ही औद्योगिक इकाईयों को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के रूप में स्थापित करना चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र में पर्याप्त क्षमता मौजूद है। उसका प्रभावी ढंग से इस्तेमाल करने की जरूरत है। हमें अपने कर्मचारियों की दक्षता और उपलब्ध मानव संसाधनों का पूरी तरह उपयोग करना चाहिए। इसके लिए हमें आपसी सहयोग से अपने ससांधनों का भरपूर करना चाहिए।

पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण पटसन की मांग बढ़ रही है। शुद्ध पहसन से निर्मित उत्पादों के अलावा विश्व बाजार में पटसन मिश्रित वस्तुओं को स्वीकार किया जा रहा है। यदि सरकार पटनसन मिश्रित वस्तुओं के निर्यात पर ध्यान दे तो विश्व बाजार में अधिक से अधिक पटसन से बनी वस्तओं का निर्यात किया जा सकता है।

हस्तशिल्प वस्तुओं में शामिल करीब आठ प्रकार के चीजों को विदेशी खरीददारों से समर्थन मिल रहा है। इनमें कालीन,कृतिम आभूषण, तांबा से बनी वस्तुएं और लकड़ी की नक्काशी का सामान है। हालैण्ड और जापान कालीन के पारम्परिक खरीदों मं शामिल हो गये हैं। धातुसे बनी वस्तुओं ने आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में अपनी पहचान बनाई है। कालीन, कृत्रिम आभूषण, ताबां से बनी वस्तुएं ओर लकड़ी की नक्काशी के सामानों का विदेशों में काफी मांग है। अगर सरकार इन वस्तुओं के निर्यात पर ध्यान दे तो इनका अधिक से अधिक निर्यात किया जा

सकता है। जापान और हालैण्ड में कालीन की मांग को देखते हुए सरकार वहां पर कालीन का निर्यात बढ़ा सकती है। आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में धातु से बनी वस्तुओं के नये बाजार को देखते हुए सरकार को वहां पर धातु से निर्मित वस्तुओं का अधिक से अधिक निर्यात करने का प्रयास करना चाहिए।

शताब्दी के अन्त तक विश्व निर्यात में भारत की भागीदारी एक प्रशित तक बढ़ाने के लिए बुनियादी सुविधाओं पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत को अभी सही मायने में अपनी अथव्यवस्था को नयी बाजार अर्थव्यवस्था के अनुरूप ढालना है। यक काम निश्चित समयावधि में पूरा किया जाना चाहिए। अगले पांच वर्षो में भारत को निर्यात में सात से दस अरब डालर प्रतिवर्ष की वृद्धि हासिल कर वर्ष 2000 तक 75 अरब डालर का निर्यात लक्ष्य हासिल करना है। बुनियादी सुविधाओं जैसे –सड़क बन्दरगाह, आवागमन के साधन, बिजली आदि के

अभाव में क्षमता के मुताविक निर्यात नहीं हो पा रहा है। इसके लिए बुनियादी सुविधाओं के विकास में निजी क्षेत्र में भी निवेश को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। अनवरत निर्यात वृद्धि के लिए भारतीय उत्पादों को प्रतिस्पर्धी मूल्यों पर विश्व बाजार में उपलब्ध कराना चाहिए। इसके लिए सरकार और उद्योगों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध बनाये जाने का प्रयास किया चाहिए।

नये–नये उभरते बाजारों और उत्पादों के विपणन सम्भावनाओं का पता लगाने के लिए वाणिज्य, एवं उद्योग मण्डलों को सक्रिय भूमिका निभानी चहिए। " विश्व निर्यात में भारत की छवि बनाने के लिए सरकार एक इंडिया ब्राण्ड इक्विटी फण्ड" शुरू कर रही है। 'इंडिया ब्रांड इक्विटी फण्ड' भागीदारी करने पर रियायतों का स्वरूप निर्धारण करने के लिए सरकार ने एक विशेषज्ञ समिति का गठन कर दिया है।[22] आधिकाधिक निर्यात वृद्धि के लिए उदार और खुली नीतियां अपनाना चाहिए। सकल घरेलू उत्पाद में

आयात-निर्यात की 30 प्रतिशत हिस्सेदारी को खुली बाजार अर्थव्यवस्था का अच्छा सूचक माना जाता है, लेकिन भारत के मामले में यह हिस्सेदारी सकल घरेलू उत्पादों का मात्र 18.7 प्रतिशत ही है। निर्यात वृद्धि के लिए आधारभूत सुविधाओं का विकास और प्रशासनिक सहयोग, शुल्क और दरों को उपमुक्त स्तर पर लाना तथा धन की लागत को कम करना चाहिए।

विष्व व्यापार के स्वरूप में तेजी से आ रहे बदलाव के कारण लघु निर्यातकों के एक संगठन या समूह का गठित होना आवश्यक है। इससे विदेशी मुद्रा की कमाई में काफी वृद्धि हो सकती है। जब निर्यात कम्पनियां विदेशी आर्डर को पूरा करने में असफल रही है। तब इसका कारण या तो आर्डर के आकार का बड़ा होना था या विपणन पर होने वाले उच्च लागत खच्र था, जिसे लघु कंपनियां अकेले नहीं सह सकती थी। ऐसी स्थिति में लघु निर्यात कंपनियों का एक समूह गठित होना आवश्यक है।

---

22 राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, 21अगस्त 1996, पृ0 11

कपड़ा तथा बलेंडड यार्न के क्षेत्र में जहां विकसित दशों के उत्पादन में गिरावट आयी हैं वही भारत के कपड़ा व्यापार के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में नयी सम्भावनाओं का सृजन हुआ है। भारत में सस्वी मानव रम शक्ति उपलब्ध होने के कारण मानव निर्मित धागे व अर्न्राष्ट्रीय बाजार में निर्यात करने की अत्यधिक सम्भावनाएं मोजूद हैं, जिसके लिए किसी प्रकार का आधारभूत ढाँचा तैयार किये जाने की जरूरत है। अमरीका जैसे बड़े राष्ट्रों में सूती वस्त्र की मांग निरंतर बढ़ती जाने से भी भारत के लिए निर्यात की ओर संभावनाएं बढ़ रही हैं। पाकिस्तान, चीन और फिलिस्तीन आदि ऐशियाई विकसिवत राष्ट्रों में वस्त्र उत्पादन में गिरावट के साथ ही भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो गयी है। भारत द्वारा किये जाने वाले कुल निर्यात में 30 प्रतिंशत हिस्सा वस्त्र निर्यात से हो रहा है। मानव निर्मित धागे के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सरकार को मिश्रित धागे के पोलिस्टर के साथ मिलाये जाने वाले तत्व 'विसकोज' पर से शुल्क कम करना चाहिए।

भारत का वस्त्र उद्योग बहुत प्राचीन है तथा कपास के मामलें में भी अन्य राष्ट्रों के मुकाबले भारत अधिक सृतिद्ध है, इसके अलावा यहां पर कुशल और अर्द्धकुशल श्रमिक आसानी से मिल जाते हैं। अतः हमारे यहां गुणवत्ता की ओर पूरा ध्यान दिया जाये तो इसका उत्पादकों को भारी लाभ मिल सकता है।

विकासशील देशों में विकसित देशों की अपेक्षा सूती वस्त्रों की खपत में कमी आ रही है। आर्थिक सुधान कार्यक्रमों और उदारीकरण की नीति अपनाने से इसमें खपत बढ़ सकती है। भारत में औसतन 15 वर्ग मीटर कप्ड़े की प्रति वार्षिक खपत है। अमरीका में यह 90मीटर प्रतिव्यक्ति वार्षिक खपत है। इसी प्रकार ब्रिटेन में तथा अन्य यूरोपीय राष्ट्रों में 75 मीटर प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत है। लोगों के जीवन स्तर और आय के स्तर में वृद्धि के साथ ही यह भी आवश्यक है कि वस्त्रों में भी प्रति व्यक्ति खपत बढ़े। आय में वृद्धि विकसित देशों में यह खपत 5 प्रतिशत से बढ़कर

20 प्रतिशत प्रति व्यक्ति वस्त्रों की खपत बढ़ सकती है। इसकी पूर्ति के लिए कच्चे माल के निर्यात के स्थान पर विकसित दशों और तैयार माल भेजने पर अगर जोर दिया जाये तो हमें अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त हो सकती है। यदि सरकार आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराये एवं रियायत प्रदान करे तो भारत का सबसे प्राचीन वस्त्र उद्योग और धागा उद्योग अन्तराष्ट्रहय क्षेत्र में अत्याधिक ख्याति प्राप्त कर सकता है।

वर्तमान में कपड़ा, वस्त्र और हस्तशिल्प वस्तुओं का निर्यात वर्ष में दस अरब डालर अर्थात 35,000 करोड़ रूपये के करीब है। इसमें आधे से अधिक निर्यात केवल सिले-सिलाये वस्त्रों का होता है। हमारा प्रयास होना चाहिए कि इस शताब्दी के अंत तक यह निर्यात बढ़कर 40 अरब डालर हो जाए। इसके लिए रणनीति औरयोजना बनाने तथा उस पर काम करते हुए विश्व में लोकप्रिय

डिजायन तैयार कर उत्पादन बढ़ाना होगा। तभी हम यह लक्ष्य प्राप्त कर सकते है।

सरकार कपड़ा नही बनाती और न ही वस्त्रों के डिजायन तैयार करती है। यह केवल नीति बनाती है। इसलिए सरकार नई नीति के तहत इस उद्योग को मदद कर रही है। सरकार की आर्थिक उदारीकरण की नीति के तहत शताब्दी के अंत तक विदेशी डिजायनर भी देश में आ जायेंगे जिनसे हमारे उद्योग का बड़ा मुकाबला होगा। अतः हमें इस चुनौती के लिए अभी से तैयारी शुरू कर देनी चाहिए। हमें सूती, ऊँनी अथवा सिल्क का उत्पादन बढ़ाने पर विशेष ध्यान देना चाहिए। हमें कृतिम धागे से बने कपड़ो का देश में अधिक इस्तेमान करना चाहिए तथा सूती कपड़ा और वस्त्रों का निर्यात करना चाहिए। चीन, वियतनाम और कम्बोडिया आदि देश हमारे कपड़ा उद्योग को कड़ी चुनौती दे रहे है। वर्ष 2004 के बाद कोटा पद्धति नहीं होगी तब वहीं देश विश्व बाजार में अपना माल बेच सकेगा

जो कड़ी प्रतिस्पर्धा में खरा उतरेगा। अभी हमारे पास आठ वर्ष हैं, हम उस चुनौती के लिए अपने को तैयार कर सकते है।

विश्व में लिलाई मशीनों की खपत सबसे अधिक रूस और उसके बाद चीन में हैं। भारत के लिए रूप और चीन सिलाई मशीन के लिए सबसे बड़ा साबित हो सकता है। अगर सरकार सिलाई मशीनों के निर्यापत पर ध्यान दे तो रूस और चीन में भारत का निर्यात बढ़ सकता है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों की प्रमुख भूमिक होती है। यदि लघु उद्योगों का प्रबन्धन ठीक प्रकार से हो, तो निश्चित रूप से भारतीय लघु उद्योग विदेशी वस्तुओं की प्रतिस्पर्द्धा का सफलता पूर्वक मुकाबला कर सकते है। लघु उद्यमी राज्य सरकार की सब्सिडी पर निर्भर न रहकर स्वावलम्बी बनें और अपने उत्पाद को इस स्तर का बनाएं, जिससे वे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अपनी साख

स्थापित कर सकें और भारतीय निर्यात में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।

" 1995-96 के दौरान भारत कम्प्यूटर हार्डवेयर और साफ्टवेयर निर्यात में रिकार्ड वृद्धि हुई है और अब यह क्षे विश्व की अग्रणी कंपनियों को भारत में अपना परिचालन शुरू करने के लिए आकर्षित कर रहा है। भारत के कम्प्यूटर साफ्टवेयर निर्यात में वर्ष 1995-96 के दौरान अब तक का सर्वाधिक 80 फीसदी वृद्धि अर्जित की गयी । इनका निर्यात गत वर्ष के 1,474 करोड़ रूपये (47.5 करोड़ रूपये) की तुलना में इस दौरान बढ़कर 2,650 करोड़ रूपये (79.10 करोड़ डालर) हो गया है। आलोच्य अवधि में कुल उत्पादन में कम्प्यूटर हार्डवेयर का निर्यात हिस्सा 33 प्रशित (775 करोड़ रूपया) रहा जो कि पिछले वर्ष के निर्यात के मुकाबले 29 प्रतिशत अधिक है। इस वर्ष की उपलब्धि अब तक का सर्वाधिक रिकार्ड है, जिससे यह संकेत मिलात है कि विश्व बाजार में भारत ऐसी

पाँग़ महाद्वीपों मं 75 देशों के लिए साफ्टवेयर की आपूर्ति कर रहा है जबकि गत वर्ष 67 देशों में निर्यात किया गया। नीदरलैण्ड, डेनमार्क, इंडोनिशया, नार्वे एवं आस्ट्रिया जैसे 28 देशों में साफ्टवेयर निर्यात 100 फीसदी से अधिक बढ़ गया है। भारतीय साफ्टवेयर हेतु प्रमुख बाजारों के बीच अमेरिकी बाजार में 60 फीसदी वृद्धि हुई जबकि सिंगापुर मं 51 फीसदउी वृद्धि हुई थी।"[23] कम्प्यूटर हार्डवेयर और साफ्टवेयर क्ष्क्षेत्र मं बढ़ रहे निर्यात में वृद्धि दर को देखते हुए , सरकार को इस क्षेत्र में निर्यात की व्यापक संभावना को देखते हुए विशेष ध्ययान देने की जरूरत है, जिससे हमारा निर्यात अधिक से अधिक बढ़ सके। भारत को अन्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धी उत्पादन आधार बनने के लिए स्पष्ट राष्ट्रीय नीति के साथ उत्पादन प्रक्रियाओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। भारत निम्न श्रम लागत और कम कीमत के लिहाज से अन्य देशों की अपेक्षा लाभ की स्थिति में है। लेकिन बेहतर प्रशिक्षित इंजीनियर, कुशल

---

23 दैनिक जागरण, वाराणसी (इलाहाबाद), 2 जुलाई 1996, पृ0-9

आधार पर निर्यात के लिए कम लागत वाले उत्पादन आधार के साथ ही भारत को विश्व स्तर पर हार्डवेयर बाजार के रूप में विकसित करने के लिए सरकार और उद्योग द्वारा मिलकर प्रयार करने की आवश्यकता है।

"भारत दुनिया में फलों का सबसे बड़ा उत्पादक देश बन गया है। नारियल उत्पादन में उसका दूसरा निर्यात के लिए फुलवारी उत्पाद सबसे बड़े क्षेत्र के रूप में उभरकर सामने आया है। देश में बागवानी उत्पादों का उत्पादन बढ़ानेक के लिए समेकित प्रणाली विकसित की गई है। इसके तहत इनका उत्पादन क्षेत्र बढ़ाया गया है और फसलों का विविधीकरण किया गया है। इसके लिए पर्वतीय और तटीय क्षेत्रों में विशेष ध्यान दिया गया है। निर्यात पर सरकारी नियंत्रण जैसी बाधांए समाप्त कर दी गई है। अब बीजों के आसान आयात की व्यवस्था की गई है। सौ फीसदी निर्यातिन्मुखी इकाईयों को आधारभूत संसाधन

उपलब्ध कराने पर सरकार पर्याप्त ध्यान रही है।"[24] दुनिया में फलों का सबसे बड़ा उत्पादक देश बन जाने के कारण भारत के लिए विश्व बाजार में फलों का निर्यात करने का सुनहरा अवसर मौजूद है। इस अवसर का लाभ उठाते हुए सरकार को फलों तथा फलवारी उत्पाद का निर्यात बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

भारत सन 01-01 तक करीब 60 लाख टन इस्पात का निर्यात कर सकता है। इसलिए दक्षिणपूर्ण ऐशिया और चीन में नये बाजारों की चीनी चाहिए। दक्षिण ऐशिया में इस्पात की उपलब्धता में करीब 10 करोड़ टन की कमी का आकलन किया गया है। भारत की भौगोलिक स्थिति और दक्षिण ऐशिया देशों के साथ बढ़ते सम्बन्धों के मद्देनजर भारत इस क्षेत्र मे इस्पात के एक बड़े विक्रेता के रूप मे भर सकता है। 199:-96 के उत्पादन के अनुसार भारत विश्व में इस्पात का नवां सबसे बड़ा उत्पादक

24 दैनिक जागरण वाराणसी (इलाहाबाद), 24.6.1996, पृ0-8

देश है। इस वर्ष के दौरान भारत में इस्पात उत्पादन में 16.4 फीसदी की बढोत्तरी हुई है। विश्व बाजार में उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने के लिए भारत इस्पात उद्योग को आधुनीकीकरण के जरिये अपनी उत्पादकता में बढ़ोत्तरी करनी चाहिए। दक्षिण ऐशिया में इस्पात की मांग बढ़ने का संकेत मिल रहा है, इसलिए जरूरी है कि भारत में इस्पात उद्योग में निवेश बढ़ाया जाए और उपलब्ध होने वाले अवसरों का लाभ उठाया जाय। भारत के पास कई रणनीतिक लाभ है। जिनक जरिये भारत को विश्व बाजार में अपने प्रतिस्पर्धियों से बढ़त मिल सकती है। यहां पर धरेलू स्तर पर उच्च गुणवत्ता का लोहा अयस्क उलब्ध है। जिसकी लागत भी कम है, श्रम सस्ता है और अच्छी तकनीकी विशेज्ञता के चलते नये तकनीकों को शीघ्र अपनाया जा सकता है। भारत में उत्पादकता का स्तर भी ठीक हैं भारत में आर्थिक विकास के साथ पांच सालों में निर्माण गतिविधियाँ बढ़ने की सीावना है। इससे लम्बे उत्पादों के उत्पादन में, फ्लैट उत्पादों के मुकाबले ज्यादा

बढ़ोती की उम्मीद है। इस्पात उद्योग के मद्देनजर भारत में परिवहन ढांचे पर तत्काल ध्यान दिये जाने की जरूरत है। भारत के इस्पात उद्योग को अपना नजरिया बदलकर अवसरों का लाभ उठाना चाहिए ताकि भारत इक्कीसवी सदी में विश्व बाजार में एक प्रमुख इस्पात उत्पादक और विक्रेता के रूप में उभर सके।

''उमेंरिया में भारतीय दवाओं की भारत मांग है। अगर अपने संचालन का स्तर नही सुधारा और नई दवाओं की खोज के लिए आधुनिकता का सहारा नहीं लियातो हम अन्य देशों से बहुत पीछे रह जायेंगे। बहुराष्ट्रीय कंपनियों से मुकाबला का एक ही रास्ता है कि हम भी विदेशों में अपना आधार मजबूत करें। ऐसे समय मं जब भारत के दरवाजे हर विदेशी कंपनी के लिए खोल दिए गय हैं, हमं कड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। भारत सरकार इस क्षेत्र में संतुलन कायम रखने तथा शोध एवं विकास कार्यो के लिए निवेश प्रोत्साहन करने में पूरी तरह से

असफल रही है।''[25] इसके लिए विदेशों में अपनी संचालन गतिविधियां बढ़ाना ही हमारे जख्मों का इलाज है। हम भारत में रहकर शोध की सुविधाएं नहीं बढ़ा सकते। यह समस्या निकट भविष्य में भी समाप्त होने वाली नही है। इसके लिए ब तक ही रास्ता बचा है कि भारतीय दवा कंपनियां बाहर जाएं, शोध करें, वापस भारत लौटकर सस्ते दामों पर उपलब्ध कराएं तथा अमेरिका में भारतीय दवाओं के निर्यात को प्रोत्साहित करें।

भारत से वियतनाम को होने वाले निर्यात में वर्ष 1992-1993 से हर साल दो गुना से ज्याद बढ़ोत्तरी हो रही है। जिसके और अधिक बढ़ने की संभावना है। वर्ष 1995-96 के दौरान भारत से वियतामन को 499 करोड़ रूपये का निर्यात किया गया जो पूर्व वित्त वर्ष की तुलना में 171 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वियतनाम भारत से अधिक व्यापार करने वलो असियान (दक्षिण पूव्र ऐशियाई

---

25 दैथ्नक जागरण वाराणसी (इलाहाबाद) 24.6.1996, पृ0-8

देश) है। इसके अलावा इस वर्ष सभी एशियान देशों को होने वाले निर्यात में भी अच्छी खासी वृद्धि रही। इन देशों को कुल 3.1 अरब अमेरिकी डालर का व्यापर किया गया।

" आसियान देशो को भारतीय निर्यात वर्ष 1995–96 के दौरान 70 प्रतिशत रहा है। वर्ष 1992–93 से प्रतिवर्ष वियतनाम को निर्यात में दो गुना वृद्धि हुई है। भारत से 1992–93 में 1.2 करोड़ डालर 1993–94 में 2.9 करोड़ डालर, 1994–95 में 5.85 करोड़ डालर मूल्य का निर्यात वियतनाम को किया गया। लेकिन 1995:96 में भारतीय निर्यात में आई वृद्धि ने इस क्षेत्र में निर्यात कर रहे आस्ट्रीया, स्वीडन, पुर्तगाल,ग्रीस, डेनमार्क तथा खाड़ी देशों को भी पीदे छोड़ दिया है।स भारतीय दवाओं के निर्यातकों को छोडत्रकर शेश्ज्ञ व्यापारिक समुदाय वियतनाम में व्यापार संभावनाओं का पूरा लाभ उठाने के प्रति गंभीर नही है। भारतीय दवाओं के वियतनाम के बाजर में 20

प्रतिशत की भागीदारी है।"[26] भारत के लिए वियतनाम एक बहुत बड़ा बाजार साबित हो रहा है। वियतनाम में भारतीय माल की काफी मांग है, जिसकी वजह से वियतनाम को भारतीय माल का अधिक से अधिक निर्यात किया जा सकता है। इसके लिए सरकार को चाहिए कि वियतनाम को निर्यात बढ़ाने के लिए विशेष प्रयास करना चाहिए।

" भारतीय निर्यातक ब्राजीच को निर्यात बढ़ाने के अपने प्रयासों को दो गुना करें। निर्यात बढ़ाना उदारीकृत वयापारकृत व्यापर व्यवस्था के तही भी जरूरी है। ब्राजील लातिनी अमेरिकी देशों की सबसे बड़ी अर्थव्यव्था है तथा यह दुनिया का नौंवा सर्वाधिक औद्योगिकृत देश है। यह यह लगातार निर्यात में बढ़ता चला जारहा है। लेकिन इसके साथ ही साथ आयात भी बढ़ा रहा है। भारतीय वस्तुओं का आयात बढ़ाने के लिए भी वह तैयार है।"[27] भारत ब्राजील को परंपरागत वस्तुओं के अलावा अपरंगात सामानों का भी

---

26 दैनिक जागर, वाराणसी, 30 जूनं 1996, पृ0-9
27 दैनिक जागरण, वाराणसी, 26 मई 1996, पृ0-11

काफी निर्यात कर सकता है। निर्यातक निर्यात बढ़ाने का प्रयास करते समय वे गुणवत्ता तथा नैतिकता के उच्च मानदंडों का पालन करें। वरा भारत की स्थिति खराब होने देर न लगेगी। भारतीय निर्यातकों का कार्य अब आसान हो गया है। क्यों कि दक्षिण अफ्रीका के साथ अच्छे व्यापार संबंध स्थापित हो गये हैं। ब्राजीन को निर्यात करते समय दक्षिण अफ्रीका को मध्यस्थ बनाया जा सकता है। इससे दूरी कम हो जाएगी तथा अन्त में उनका माल ब्राजील में प्रतिस्पर्धी मूल्यों पर बिकने लगेगा। ब्राजील में भी व्यापार अवरोध अब काफी ढीला हो गया है। भारतीय उद्यमियों को ब्राजील के उद्यमियों के साथ संपर्क स्थापित कर उन्हें समझना चाहिए। लंबे अरसे से ब्राजील का भारत के साथ अच्छा सम्बन्ध है। दोनों देश विश्व की सबसे बडत्री अर्थव्यवस्थाओं का प्रतिनिधित करते हैं। इनका विश्व के मामलों में काफी प्रभाव भी माना जाता है। सशक्त राजनयिक सम्बन्धों में व्यापारिक एवं आर्थिक सम्बन्धों की सबसे बड़ी भूमिका होती है। भारत व ब्राजील के बीच

व्यापार बढ़ने से मौजूद द्विपक्षीय संबंधों को और मजबूती हासिल होगी। भारतय निर्यातक ब्राजीन को अने उत्पादों का निर्यात कर सकते हैं। अब वहां अर्थव्यवस्था खुल रही है। शुल्क दरें औसतन 35 प्रतिशत से घटकर 12 प्रतिशत रह गई है। तथा गैर–शुलक अवरोध खत्म हो गए है। ब्राजील अन्य लातिनी अमेरिकी देशों का निर्यात बढ़ाने में भी मददगार हो सकता है।

"भारतीय उत्पादों को विदेशी बाजारों में प्रतिस्पर्धी बनानें के लिए आठ महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सुधार कर इसे और मजदूत किया जाना चाहिए। मूलभूत सुविधाओं के अभाव में हम विदेशी प्रतिस्पर्धा में पीछे रह जाते हैं। इस क्षेत्र में उपयुक्त उपाय कर भारत को विदेशी कम्पनियों के मुकाबले खड़ा किया जा सकता है। मूलभूत सविधाओं के अलावा निवेश को सुनिश्चित करना और अन्तराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धी मूल्यों पर कच्चे माल की आपूर्ति, वित्त की लागत करों और शुल्कों को तर्कसगंत बनाना, डम्पिंग विरधी उपायों के

असरदार बननाना, निर्यातोन्मुखी इकाइयों निर्यात सम्वर्द्धन मण्डलों की स्कीम को तर्कसंगत बनाना तथा श्रमिक नीति में आवश्यकता के अनुसार परिर्वतन करवाने, ये ऐसे महत्वपूर्ण और गंभीर क्षेत्र हैं। जिसमें तुरंत ठोस कदम उठाये जाने की जरूरत है।"[28] बुनियादी सुविधाओं के विकास में भारतीय कम्पनियों की प्रभावी हिस्सेदारी के लिए उन्हें अनुकूल समर्थन और गारिण्टियां देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। देश के व्यापार और सेवाओं को प्रतिस्पर्धी बनाने में लागत और वित्त की उपलब्धता मूल आधार का काम करती है। बैंकिग, बीमा और बित्त व्यवसाय में निजी क्षेत्र केप्रवेश को बढ़ाने के लिए ज्यादा लचीला रूप अपनाया जाना चाहिए।

करों और शुल्कों को तर्संगत और पुर्नगठित किये जाने की आवश्यकता है। यदि अप्रत्यक्ष करों के सथान पर व्यापक मूल्य वर्धित कर (वैट) प्रणाली को लागू कर दिया

---

28 राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, रिवार, 23 जुलाई, 1995, पृ0-8

जाये तो इस सन्दर्भ में होने वाली समस्याओं को काफी कम किया जा सकता है। जब तक यह सुविधा लागू नहीं हो पाती राज्य सरकारों केलिए विभिन्न प्रकार की विक्रीकर प्रणाली की जगह एक आदर्श बिक्रीकर व्यवस्था बना देना चाहिए।

निर्यात को बढ़ावा देने के लिए शत-प्रतिशत निर्यातोंन्मुखी इकाइयां निर्यात सम्वर्द्धन परिसरों, ई0ओ0यू0 और ई0पी0जेड0 प्रणाली को और तर्कसंगत बनाया जाना चाहिए। निर्यात-आयात नीति में कुछ परिर्वतन कर निर्यातोन्मुखी इकाइयों को आसान बनाया गया है। लेकिन विक्रीकर पर शुल्क ढांचे और रद्दी सामानों के लिए विभिन्न नियमों को आसान बनाने का काम अभी शुरू नही हुआ है।

उद्योगों के सम्मुख बदलते माहौल में नई चुनौतियों का सामना करने में मौजूद श्रमिक नीति भी एक बड़ी गम्भीर समस्या है। वर्तमान श्रमिक नीति की

जटिलताओं की समीक्षा कर इसे कार्यकुशल और उत्पादकता को बढ़ावा देने तथा अधिक नीति की जटिलताओं की समीक्षा कर इसे कार्यकुशल और उत्पादकता को बढ़ावा देने तथा अधिक रोजगार के अवसर र्पदार करने वाला बनाया जाना चाहिए। व्यापारिक समुदाय को भी अधिक जिम्मेदारी वहन करनी चाहिए जिसमें कम्पनी की योजना में निर्यात को अहम मुद्दा बनया जाय। उद्योगों को विशेष लक्ष्य तय कर इसे पानी की दिशा में भरपूर कोशिश करनी चाहिए।

1991 से शुरू किया गया आर्थिक उदारीकरण कार्यक्रमों की बदौलत भारतीय अथव्यव्था आर्थिक दुष्चक्रों की कैद से निकलकर विश्व स्तर पर एक महत्वपूर्ण आर्थिक खिलाड़ी के रूप में उभरने में सफल रहा है। गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, निम्न जीन स्तर, मुद्रास्फीत तथा बढ़ते रोजकोषीय घाटे ने इन सुधार कार्यक्रमों के प्रति आंशका तथा चुनौती उपस्थित की है, लेकिन वर्तमान परिवेश में इस उदारीकरण की यात्रा को तीब्र गति के साथ जारी रखना

तथा देश एवं समाज के लिए सबसे अधिक हित में हैं। विश्व स्तर पर हुए आर्थिक बदलाओं के बाद भारतीय अथव्यवस्था भी उससे अलग नही रह सकता है। आर्थिक उदारीकरण की तीब्र रफ्तार भारत को न केवल विश्व का महत्वपूर्ण आर्थिक खिलाड़ी बना सकता है, बल्कि सामाजिक एवं राजनैनिक दृष्टि से भ्ज्ञी एक शक्तिशाली राष्ट्र बन सकता है।

अगर कृषि क्ष्ज्ञेत्र पर विशेष ध्यान दिय जाये तो कृषि निर्यात वर्तमान 16 प्रतिशत से बढ़कर 20से 25 प्रतिशत हो सकता है। सरकार की उदार आर्थिक नीति ने किसानों को निर्यात बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया है।

''कृषि क्षेत्र से निर्यात में वृद्धि करने की व्यापक संभावनाएं मौजूद हैं, क्योंकि अभी 90 प्रतिशत कृषि निर्यात मे सिर्फ 10 उत्पाद हैं। ये 10 उत्पाद भी विदेशो में कुछ खास वर्ग, जिसमें मुख्यतः भारतीय मूल के लोग शामिल है।, उनके लोगों के बीच ही खपत है। अगर

विपणन नेटवर्क का विस्तार करते हुए उत्पाद को विविधीकृत किया जाये तो भारतीय कृषि उत्पादों का अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में व्यापक पैमाने पर निर्यात किया जा सकता है।"[29]

निर्यात के दृष्टिकोण से आलू प्याज की जगह मशरूप जो कि ज्यादा लाभदायक है, पर अधिक ध्यान देना चाहिए। अर्धनिर्मित वस्तुओं के बजाय पूर्ण निर्मित वस्तुओं की विक्री से अधिक लाभ मिल सकता है। उदाहरण क लिए जूट के बजाय कपड़ा स्टील के बजाय स्टील के धागे, जड़ी-बूटी एवं पेड़ पौधों के बजाय उनके उत्पाद, इत्यादि। तैयार भोजन बेचकर लगभग 2,000 करोड़ रूपये प्रतिवष्र की आय की जा सकती है। रूस और अमेरिका में आलू, चिप्स, आलू, पाउडर, आलू गैस इत्यादि की अत्याधिक मांग है। परन्तु भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान के एक अध्ययन के अनुसार विभिन्न करों के कारण इन वस्तुओं की लागत 20 से 30 प्रतिशत तक अधिक हो जाती है, अतः करों में सरलीकरण की आवश्यकता है।

---

29 राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, 13 मई 1994, पृ0-11

विदेशी व्यापार में संतुलन बनाने के लिए सरकार को कृषिक्षेत्र के उत्पादकों पर विशेष्ज्ञ ध्यान देना चाहिए। चूँकि भारतीय कृषि क्षेत्र में अपार संभावनाएं पहले से ही मौजूद है, बस उन्हें पूरी तरह उपयोग मे लाने की जरूरत है। आधुनिक बाजार व्यवस्था में कृषि सम्बन्धित उत्पादों का रूप सुधार कर या परिवर्तित करके मुद्रा कमाने का अनेक प्रकार का नया तथा सफलतम प्रयोग किया है।

खाद्य प्रसंस्करण, चिप्स, पापडद्य,फ्रूट, जैली, अचार, इत्यादि से कई देश करोडों रूपये का व्यवसाय कर रहे हैं। ऐसा नहीं है कि इस काम में केवल छोटे या मझोले देश ही शामिल हो, बल्कि यह काम बाकायदा विकसित तथा बडे देशों के द्वारा किया जा रहा है। ये तमाम विकसित देश कृषि सम्बन्धित उत्पादों के व्यवसाय में उतरकर भारी मुनाफ़ा भी कमा रहे हैं, लेकिन कृषि प्रधन देश का राग अलापने वाले भारत में सबसे अधिक दुर्दशा कृषि क्षेत्र के उत्पादों का उत्पादन बढ़ाये तो न केवल देश

में आर्थिक खुशहाली का माहैाल बन सकता है, बल्कि हमें निर्यात करने योग्य तमाम सामान भी मिल सकता है। जिससे विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सुविधा हो सकती है।

भारतीय वस्तुओं के निर्यात में सबसे ज्यादा गुजाइस दक्षिण पूर्वी ऐशियाई देशों पर अफ्रीकी देशों में नजर आ रही है। इन छोटे–छोटे तथा आर्थिक रूप से पिछडत्रे देशों में भारतीय सामान की खपत और मांग बराबर बढ़ रही है। इसलिए उकसी पूर्ति का पूरा उपाय किया जाना चाहिए। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की मात्रा ओर गुणवत्ता के मामले में जो शिकायतें देश को सुननी पड़ती है। या जिनकी वजह से देशी माल को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का नहीं माना जाता है, उन पर ध्यान देकर उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का बनाने के लिए कारगर नीतियां, बनानी चाहिए।

देश के विदेशी व्यापार से संतुलन कायम करने के लिए हमें आयातित माल के मोहपास से भ्झी निकलना

होगा, क्योंकि यह कोई जरूरी नही है। कि जिस माल पर आयातित मोहर का ठप्पा लगा है, वह माल भारतीय माल की गुणवत्ता से श्रेष्ट ही हैं इसके अलावा हमें कच्चा माल निर्यात करने की भी प्रवृत्ति से उबरना चाहिए, क्योंकि कच्चे माल की विक्री से दशे को नुकसान उठाना पड़ता है। इसलिए हमें तैयार माल निर्यात करने की योजना पर अग्रसर होना चाहिए। चूँकि हमारे देश में अवसर, साधन और श्रम की कोई कमी नही इसलिए हमें इन बातों की अवहेलना करे कोई भी नयी विदेशी व्यापार नीति बनोन की आवश्यकता नहीं है। यदि सरकार इस दिशा में सजग रही तो भारतीय आयात- निर्यात का अंतर शीघ्र ही समाप्त हो सकता है।

भारत में आर्थिक उदारीकरण के बाद जिस गति से औद्योगिक और कृषि क्षेत्र में प्रगति हुई है, उस गति से ढांचागत क्षेत्र का विस्तार नही हो पाया है। जिसके फलस्वरूप बंदरगाहों, सड़कों, जहाजरानी, रेलवे आदि पर

क्षमता से कहीं अधिक भार डाला जा रहा है। यदि भविष्य में भी यही स्थिति बनी रही तो भारतीय अर्थव्यवस्था अपने विकास का बोझ वहन नहीं कर पायेगी।

आर्थिक उदारीकण के पश्चात आयात-निर्यात में वृद्धि हुई, जिससे बन्दर गाहों पर मालवाहक जहाजों की भीड़ बढ़तती गई। आज स्थिति यह है कि इन जहाजों को कई दिनों तक बन्दर गाहों पर माल उतारने पर या लादने के लिए ठहरना पड़ता है।" अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बन्दर गाह अपनी क्षमता के 60 से 65 प्रतिशत पर ही काम करते है, लकिन भारत में मद्रास बन्दरगाह 135 प्रतिशत, तूतीकोरिन 132 प्रतिशत, पाराद्वीप 132 प्रतिशत, कांडला 127 प्रतिशत बम्बई 120 प्रतिशत तथ्यभा मुद्राओं 118 प्रतिशत क्षमता पर काम कर रहे है। इन बन्दर गाहों पर जहाजों को औसतन 4 से 10 दिन तक पड़ता है। जबकि विदेशी बन्दर गाहों पर 6से 48 घंटे के भीतर यह काम पूरा हो जाता है।" भारत मं इन समस्याओं से निपटने के

लिए बन्दरगाहों के बेहतर प्रबन्धन के लिए बन्दरगाह ट्रस्टों को एवं स्वशासी प्रशासनिक ईकाई बनाना चाहिए, सीमाशुल्क विभाग को माल की जांच के लिए तथ्यात्मक नीति अपनाई चाहिए, इलेक्ट्रानिक विधि से कोण हस्तानान्तरण की विधि से सीमा शुल्क के हाथ एकीकृत करना चाहिए तथा सभी बन्दरगाहों को कम्प्यूटरीकृत माल प्रबन्ध प्रणाली अपनानी चाहिए।

यदि उपरोक्त सुझाओं को व्यवहार में लाया जाय तो निश्चित ही निश्चित सीमा तक करके निर्गत में वृद्धि विश्व कल्याण में वृद्धि सम्भव है।[30]

निर्यात की दिशाः-

भारत के निर्यात की दिशा में विशिष्ट बदलाव और विभिन्नताएं आयीं है। निर्यात की संरचना निर्यात की दिशा मं बदलाव को बहुत कम प्रभावित करती है।

---

30 क्रामिकाल मार्च 1996, प्रकाशक, 208-209, शिवकोक हाउस करमपुरा कामर्शियल काम्पलेक्स , नई दिल्ली-110015, पृ0-5

परम्परागत वस्तुओं के निर्यात विकसित देशों, को गैर परम्परागत उत्पाद का निर्यात, विकासशील देशों को यिका जाता है। भारत का निर्यात मुख्यरूप से यूरोपीय आर्थिक समुदाय, उत्तरी अमेरिका, एशिया एवं ओशनिया, पेट्रोलयम निर्यातक देश, पूर्वी यूरोप, विकासशील देश एवं कुछ अन्य देशों का होता है।

भारत का उत्तरी अमेरिका के साथ जिसमें कनाड़ा ओर संयुक्त राज्य अमेरिका शामिल है, घनिष्ट व्यापारिक सम्बन्ध है। भारत 1980–81 में उत्तरी अमेरिका को अपने कुल निर्यात का 12 प्रतिशत भेजता था जिसमें 0.9 प्रशित कनाडा को और 11.1 प्रतिशत संयुक्त राज्य अमेरिका को हमारा निर्यात कुल निर्यात का 18 प्रतिशत हो गया। उसी प्रकार कनाडा को 1993–94 में हमारे कुल निर्यात का 1 प्रतिशत भाग निर्यात किया गया।

हमारे निर्यात व्यापार में ऐशिया एवं ओशनिया में आस्ट्रेलिया और जापान महत्वपूर्ण देश है। 1998–81 में

हमारे कुल निर्यात का 8.9 प्रतिशसत जापान को नियात किया गया जो कि कम होकर 1993–94 से 7.8 प्रतिशत रह गया। इसी प्रकार 1980–81 में हमारे निर्यात में आस्ट्रेलिया का भाग 1.4 प्रतिशत था जो कि कम होक 1995–96 में 1.2 प्रतिशत रह गया। पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन के साथ हमारे व्यापरिक सम्बन्ध बढ़े हैं। इनमें मुख्य देश हैं– ईरान, ईराक, कुवैत और साउदी अरम। 1980–81 में इन देशों को हम अपने निर्यात का 11.1 प्रतिशत भाग भेजते थे जो कम हाकर 1995–96 में अपने निर्यात प्रतिशत ही भेजा जा सका।

पूर्वीय यूरोप के दशों अर्थात रुमानिया, रुस, जर्मन लाकतन्त्र गणराजय के साथ हमारा व्यापार सम्बन्ध बन रहा है। भारत 1980–81 में इस क्षेत्र को अपने कुल निर्यात का 22.1 प्रतिशत निर्यात किया जो कि कम होक 1995–96 में 3.8 प्रतिशत रह गया। सोवियत संघ के

विधटन के परिणाम स्वरुप इन देशों के साथ हमारे सम्बन्धों में परिर्वतन आ रहा है।

यूरोपीय आर्थिक समुदाय के देशो में जर्मनी का भारत निर्यात व्यापार में महत्वपूर्ण स्थान है। यूरोपीय आर्थिक समुदाय के देशों में से भारत का सबसे अधिक व्यापार इग्लैण्ड के पश्चात जर्मनी के साथ होता है। 1980-81 में भारत से जर्मनी को 5.7 प्रतिशत भाग निर्यात होता था जो एकत्र कर 1995796 में 6.2 प्रतिशत हो गया।

विकासशील देशों अर्थात अफ्रीका ऐशिया तथा लैटिन अमेरिका और कैरेबियन के साथ हमारा व्यापार विकसित हो रहा है। भारत 1980-81 में विकासशील देशों को अपेन कुल निर्यात का 19.2 प्रतिशत भाग निर्यात किया जो बढ़कर 1995-96 में इन देशों के साथ कुल निर्यात का 25.7 प्रतिशत भाग हो गया।

भारत 1998–81 में अन्य देशों को अपने कुल निर्यात का 1 प्रतिशत निर्यात किया जो बढ़कर 1995–96 में 5.1 प्रतिशत हो गया। भारत के व्यापारिक सम्बन्ध विश्व के प्रायः सभी देशों के साथ है। उपरोक्त देशों के अतिरिक्त भारत का निर्यात व्यापार मुख्यतः अरब गणराज्य, कामों, युगाण्डा, ईराक, जार्डन, सऊदी अरब, कुबैत, अफगानिस्तान, हांगकांग, थाईलैण्ड, इण्डोनिशय, सिंगापुर, मलेशिया, ब्राजील तथा अर्जेन्टाइना, आदि देशों के साथ है।

धीरे-धीरे हमारा व्यापार पूर्वीय यूरोप के देशों. आर्थिक समुदाय और अन्य एशियाई देशों के साथ बढ़ता जा रहा है। हमारे विदेशी व्यापार में नै देश महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वे हैं, यू0एस0ए0, यू0के0, जर्मनी, यू0एस0एस0आर, जापान, यू0ए0ई0, साऊदी अरब, आस्ट्रेलिया ओर कनाडा 1951–52 से 1991–92 के

दौरान के साथ हमारा निर्यात 51से 59 प्रतिशत की अभिसीमा में रहा है।

विश्व निर्यात में भारत का भाग बढ़ने के बजाय प्रत्येक वर्ष धीरे-धीरे 1.55 से 0.49 प्रतिश कम हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय निर्यातकों में भारत का स्थान भी प्रत्येक साल नीचे जा रहा है। 1996 में भारत पाचवाँ निर्यातक देश था, लेकिन 1968 में 22 वें स्थान पर और 1972 में 24 वे स्थान पर पहुँच गया। ऊपर देखते हुए यह निश्चित रूप से देखकर कहा जा सकता है। कि भारत के अपने निर्यात में बाधा पहुँच रही है, और भारत के निर्यात विकास के मौके ज्यादा है। कुछ अनुकूल और कुछ प्रतिकूल परिस्थितियासं भारतीय निर्यात पर प्रभाव डाल सकती है। ये परिस्थितियाँ निम्न हैः-

अनुकूल कारणः-

1. भारत के निर्यात वस्तु के लिए क्षेत्र अतिरिक्त बाजर की तरह।

2. चाइना और पाकिस्तान जैसे नये ग्राहक का संकट।

3. मध्यपूर्व और दक्षिण पूर्व देशों में सम्बन्धित सेवाएं और योजनाओं के निर्यात के लिए सही परिस्थित ।

4. विकसित देशों के आयात के लिए एक समान अभिप्राय है। इन देशों मं आय, मांग का लचीलापन निर्यात के लिए ज्याद अच्छे है।

5. ऐसे क्षेत्र जो विकसित देशों द्वारा खाली कर दिये गये हैं जैसे मजदूर, गहन वृद्धि उद्योग, कम अच्छे उत्पाद निर्मित कर रहे हैं, क्योंकि ये माल विकसित देशों द्वारा ज्यादा अच्छे उत्पाद अधिक मात्रा में उत्पादित हो रहे है।

6. प्रतिष्ठा के सामान्य क्रियाओं की उपस्थिति।

7. बहुभुजी व्यापार व्यवहार ये तटकर विहीन कर में कमी, तटकर की कमी में सहायता करते है।, भले जी जी0एस0पी0 को खत्म कर दें! कृषि उत्पाद के लिए अच्छे बाजार और विकसित देशों द्वारा प्रदान किये गये अनुदान का उपयोग करना।

8. 1972 के समझौते के अन्तर्गत विकासशील देशों में प्रतिष्ठाा का विनिमय करना। इन देशों के अर्न्तगत, ब्राजील, कोरिया, स्पेन, मिश्र, युनान, बांग्लादेश, और अन्य दो है।

9. बैंककाक समझौते के अन्तर्गत तटकर समस्य देशों में निर्मित 134 वस्तुओं के लिए व्यापार में कमी कर दी गयी थी।

10. आयात सम्वर्द्धन केन्द्र द्वारा कई देशों में विकासशील देशों के आयात में बढ़ावा मिलता है-जैसे हालैण्ड, यू0के0के0, जर्मनी, स्वीटन।

प्रतिकूल कारणः–

1. विकसित देशों में व्यापार अभी अनिश्चित है।

2. नये औद्योगिकृत देशों से ज्याद प्रतियोगिता के कारण ऊपर उठने की दृष्टि से बचाव करना।

3. विनिमय बाजार में घोर वृद्धि। 1977 से प्रमुख मुद्राएं विनिमय दर में फायदा दिखाती है।

4. अन्य विकासशील देशो से ज्यादा प्रतियोगिता होना।

उसी तरह घरेलू पूर्ति पर समस्या नही है जबकि भारत ने विस्तृत उत्पादन किया है और भारतीय निर्यातक के बीच जागृतता बढ़ रही है। निम्न तत्व उनके निश्चित भविष्य हो बता दे रहे है।–

1. जनसंख्या उपभोग के वस्तु के निर्यातक को पंजीकृत किया गया।

2. भारतीय उद्योग और कृषि के पूर्ण उपयोग के लिए शक्ति की स्वभाविक कमी।

3. वर्तमान समय के दौरान मजबूर सम्बन्ध भाव हो गये हैं।

4. भारतीय निर्यात की प्रतियोगिता को गंभीर रूप से प्रभावित करता है।

5. व्यापार ईकाई का आकार औद्योगिक लाइसेन्सिस नीति भी भारतीय निर्यात को बाधा खडीत्र करती है।

भविष्यः–

किसी वस्तु का निर्यात तभी होगा जब घरेलू आवश्यकताओं की गृह प्रबन्ध की पूति हो सकेगी। इसके सम्बन्ध में यह कहा जा सता है कि निर्यात के लिए उत्पादन को बढ़ाने के प्रभाव और घरेलू बाजार में लोक संघ उपभोग के वस्तु और अन्य जरूरी वस्तु पर प्रतिबन्ध

लगा देना चाहिए। नौवी योजना में निर्यात को सरकार द्वारा प्राथमिकता दी गयी है। उत्पादन परियोजना और सम्बन्धित कार्य के विस्तृत क्षेत्र में नियात व्यूह रचना करनका क्योंकि बाजार अब बन्द हो रहे हैं। बाजार के सभी तत्वों के उत्पादन के स्तर से विस्तृत क्षेत्र आयात का व्यूह रचना शुरू करना चाहिए, जेसे मूल्य सहायता, विपणन सहायता, निर्यात सम्बर्द्धन और प्रचार आदि। निर्यात संसद समिति की स्थापना प्रधानमंत्री की प्रमुखता के अर्न्तगत 1981 में हुई थी, जिसको फिर से जून 1986 में निर्यातक समुदाय के अर्न्तगत विश्वास उत्पन्न करने के लिए किया गया है ताकि निर्यात ऊँची प्राथमिकता के साथ स्वीकार किया जाय। संसद समिति नियात को नयी दिशा प्रदान करता है ओर भारतीय निर्यात वस्तुओं को पूँजीगत करने में सहायता करता है। उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निम्न उपाय शुरू किये गये हैं ताकि हमारे गृह प्रबन्ध के विभिन्न तत्वों को बढ़ाया जा सके।

1. शत प्रशित निर्यात को मुक्त व्यापार क्षेत्र सुविधा प्रदान करना।

2. लाइसेन्स क्षमता केउद्देश्य के लिए निर्यात उपाद को बढ़ाना।

3. निर्यात उद्योग को एम0आर0टी0पी0 नियंत्रण मुक्त करना।

4. निर्यात उत्पादन के लिए तकनीक आयात को पक्ष में करना जो राजस्व भुगतान में सहायता प्रदान करते हैं।

5. निर्यात उत्पादन के लिए क्षमता में स्व0 वृद्धि।

6. प्रतिबन्ध में चुंनिन्दा छेट।

7. निर्यात उद्योग के सम्बन्ध में विदेशी निजी का 40 प्रतिशत छूट देना।

8. निर्यात के लिए कम्पनियों से विपणन सहायता की आज्ञ देना।

9. सरकान ने एक आयात और निर्गत ब ाक की स्थापना निर्यात व्यवसाय की वित्तीय आवश्कताओं की पूर्ति के लिए किया।

ऊपर दिये गये कदम सही दिशा में हैं और निश्चित रूप से निर्यात में सहायता प्रदान करेगे लेकिन इन उपायों की सफलता उनेक जल्द और सही वितरण पर निर्भर करता है। हमारे देश के निर्यात व्यापार लगातर बढ़ रहे हैं, यह संरचना और सही दिशा सुनिश्यिचत करता है। यह सचमुच एक बहुत सनतोषजनक प्रापित है। और हमारी क्षमता के बारे में बताती है। और भारत के भविष्य के निर्यात के लिए प्रतिज्ञा करती है।

वास्तव में हमारे निर्यात को एक नया आयाम देने की आवश्यकता है और वह है कृषि उत्पादों का निर्यात। कृषि उत्पाद, कृषि आधारित उत्पाद, समुन्द्री उत्पाद से हम भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकते हैं।[31]

---

31. डा0 ए0 ए0 सिद्दीकी, अवर एग्रीकल्चर ट्रेड इन पोस्ट ग्लोब लाइजेशन इरा, 2002

विकसित देशों द्वारा किसी सहायता कम करने के बाद हमारे कृषि उत्पादों की बिक्री सम्भावना बढ़ जायेगी। अगले दो दशाब्दियों में एशिया और पैसिफिक देशों में हमारे कृषि उत्पादों की मांग बढ़ेगी । खाद्य पदार्थों की मांग जापान मलेशिया से आयेगी । बासमती चावल के लिए सऊदी अरब, ओमान, कुवैत एक अच्छा बाजार साबित होगा, सिंगापुर और पश्चिम एशिया में हमारे फल और सब्जियों की खपत बढ़ेगी। हमारे समुद्री उत्पाद के लिए जापान और कोरिया एक अच्छा बाजार शाबित होगा। फास्ट फूड के निर्यात के द्वारा भारत को प्रतिवर्ष 2000 करोड़ रूपये की आय का अनुमान है।

उपसंहार

भारतीय विदेशी व्यापार में विश्व व्यापार संगठन का योगदानः–

आर्थिक क्रियाएँ एक दूसरे पर आश्रित रहती है। भारतीय विदेशी व्यापार का लम्बा इतिहास रहा है। परन्तु विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के बाद सभी देशों, भारत को भी, के व्यापार को भी नये आयाम मिले है। गैट की स्थापना वास्तव में विश्व व्यापार की कठिनाइयों को दूर करने के लिए की गई थी।

हाल में आयी सांसारीकरण की नीति ने विश्व व्यापार को नई दिशा और नये आयाम दिये है। राष्ट्रो के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ढाँचे में महत्वपूर्ण परिवर्तन आये है, व्यापार के मार्ग के रूकावटे लगभग हटा दी गयी है, विनिमय नियंत्रण लगभग समाप्त हो गया है। अब राष्ट्रों के लिए आवश्यक हो गया है कि वह अपने व्यापार को प्रतियोगी

बनाये और विश्व आर्थिक ढाँचे में आये, परिवर्तनों का शीघ्रातिशीघ्र एवं अधिकाधिक लाभ उठायें।

भारत के विदेश व्यापार का एक लम्बा इतिहास है। यातायात और संचार के विकास के कारण व्यापार में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। 15अगस्त 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बाद भारत भी विश्व व्यापार संगठन का एक स्वतन्त्र सदस्य बन गया। स्वतन्त्रता के पूर्व देश के आयात और निर्यात की दृष्टि से जो नीतियाँ अपनायी जा रही थी, उनका उद्देश्य विट्रिश साम्राज्य को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाना था, किन्तु स्वतन्त्रता के बाद भारत के विदेशी व्यापार का उद्देश्य देश का औद्योगिक विकास एवं जीवन स्तर की प्रगति बन गया। विदेशी व्यापार के लक्ष्य में मूलभूत परिवर्तन होने के कारण उसके आयात और निर्यात की मात्रा, रचना एवं दिशाओं में भी उल्लेखनीय परिवर्तन हुए।

1947 के बाद भारत के निर्यात व्यापार में अनेक परिवर्तन हुए है। देश की अर्थव्यवस्था की उचित आधार प्रदान करने के लिए देश के निर्यातों को बढ़ाने की दिशा में विभिन्न

प्रयास किये गये। भारत के निर्यात व्यापार में अनेक परिवर्तन हुए है।

विश्व व्यापार संगठन की स्थापनाः—

विश्व व्यापार संगठन की स्थापना इसके पूर्ववर्ती 'गैट' की उरूग्वे चक्र की लम्बी वार्ता (1986–93) के परिणामस्वरूप हुई थी। इसकी स्थापना के लिए उरूग्वे चक्र के समझौते पर मोरक्कों के मराकश नगर में अप्रैल 1994 में गैट के सदस्य राष्ट्रों ने हस्ताक्षर किये थे। 1 जनवरी 1999 से इसकी विधिवत स्थापना हो गई तथा इसने विश्व व्यापार में नियमन के लिए एक औपचारिक संगठन के रूप में गैट का स्थान ले लिया। गैट एक अनौपचारिक संगठन के रूप में ही 1948 में विश्व व्यापार का नियमन करता चला आ रहा था।

गैट की अस्थायी प्रकृति के विपरीत विश्व व्यापार संगठन एक स्थायी संगठन है तथा इसकी स्थापना सदस्य राष्ट्रो की संसदों द्वारा अनुमोदित एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व

विश्व बैंक के तुल्य ही है, किन्तु मुद्रा कोष व विश्व बैंक की भांति यह संयुक्त राष्ट्र संघ की एक एजेन्सी नहीं है।

विश्व व्यापार संगठन का प्रशासनः—

विश्व व्यापार संगठन के कार्य संचालन के लिए एक सामान्य परिषद है जिसमें प्रत्येक सदस्य राष्ट्र का एक स्थायी प्रतिनिधि होता है, इसकी बैठक सामान्यतः माह में एक बार जेनेवा में होती है। विश्व व्यापार संगठन में नीति निर्धारण करने हेतु सर्वोच्च अधिकार प्राप्त इसका मंत्रिस्तरीय सम्मेलन है मंत्रिस्तरीय सम्मेलन का आयोजन प्रत्येक दो वर्ष पर होताा है। दिन प्रतिदिन के प्रशासकीय कार्यो को संचालन करने के लिए संगठन का सर्वोच्च पदाधिकारी महानिदेशक होता है सामान्य परिषद द्वारा महानिदेशक का चुनाव चार वर्ष के लिए किया जाता है। न्यूजीलैण्ड के पूर्व प्रधानमंत्री माइकलूर को 1 सितम्बर 1999 से तीन वर्ष के लिए डब्लू0टी0ओ0 का महानिदेशक बनाया गयाा था। फिर 1 सितम्बर 2002 में तीन वर्षो के लिए अर्थात 1 सितम्बर 2005 तक के लिए

यह पद थाइलैण्ड में उपप्रधानमंत्री सुपाचाई पाकिचपाकड़ी को दे दिया गया है।

मुख्यालय एवं सदस्यता:-

अपने पूर्ववर्ती 'गैट' की भाँति विश्व व्यापार संगठन का मुख्यालय भी जेनेवा मे ही है। सिंगापुर में पहला मंत्रिस्तरीय सम्मेलन आरम्भ होने से पूर्व इसकी सदस्य संख्या 128 थी सितम्बर 2001 तक इसकी सदस्य संख्या बढ़कर 144 हो गयी।

सम्बद्ध समितियाँ :-

विश्व व्यापार संगठन के कार्य संचालन हेतु अनेक महत्वपूर्ण समितियाँ है, सर्वाधिक महत्वपूर्ण दो समितियाँ है- (1) विवाद निवारण समिति (2) व्यापार नीति समीक्षा समिति विवाद निवारण समिति का कार्य विभिन्न राष्ट्रो के विरुद्ध विश्व व्यापार संगठन के व्यापार क्रियाओं में उल्लंघन की शिकायतों पर विचार करना है। सभी सदस्य देश इस समिति के सदस्य होते है। किन्तु किमी शिकायत विशेष संगठन

अध्ययन के लिए विशेषज्ञों की समिति गठित कर सकती है। इस समिति की बैठक माह में दो बार होती है।

व्यापार नीति समीक्षा समिति का कार्य सदस्य राष्ट्रो की व्यापार नीति की समीक्षा करना है, सभी बड़ी व्यापारिक शक्तियों की व्यापार नीति की दो वर्ष में एक बार समीक्षा की जाती है। संगठन के सभी सदस्य राष्ट्र इस समिति के सदस्य होते है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त विश्व व्यापार संगठन की अन्य महत्वपूर्ण समितियाँ वस्तु व्यापार परिषद, सेवा व्यापार परिषद तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के व्यापार सम्बन्धी पहलुओं पर परिषद आदि है।

विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्यः-

डब्लू0टी0ओ0 के उद्देश्य निम्नलिखित हैः-

(1) जीवन स्तर में वृद्धि करना।

(2) पूर्ण रोजगार एवं प्रभावपूर्ण मार्ग में वृहतस्तरीय, परन्तु ठोस वृद्धि करना।

(3) वस्तुओं के उत्पादन एवं व्यापार का प्रसार करना।

(4) सेवाओं में उत्पादन एवं व्यापार का प्रसार करना।

(5) विश्व में संसाधनों का अनुमूलतम उपयोग करना।

(6) अविरत विकास की अवधारणा में स्वीकार करना।

(7) पर्यावरण का संरक्षण एवं उसकी सुरक्षा करना।

विश्व व्यापार संगठन के कार्य :-

विश्व व्यापार संगठन के कुछ महत्वपूर्ण कार्यो का उल्लेख निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है:-

(1) विश्व संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करना।

(2) विवादों के निपटारे से सम्बन्धित नियमों एवं प्रेक्रियाओं को प्रशासित करना।

(3) व्यापार नीति समीक्षा प्रकिया से सम्बन्धित नियमों एवं प्रावधानों को लागू करना।

(4) व्यापार एवं प्रशुल्क से सम्बन्धित किसी भी भावी मसले पर सदस्यों के बीच विचार–विमर्श हेतु एक मंच के रूप में कार्य करना।

(5) विश्व व्यापार समझौता एवं बहुपक्षीय तथा बहुवचनीय समझौते के कार्यान्वयन, प्रशासन एवं परिचालन हेतु सुविधाएँ प्रदान करना।

(6) वैश्विक आर्थिक नीति निर्माण में अधिक सांमजस्य भाव लाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष एवं विश्व बैंक से सहयोग करना।

डब्लू0टी0ओ0 का पहला मंत्रिस्तरीय सम्मेलनः–

डब्लू0टी0ओ0 का पहला मंत्रिस्तरीय सम्मेलन 9–13 दिसम्बर 1996 को सिंगापुर में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में विकसित एवं विकासशील देशों के मध्य शीत युद्ध से ग्रसित दोनो ही पक्ष अपने हितों की सुरक्षा हेतु लाँबिग में संलग्न रहे। सम्मेलन में विचारणीय प्रमुख मुद्दो में श्रम मानकों, निवेश तथा प्रतिस्पर्धाओं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को जोड़ने के विषय शामिल थे। टेक्सटाइल्स तथा सूचना

प्रौद्योगिकी में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी विचारणीय मुद्‌दों में थे। भारत सहित विकासशील राष्ट्र जहाँ श्रम मानकों को अन्तर्राट्रीय व्यापार में जोड़ने के विरोध में थे। वहीं अमेरिका के नेतृत्व में विकसित राष्ट्र इन्हे सह सम्बन्धित करने के बड़े पक्षधर थे। भारत का कहना था कि श्रम मानक विश्व व्यापार संगठन की नही, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की विषयवस्तु है। निवेश सम्बन्धी मामलों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जोड़ने का भी भारत द्वारा विरोध किय गया, पाँच दिन तक चले इस सम्मेलन में विकसित व विकासशील दोनों ही राष्ट्रो ने कुछ न कुछ उपलब्धियाँ हासिल करने में सफलता प्राप्त की थीं विकासशील राष्ट्रों के लिए संतोष कीमत यह रही है कि घोषणापत्र में श्रम मानकों के उल्लेख के बावजूद इसे अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ का विषय स्वीकार किया गया तथा यह स्पष्ट किया गया कि विकासशील राष्ट्रो के व्यापार को प्रतिबन्धित करने के लिए श्रम मानकों का प्रयोग नहीं किया जायेगा। निवेश तथा प्रतिस्पर्धा के मुद्‌दों को व्यापार से जोड़ने के मामलों में विकसित राष्ट्रों का पलड़ा भारी रहा। घोषणा

पत्र में यह कहा गया है कि निवेश तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध में विवाद को ट्रिक्स के तहत हल किया जायेगा।

डब्लू0टी0ओ0 को चौथा मंत्रिस्तरीय सम्मेलनः-

दोहा (कतर) में 9-13 नवम्बर, 2001 को अयोजित विश्व व्यापार संगठन का चौथा मंत्रिस्तरीय सम्मेलन विभिन्न मुद्दों पर सदस्य राष्ट्रों की सहमति के लिए एक दिन आगे बढ़ना पड़ा। अतः इसका समापन 14 नवम्बर, 2001 को हुआ। 142 सदस्य राष्ट्रों के वाणिज्य मंत्रियों में इस सम्मेलन में कृषि, सेवाओं व औद्योगिक उत्पादों के व्यापार में विस्तार एवं पर्यावरण सम्बन्धी मुद्दो पर नये सिरे से कर्ता के दौर प्रारम्भ करने में सहमति अन्ततः छठे दिन ही बन सकी। इसके एजेन्डे (दोहा डेवलपमेन्ट एजेन्डे) को स्वीकार किया जाना विकासशील राष्ट्रो केवल यूरोपीय संघ एवं अमरीका के लिए ही अधिक लाभदायक माना जा रहा है। इस मामले में भारत की मुख्य आपत्ति चार सिंगापुर मुद्दों को लेकर थी, इनमें विदेशी निवेश व प्रतिस्पर्धा नीति के सम्बन्ध में नये वैश्विक नियमों के निर्धारण सरकारी परियोजनाओं के लिए समान की खरीद में विदेशी कम्पनियों को अवसर, गैट का

मुख्य उद्देश्य वस्तु व्यापार में प्रतिस्पर्धा को सुनिश्चित करने के लिए व्यापार अवरोधों की समाप्ति या उन्हें कम करना था। गैट के अधीन बात-चीत में पहले सात दोरों का उद्देश्य व्यापार अवरोधकों को कम करके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करना था।

बहुपक्षीय व्यापार कर्ता का आठवाँ दौर सितम्बर 1986 में गैट के सदस्यों में मंत्री स्तर पर कर्ता के रूप में एक विशेष अधिवेशन में शुरू हुआ, पिछले चार दशकों के दौरान विश्व व्यापार में 1948 के पश्चात गैट की स्थापना के बाद संरचनात्मक परिवर्तन हुए है। 1950 में विश्ववस्तु व्यापार में कृषि का भाग 46 प्रतिशत था जो कम होकर 1987 में 13 प्रतिशत रह गया, इसके साथ विकसित देशों के सकल देशीय उत्पाद के विभिन्न क्षेत्रों में योगदान और रोजगार के ढाँचे में गुणात्मक परिवर्तन हुआ है। विकसित देशों के सकल देशीय उत्पाद में सेवा क्षेत्र का भाग तेजी से बढ़ रहा है। यह 1986 में सकल देशीय उत्पाद की 50 से 70 प्रतिशत की अभिसीमा में था। रोजगार के रूप में भी सेवा क्षेत्र का महत्व बढ़ता जा रहा था। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका में सेवा

क्षेत्र द्वारा सकल देशीय उत्पाद में लगभग दो तिहाइ योगदान दिया गया और रोजगार के रूप में यह कुल श्रम शक्ति में 70 प्रतिशत से भी अधिक था। 1980 में संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा सेवाओं के रूप में 3500 करोड़ डालर का निर्यात किया गया। वस्तु क्षेत्र में तुलनात्मक लाभ जापान एवं कई अन्य नव औद्योगिकृत देशों के पक्ष में परिवर्तित हो गया। इन सभी कारण तत्वों के परिणामस्वरूप यू0एस0ए0 के नेतृत्व में विकसित देशों ने सेवा–क्षेत्र को व्यापारिककर्ता के अधीन लाने की पहल की।

बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों का भारतीय अर्थ व्यवस्था पर प्रभावः–

कुछ आलोचकों का विचार है कि बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों कार्यो, गैट–सन्धि में सन्नहित है, भारतीय अर्थ व्यवस्था पर सर्वनाशी प्रभाव होगा, ऐसा विशेष कर दो क्षेत्रों में होगा, औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र में। ये दोनो क्षेत्र जन कल्याण पर प्रभाव डालते है। पेटेन्ट संरक्षण का विस्तार सूक्ष्म जीवों, गैट जैविक और सूक्ष्म जैविक क्रियाओं औद्योगिकी

विभिन्न किस्में तक किया जा सकता है इसका अर्थ यह है कि समग्र औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र और एक हद तक जीव तक पेटेन्ट की शर्तो के अधीन आ जायेगा। पेटेन्ट संरक्षण में एक बहुत ही खतरनाक शर्त लगायी गयी है और इसका सम्बन्ध पेटेन्ट प्रणाली के मूल दर्शन में परिवर्तन करना है। जिसके अनुसार वस्तुएँ चाहे वे आयात की जाये या देश में बनायी जाय, बिना किसी भेद भाव के पेटेन्ट के संरक्षण के अधीन होगी। तात्पर्य है कि पेटेन्ट प्रणाली न केवल उत्पादन एकाधिकार स्थापित करना चाहती है बल्कि यह आयात एकाधिकार भी कायम करना चाहती है। आलोचकों का मत है कि पेटेन्ट प्रणाली दवाइयाँ पर गम्भीर रूप में प्रभाव डालेगी। आज तो परिस्थिति यह है कि इनकी कीमतें बहुत नीची है, अच्छा हुआ भारतीय पेटेन्ट अधिनियम जो 1970 में पास किया गया, इस कानून को पारित होने के पश्चात भारतीय औषधालय एवं दवाई उद्योग ने तेजी से प्रगति की। और वह जीवन रक्षक दवाइयाँ बहुत सस्ते दामों पर उपलब्ध करा सका, इसके अतिरिक्त

यह 1996-97 में 2386 करोड़ रूपये की विदेशी मुद्रा भी अर्जित कर सका। श्री बी0के0 कोयाला के अनुसार "लगभग 70 प्रतिशत दवाइयाँ नये पेटेन्ट कानूनों के अधीन रहेगी, परिणामतः बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के अधीन पेटेन्ट धारियों को भारी राशि का भुगतान करना होगा और इसके फलस्वरूप भय यह हे कि दवाइयों की कीमतें 5 से 10 गुना बढ़ जायेगी।" आज भारत की जनसंख्या का केवल 30 प्रतिशत आधुनिक दवाइयाँ खरीद सकता है, और यदि गैट सन्धि स्वीकार कर ली जाती है, तो लगभग 20 प्रतिशत अतिरिक्त जनसंख्या स्वास्थ्य की दृष्टि से इनसे वंचित हो जायेगी। इस प्रकार केवल 10 प्रतिशत जनसंख्या की पहँच ही आधुनिक दवाइयों तक शेष रह जायेगी। ऐसी नीति में हमारी जनसंख्या के लिए खतरनाक परिणाम हो सकते है।

व्यापार सम्बन्धित निवेश उपाय एवं इनका भार तथा प्रभावः-

व्यापार सम्बन्धित निवेश उपाय संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा 1980 में चालू किये गये और इसी ने इस

विचार को गैट के आठवें दौर की कर्ता ने आगे बढ़ाया। इसका मुख्य उद्देश्य बहुराष्ट्रीय निगमों को लाभ पहुँचाया था। ताकि वे वित्तीय सेवाओं, टेली संचार, विपणन में निवेश कर सके जिससे विश्व व्यापार को प्रोत्साहन मिले।

व्यापार सम्बन्धित निवेश उपायों की विषय वस्तु का मुख्य प्रावधान यह सुनिश्चित करता है कि सरकारें विदेशी पूँजी के साथ भेदभाव नहीं करेगी। दूसरे शब्दों में यह प्रावधान सदस्य देशों को विदेशी पूँजी के लिए राष्ट्रीय व्यवहार देने के लिए मजबूर करता है। इस उपायों के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैः-

(1) विदेशी पूँजी/विनियोक्ताओ/कम्पनियों पर लगाये गये सभी प्रतिबन्ध समाप्त कर देने चाहिए।

(2) विदेशी विनियोक्ता को विनियोग के बारे में वही अधिकार प्राप्त होगें जो कि राष्ट्रीय विनियोक्ता को प्राप्त है।

(3) निवेश के किसी भी क्षेत्र पर कोई भी प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायेगा।

(4) न ही विदेशी निवेश के विस्तार पर कोई सीमा बन्धन होगा 100 प्रतिशत विदेशी इक्विटी की भी इजाजत देगी।

(5) कच्चे मालों एवं हिस्सों का आयात मुक्त रूप में करने की इजाजत होगी।

(6) विदेशी विनियोग्ताओं पर स्थानीय उत्पाद एवं सामग्री के इस्तेमाल करने की पाबन्दी नहीं होगी।

(7) लाभांश, व्याज और रायल्टी के देश प्रत्यावर्तन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा।

(8) क्रमिक विनियोग प्रोग्राम जैसे प्रावधानों को जिनका उद्देश्य विनिर्माण में देशीय अंश को बढ़ावा देना है, पूर्णतया समाप्त कर दिया जायेगा।

विश्वीकरण और इसका भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभावः-

आर्थिक सुधार के पैकेज में विश्वीकरा एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि

विश्वीकरण की धारणा में किन बातों का समावेश है। अर्थशास्त्रियों के अनुसार विश्वीकरण के चार अंग हैः-

(1) व्यापार अवरोधकों को कम करना ताकि वस्तुओं का विभिन्न देशों में बेरोक-टोक आदान-प्रदान हो सके।

(2) ऐसी परिस्थितियाँ कायम करना जिसमें विभिन्न राज्यों में पूँजी का स्वतंत्र रूप से प्रवाह हो सके।

(3) ऐसा वातावरण कायम करना कि टेक्नालॉजी का निर्वाध प्रवाह हो सके।

(4) अन्तिम परन्तु विकासशील देशों की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं।

(5) ऐसा वातावरण कायम करना जिससे विश्व में विभिन्न देशों में श्रम का निर्वाध प्रवाह हो सके।

प्रदान करने तथा व्यापारिक नियमों को सरल बनाने के मुद्‌दे शामिल थे। मंत्रिस्तरीय सम्मेलन में स्वीकार किये गये दोहा घोषणा पत्र में भारत ने अपनी मंजूरी तभी प्रदान की जब सम्मेलन के अध्यक्ष शेख युसुफ हुसैन कामल (कतर

के वाणिज्य, वित्त एवं आर्थिक मामलों के मंत्री) ने यह घोषणा की कि उपर्युकत चारो विवादित मुद्दों पर बातचीत सदस्य राष्ट्रो की सहमति हो जाने पर ही पाँचवे मंत्रिस्तरीय सम्मेलन के बाद शुरू होगी।

डब्लू0टी0ओ0 से लाभः-

(1) दोहा डेबलपमेन्ट एजेन्डे पर बातचीत 2005 तक पूरी करने का लक्ष्य यद्यपि घोषणा पत्र में निर्धारित किया गया है, तथापि यह उच्च तौर पर स्वीकार किया जा रहा है कि यह 2007 से पहले पूरी नही हो सकेगी, यह बातचीत जनवरी 2002 से ही प्रारम्भ हो चुकी है।

(2) सम्मेलन में भारत के नेतृत्व में विकासशील राष्ट्रो को एक बड़ी सफलता जनस्वास्थ्य सम्बन्धी औषधियों के उत्पादन एवं अधिग्रहण के मामले में मिली है।

(3) एच0आई0वी0/एड्स टी0वी0 व मलेरिया आदि रोगों से जनसंख्या की सुरक्षा के लिए औषधियों के उत्पादन के मामले में विश्व व्यापार संगठन के ट्रिप्स एवं पेटेन्ट सम्बन्धी नियम अब आड़े नही आ सकेगें।

(4) इससे कोई भी देश जनस्वास्थ्य के लिए पेटेन्ट शुदा दवाओं का सस्ता उत्पादन करने के लिए किसी भी कम्पनी को लाइसेन्स दे सकेगा।

(5) कृषि के क्षेत्र में डोमेस्टिक सपोर्ट तथा निर्यात सब्सिडी में कटौती का प्रस्ताव दोहा घोषणा-पत्र में शामिल किये जाने से विकासशील राष्ट्रों में किसान लाभान्वित हो सकेगें।

(6) डब्लू0टी0ओ0 में भारत को भी लाभ होगा।

(7) 1994-95 में अमेरिका को साफ्टवेयर का निर्यात द्वारा 26 करोड़ रूपये। 1999-2000 में 400 करोड़ रूपये का निर्यात किया गया।

(8) सम्मेलन में भारत को व्यापार सम्बन्धी बौद्धिक सम्पदा अधिकार समझौते में शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में पेटेन्ट एकाधिकार को तोड़ने का अधिकार पाने में सफलता मिल गयी। इससे भारतीय दवा कम्पनियों का खासा मुनाफा होगा।

(9) चीन में डब्लू0टी0ओ0 में आ जाने में हमारा साफ्टवेयर और कृषि क्षेत्र का व्यापार बढ़ेगा।

(10) डब्लू0टी0ओ0 ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में नये विशेषाधिकारों को स्थापित कर दिया है। इसमें पेटेन्ट का विशेषाधिकार प्रमुख है।

(11) डब्लू0टी0ओ0 के अन्तर्गत क्षेत्रीय समझौते में विशेषाधिकार को मान्यता मिली हुई है।

(12) अमेरिका, कनाडा एवं मैक्सिको ने आपस में एक खुला व्यापार समझौता नाफ्टा के नाम कर रखा है। इन देशों का उत्पाद एक दूसरे देश में भेजने पर लगभग शून्य आयात कर लगता है।[1]

(13) डब्लू0टी0ओ0 के अन्तर्गत पूरा विश्व एक बाजार बन जायेगा। जिससे हर देश को दूसरे दूसरे देश में माल भेजने का बराबर अधिकार होगा।

(14) बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विशेषाधिकारों में भारी वृद्धि हुई है।

---

[1] – अमर उजाला – नवम्बर 11, 2001

डब्लू0टी0ओ0 की कमियाँ :-

(1) डब्लू0टी0ओ0 का मतलब है " We Take over" ऐसा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के व्यवहार से लगता है बड़ा कम्पनियाँ छोटी कम्पनियों को निगलती जा रही है। उपभोक्ता सामान से लेकर पूँजीगत वस्तुओं तक के सन्दर्भ में छोटे उद्योगों को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से करारी मात मिल रही है और उनका अस्तित्व खतरे में पड़ गया है।

(2) कानर एण्ड कम्पनी द्वारा तैयार की गयी रिपोर्ट के आधार पर यूरोप और अमेरिका अगले पचास सालों तक भी कृषि क्षेत्र को दी जाने वाले सब्सिडी नही घटायेगें। इस रिपोर्ट का अध्ययन भारतीय केन्द्र सरकार कर रही है।[1] Against W.T.O. Provisions विकसित देशों में कृषि सब्सिडी बढ़ रही है, सबसे धनी विलियन Trading Block Organisation for Economics Corporation (DFCD) प्रतिदिन कृषि को अमरीकी डालर की महत्वपूर्ण मतदाता है। अमरीकी सरकार में नये कृषि विधेयक जो काँग्रेस में लम्विबत है के तहत वादा किया

---

1 – अमर उजाला – नवम्बर 24, 2001

है कि वह आने वाले 10 वर्षो में अपने किसानों को 170 विलियन डालर की सहायता से अतिरिक्त रूप से होगी।

(3) 2000 में विश्व व्यापार में 12 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी के 2001 में 2 प्रतिशत शेष का अनुमान है। शायद विश्व व्यापी मन्दी एवं वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर गिरने का भी नाम हो सकता है।[1] विश्व व्यापार संगठन को इस निराशा का हक ढूँढ़ने का प्रयत्न करना होगा।

(4) विश्व व्यापार संगठन के महानिदेशक माइकमूर ने दावा किया है कि डब्लू0टी0ओ0 विशेषाधिकारों के खिलाफ है। यह सही है मुक्त व्यापार ने सरकारों के लिए ऊँचे टैक्स लगाना अथवा दूसरे प्रकार में आर्थिक शोषण करना कठिन हो सकता है।[2]

(5) भूर का यह कथन सही है कि खुले व्यापार में राष्ट्रीय नेताओं, नौकरशाहों एवं उद्यमियों में विशेषधिकार समाप्त हो जाते है, पन्द्रह वर्ष पूर्व अपने देश में केवल एम्बेसडर कार, प्रीमियम तथा स्टैण्डर्ड और बनती थी। सभी खटारा थी। 1

1- अमर उजाला नवम्बर 30, 2001

2- अमर उजाला नवम्बर 6, 2001

लीटर पेट्रोल में 10 से 13 किमी ही चलती थी। 50,000 किमी चलने के बाद उनका इंजन खुलवाना पड़ता था। कारण यह था कि कार निर्माता कम्पनियों में विशेषाधिकार को सरकार ने स्थापित कर रखा था, कार का आयात प्रतिबन्धित था। देश के कार निर्माता चाहे जैसी कार का उत्पादन करें, वे उनके लिए मनचाहा मूल्य वसूल सकते थे।

(6) नये दौर के कर्ताओं के लिए एजेन्डे में समझौते में सबसे बडी कार वस्तु उद्योग को लेकर आ रही है। भारत, पाकिस्तान, बाँग्ला देश विकसित देश खासकर अमेरिका और कनाडा के बाजारों में वस्त्र उत्पादों के लिए खोलने पर और दे रहे है।[1]

(7) एक समस्या यह भी है कि नवम्बर में डब्लू0टी0ओ0 की दोहा की बैठक में नये चक्र की वार्ता करने का प्रस्ताव जोर पकड़ रही है।[2]

---

1 – अमर उजाला – नवम्बर 14, 2001
2 – – अमर उजाला – 6 नवम्बर, 2001

(8) वर्तमान में डब्लू0टी0ओ0 के नियमों के अन्तर्गत माल बनाने में हई पर्यावरण की क्षति के आधार पर प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं।

(9) हमारे देश की मछली पर अमेरिका ने यह कहकर प्रतिबन्ध लगाया था कि उन्हे पकड़ने के दौरान मछुए भी मारे जाते थे। डब्लू0टी0ओ0 के अन्तर्गत इस अमेरिकी प्रतिबन्ध को गैरकानूनी ठहराया गया है।

(10) औद्योगिक देश चाहते हैं कि ऐसे पर्यावरण में मुद्दे को शामिल करके वे अपने घरेलू व्यापार में हमारे निर्यात में से सुरक्षित रख लें। इसी तरह औद्योगिक देश प्रतिस्पर्धा एवं निवेश नीति को लागू करना चाहते है। इसके अन्तर्गत बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को हमारे देश में घुसने की छूट मिल जायेगी। हमारी राष्ट्रीय सरकार देश हित में उन्हें अपने से नही रोक पायेगी।

(11) हमारे देश की सरकार माल खरीदते समय घरेलू उत्पादन को प्राथमिकता नहीं दे सकेगी।

(12) हमारे निर्यातों को यह कहकर रोका जा सकेगा कि उनके उत्पादन में श्रमिकों को पर्याप्त वेतन नहीं दिये गये हैं।

(13) डब्लू0टी0ओ0 के अन्तर्गत भारत को मिल रही यह छूट समाप्त कर दी गयी। भारतीय कम्पनियाँ अब सस्ती दवाइयाँ नही बेच सकती है, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का अब तकनीकों पर विशेषाधिकार स्थापित हो गया है, इसी दृष्टिकोण से अर्थशास्त्री जगदीश भगवती ने डब्लू0टी0ओ0 को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की रायल्टी वसूल संस्था का नाम दिया था।[1]

(14) माइकमूर इन नये विशेषाधिकारों की चर्चा नही करते है, वह हमें भ्रमित करने का प्रयास कर रहे हैं, आँशिक सत्य बताकर बड़ा झूठ बोल रहे हैं।

पोट्टा में विकासशील देशों के विरोध के कारणः-

(1) अभी तक पुरानी शर्तो का कार्यान्वयन नही हुआ है कृषि क्षेत्र में सब्सिडी खत्म करने के अलावा भी एक शर्त यह थी कि कपड़ा उत्पादन देशों के लिए विकसित देशों के व्यापार

---

[1] – अमर उजाला – नवम्बर 6, 2001

खोल दिये जायेंगे लेकिन अभी तक इस पर अमल नही हुआ, इन दो मुद्दों पर विकसित देशों का रवैया स्पष्ट नहीं हैं।

वर्तमान सम्मेलन में (1) विकासशील देशों ने एक मुद्दा यह उठाया कि एच0आई0वी0 एड्स मलेरिया एण्ड टी0वी0 जैसी बीमारियों के इलाज के लिए सस्ती दवाएँ उपलब्ध कराने हेतु उन्हें पेटेन्ट कानूनों में छूट मिलनी चाहिए, Amirica does not Agree says that सस्ता दर पर देगें आर एण्ड डी प्रभावित होगा।

(2) निवेश के मामले में विकासशील देशों में एम0एन0सी0 (बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ) व अपने घरेलू उद्योगों के लिए एक जैसी नीति बनाने की बात कही जा रही है। (मलेशिया में उद्योगों का लाभ अपने ही देश के लोगों को दिया जाता है।[1]

कृषि उत्पादों में वर्ष 1998–99 में 2919 मिलियन अमेरिकी डालर आयात की तुलना में निर्यात 6037 मिलियन अमरीकी डालर वर्ष 1999–2000 में 2858 मिलियन अमेरिकी डालर आयात की तुलना में निर्यात 5608

---

[1] – अमर उजाला – नवम्बर 13, 2001

मिलियन अमेरिकी डालर तथा वर्ष 2000–2001 में कृषि उत्पाद आयात 1858 मिलियन अमेरिकी डालर की तुलना में कुल कृषि उत्पाद निर्यात 6004 मिलियन अमेरिकी डालर रहा। वर्तमान समय में भारत विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा गेहूँ निर्यातक देश बन गया है। गेहूँ विश्व कारोबार में गिरावट के बावजूद इस समय करीब 20 देश भारत से गेहूँ का आयात कर रहे हैं।[1]

कम्प्यूटर के क्षेत्र में भी असीम सम्भावनाएँ है, क्योंकि इस समय पूरे विश्व की नजर भारतीय कम्प्यूटर उद्योग पर टिकी हुई है। कच्चे माल तथा प्रौद्योगिकी की उपलब्धता होने के साथ–साथ भारत में कुशल तकनीकी विदों की भरमार है। भारत सरकार की घोषणा के अनुसार सन् 2003 तक प्रत्येक स्कूल, पालीटेक्निक कालेज और विश्व विद्यालयों में इन्टरनेट सुविधा उपलब्ध कराने तथा अगले पाँच वर्षो में विदेशी व्यापार की दृष्टि से साफ्टवेयर विकास में 60 प्रतिशत वृद्धि की आशा की गयी है। जिसमें सन् 2008 तक प्रतिवर्ष 50 अरब अमेरिकी डालर के साफ्ट वेयर निर्यात आय प्राप्त

---

[1] – दैनिक समाचार पत्र हिन्दुस्तान, दिनांक 7.7.2002

करने का लक्ष्य है। इस प्रकार विल गेट्स के अनुसार यह वातावरण भारत को साफ्टवेयर के क्षेत्र में सुपरपावर बना देगा। वर्तमान में हमारा साफ्टवेयर निर्यात लगभग शतप्रतिशत के हिसाब से प्रतिवर्ष बढ़ रहा है। विश्व की अर्थव्यवस्था नम्बर दो जापान को हम साफ्टवेयर का निर्यात कर रहे है। वर्ष 1994-95 में 26 करोड़ रूपये साफ्टवेयर के निर्यात के स्थान पर वर्ष 1999-2000 में 400 करोड़ रहा, वहीं हमारा हार्डवेयर निर्यात जो 1999-2000 में 600 करोड़ का था, 2000-2001 में 1250 करोड़ रूपये तक पहुँच गया।[1]

हाल में वर्षो में आयात निर्यात नीति में कई प्रकार के उपायों का उल्लेख किया गया है। कुछ कर रियायतें दी गयी है, कुछ कार्य प्रणालियों को युक्ति युक्ति बनाने का प्रयास किया गया है, मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटा दिया गया है और विशेष आर्थिक क्षेत्र को और अधिक प्रोत्साहन देने पर बल दिया गया है, इन सब उपायों से यह आशा की जाती है कि दसवीं योजना के दौरान निर्यात में 11.9 प्रतिशत की

1- डॉ0 ए0ए0 सिद्दीकी, इण्डियाज, न्यू प्रोडक्ट्स इन न्यू वर्ल्ड फार्मेट लिविंग प्रू एक्सलेक्स एण्ड वियाण्ड, मोती लाल नेहरू रीजनल इन्जीनियरिंग कालेज इ0वि0वि0, इलाहाबाद-2002.

औसत कृषि के वृद्धि होगी और वे सन 2007 तक बढ़कर 80 अरब यू0एस0 डालर के स्तर पर पहुँच जायेगें। यह एक अभिनन्दनीय पहल है। इस नीति का एक और सकारात्मक लक्षण अमरीका के देशों पर ध्यान केन्द्रित करना है ताकि अफ्रीका के देशों को होने वाले भारतीय निर्यात को बढ़ावा प्राप्त हो सके।

निर्यात–आयात नीति (2002–2007) में कुछ पहले चल रही रियायतें एवं राहतें कायम रखी गयी है। ये है, शुल्क अर्हता पासबुक स्कीम, अग्रिम लाइसेन्स, निर्यात सम्बर्द्धन, पूँजी वस्तु स्कीम / इन योजनाओं मूल आधार यह है कि यदि निर्यात इन आयातित आदानों का प्रयोग कर रहा है तो इसे शुल्क मुक्त प्राप्त होने चाहिए। परन्तु इन सभी रियायतों एवं प्रोत्साहन के बावजूद 2001–2002 में हमारे निर्यात में केवल 1.5 प्रतिशत व्यय मात्रा वृद्धि ही हो पायी। 1991–2000 की अवधि मे दौरान आयात की वृद्धि दर निर्यात वृद्धि दर की अपेक्षा ऊँची रही है। इसका तात्पर्य यह है कि भारतीय विदेशी व्यापार में प्रवेश करने में अधिक सफल हुए है और इसकी तुलना में भारतीय विदेशी व्यापारों में

अपेक्षाकृत कम प्रवेश कर पाये है। जिसमें यह कहा जा सकता है कि केवल वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय को नियात को बढ़ाने के लिए उचित वातावरण कायम नहीं कर सकता, इसके लिए उर्जा मंत्रालय एवं परिवजन मंत्रालय के समन्वय स्थापित करना होगा ताकि निर्यात के लिए माल की ढुलाई में विलम्ब को कम लिया जा सके।

निर्यात - आयात नीति (2002-2007) का केन्द्र विन्दु शुल्क कटौती और कुछ रियायतों को उपलब्ध कराने तक सीमित रहा है, इसकी सफलता के लिए इसका विस्तार करना होगा।

भारत में दवा में काम आने वाले पौधों की संख्या 80 हजार से भी अधिक है और हम इन पौधों के निर्यात में विश्व में नम्बर एक पर आ सकते है, परन्तु हमारा यह निर्यात विश्व में ऐसे पौधों के निर्यात का केवल 2.5 प्रतिशत है, जब कि केवल चीन का हिस्सा 40 प्रतिशत है।[1]

---

1 - डा0 ए0ए0 सिद्दीकी, इण्डियाज न्यू प्रोडक्ट्स इन वर्ल्ड मार्केट लिविंग थ्रु एक्लेन्स एण्ड वियान्ड, मोती लाल नेहरू रीजनल इंजीनियरिंग कालेज, इला0वि0वि0 इलाहाबाद- 2002

इसी प्रकार कृषि निर्यात में भी इसके निर्यात को बढ़ाने के लिए कृषि उत्पादकता में वृद्धि करना आवश्यक होगा। उसके लिए नई तकनीको का प्रयोग करना होगा।

डब्लू0टी0ओ0 का भारत पर प्रभावः–

विश्व बैंक आर्थिक सहयोग और विकास संगठन तथा 'गैट' के अनुसार, युरूग्याय दौर में किये गये समझौते के परिणामस्वरूप विश्व में प्रतिवर्ष 213 से 274 विलियन डालर के वृद्धि होने की सम्भावना है, गैट का अनुमान है कि इन समझौते के परिणामस्वरूप 2005 में वस्तुओं के विदेश व्यापार में 745 विलियन डालर की वृद्धि होगी जिसमें 60 प्रतिशत की सर्वाधिक वृद्धि कपड़े के क्षेत्र में, 20प्रतिशत वृद्धि कृषि वन सामग्री तथा मछली उत्पादन में तथा 19 प्रतिशत परिष्कृत खाद्य सामग्री में होने की सम्भावना है। भारत सरकार का तर्क है कि क्योंकि भातर में इन तीन वस्तु समूहों में तुलनात्मक लाभ प्राप्त है, इस लिए विश्व व्यापार में प्रसार का भारत की निर्यात आय पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा और उसमें वृद्धि होगी। यह मान्यता लेने पर कि विश्व व्यापार में

भारत का 0.5 प्रतिशत से बढ़कर 1 प्रतिशत हो जाता है। तथा इस व्यापार प्रसार में पैदा होने वाली सम्भावनाओं का लाभ उठा पाने में सफल हो जाते है। भारत को प्रतिवर्ष 2.70 विलियन डालर के अतिरिक्त निर्यात आय प्राप्त हो सकती है, कुछ अन्य अनुमान प्रतिवर्ष 3.50 से 7.0 विलियन डालर की अतिरिक्त निर्यात आय की बात करते है।

(1) मुचकुन्द दूबे के अनुसार, ये सारे अनुमान गलत है। पहली बात यह है कि गैट द्वारा विदेश व्यापार में वृद्धि कर में अनुमान लगाया गया है कि वह अवास्तविक है और उसे प्राप्त नहीं किया जा सकेगा। दूसरी बात यह है कि भारत का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हिस्सा अभी हाल के वर्षो तक कम होता रहा है। यदि यह मान भी लिया जाय कि उसमें आने वाले वर्षो में वृद्धि होगी तथापि यह कहना है कि वह 0.5 प्रतिशत से बढ़कर 1 प्रतिशत दहो जायेगा, अतिश्योक्ति है। तीसरी बात यह है कि विश्व व्यापार में वृद्धि केवल व्यापार उदारीकण पर ही निर्भर नही करती परन्तु कई अन्य बातों पर भी निर्भर करती है जेसे कि वस्तुओं की गुणवत्ता, निर्यात उत्पादन के

लिए उचित आधारित संरचना की उपलब्धि, निर्यात उत्पादों की आपूर्ति, प्रौद्योगिकी का स्तर इत्यादि। इन सब कारकों में भारत की सापेक्षिक स्थिति विकसित देशों की तुलना में काफी कमजोर है। इतना ही नहीं, आर्थिक व राजनैतिक अस्थिरता से भरे विश्व में भविष्य के लिए निर्यातों में अनुमान लगाना अपने आप एक विवादास्पद प्रयास है।

(2) डब्लू0टी0ओ0 के विशेषज्ञों का मानना है कि 2005 तक वह फाइबर समझौता के समाप्त होने से विकासशील देशों को बहत लाभ मिलेगा।

जहाँ तक भारत का प्रश्न है, इस संदर्भ में इस बात पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि जब कोटा खत्म किये जायेगें तो वे केवल भारत के लिए ही नहीं बल्कि सभी देशों के लिए किये जायेगें। इस लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भारत के वस्त्र उद्योग को चीन, वियतनाम, पाकिस्तान, बाँग्लादेश, इंडोनेशिया, मलेशिया इत्यादि के वस्त्र उद्योग से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ेगी।

(3) भारत के दृष्टिकोण से एक अत्यन्त चिन्ता का विषय व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का क्षेत्र है। युरुग्याय दौर में विकसित देशों में इन अधिकारों के संरक्षण के लिए कई कड़ी शर्तो में विकासशील देशों पर थोपा है।

(4) जहाँ तक व्यापार सम्बद्ध निवेश उपायों का सम्बन्ध है वे भी विकसित देशों की हितों को ध्यान में रखकर बनाये गये है। विकासशील देशों के दृष्टिकोण से ट्रिम को संतुलित बनाने का तरीका होना चाहिए था कि विदेशी निवेशकों के प्रति बन्धात्मक व्यावसायिक व्यवहार पर अंकुश लगाने के लिए कुछ कदम उठाये जाते।

(5) डब्लू0टी0ओ0 के समझौते के अधीन सेवा क्षेत्र को भी खोलने की व्यवस्था की गई है। सेवा क्षेत्र में बहुत आर्थिक गतिविधियाँ आ जाती है। जैसे बैंकिंग बीमा, परिवहन, संचार आदिं इन सभी क्षेत्रों को खोलने पर विकसित देशों को, विकासशील देशों की तुलना में कहीं ज्यादा लाभ प्राप्त होगें।

डब्लू0टी0ओ0 अब अपने अस्तित्व के पाँच वर्ष पूरे कर चुका है। इन पाँच वर्षो में अनुभव से पता लगता है कि हालाकि सभी देशों को समान अधिकार प्राप्त है तथापित विकसित देशों का बोलबाला है। वस्तुतः 'समानता' की बात सत्य है। सभी विवादों का निदान मुक्त व्यापार में किन्हीं न्यादर्श सिद्धान्तों के आधार पर नही होता, अपितु इस बात से होता है कि ताकतवर कौन है तथा किसकी सोदा शक्ति सबसे ज्यादा है। स्पष्ट कि विवादों में अन्तिम जीत विकसित देशों की ही होती है।

इस वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि आगे आने वाले समय में डब्लू0टी0ओ0 के तत्वावधान में विकसित देशों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त होगें। एक अन्य बात जिनकी ओर ध्यान दिलाना आवश्यक यह है कि बहुत सारे मुद्दे जिन पर निर्णय पहले सरकारों द्वारा लिये जाते थे अब नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के तहत उन पर निर्णय डब्लू0टी0ओ0 द्वारा लिये जायेगे चाहे व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा का प्रश्न होगा व्यापार सम्बद्ध निवेश उपायो का प्रश्न या सेवा क्षेत्र के विभिन्न उपक्षेत्रों (बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार

इत्यादि) के प्रश्न हो या कृषि क्षेत्र का प्रश्न हो, सार्वजनिक प्रणाली का प्रश्न हो या और भी कोई अन्य आर्थिक गति विधि हो अब डब्लू0टी0ओ0 का प्रभाव सब नीतियों पर दिखाई देगा।

जैसा कि एस0पी0 शुक्ला ने कहा है डब्लू0टी0ओ0 के हस्ताक्षेप के कारण अब स्वतन्त्र राष्ट्रो की प्रभुसत्ता तक खतरे में पड़ जायेगी। इतना ही नही, विकसित देशों का अब प्रयास यह है कि बहुत से सामाजिक मुद्दे भी डब्लू0टी0ओ0 के कार्यक्षेत्र में शामिल किये जाये जैसे श्रम मापदण्ड, बाल श्रम, पर्यावरण की सुरक्षा इत्यादि।

सारे मूल समझौते और सभी संशोधन विकसित देशों के पक्ष में किये गये है। डब्लू0टी0ओ0 की विवाद निपटान प्रक्रिया केवल दो बराबर शक्तिशाली राष्ट्रो के बीच विवादों का निपटारा करने के लिए ही उपयुक्त है। इसका कारण यह है कि यदि दो राष्ट्रो को ए और बी के बीच झगड़े में डब्लू0टी0ओ0 राष्ट्र ए के पक्ष में फैसला देता है, परन्तु बी इस फैसले के अनुसार अपनी नीति में परिवर्तन नहीं करता तो डब्लू0टी0ओ0 राष्ट्र ए को यह अधिकार दे सकता है कि

वह भी प्रतिभार करें अर्थात बदले की कार्यवाही करें परन्तु राष्ट्र ए यह कार्यवाही तभी कर पायेगा यदि वह राष्ट्र बी के बराबर शक्तिशाली है, अन्यथा वह चुपचाप बैठ जायेगा। स्पष्ट है कि अधिकतर विकासशील देश विकसित देशों के खिलाफ बदले की कार्यवाही नही कर पायेग और चुप रहने में ही भलाई समझेगें।

यही कारण है कि डब्लू0टी0ओ0 में पिछले पाँच वर्षो में इतिहास में विकसित देश विकासशील देशों पर पूरी तरह हावी रहे हैं। हैरानी की बात यह है कि डब्लू0टी0ओ0 की विवाद निपटान संस्था ने अभी हाल में अमेरिका के ट्रेड एक्ट (1974 के ट्रेड एक्ट) के अधीन अमेरिका को अपने व्यापारिक सहयोगियों पर धारा 301 से 310 के अन्तर्गत कार्यवाही करने की अनुमति दी है।

यदि अमेरिका यह समझता है कि यह सहयोगी उसके हितों के विरूद्ध काम कर हरे हैं तो यह निर्णय डब्लू0टी0ओ0 ने अमेरिका और यूरोपीय संघ के बीच उठे एक विवाद के सन्दर्भ में दिया। यूरोपीय संघ की तरफ से 11 महत्वपूर्ण देश भारत, जापान, कनाडा, कोरिया, ब्राजील इत्यादि

भी इस विवाद में शामिल हुए थे। अमेरिका के पक्ष में यह निर्णय डब्लू0टी0ओ0 के बहुपक्षीय चरित्र पर एक कुठाराघात है।

भारतीय तोल पर शुल्क लगा सकता है अमेरिकाः-

अमेरिका द्वारा भारतीय स्टेनलसस्टील पर सेफगार्ड शुल्क लागू किये जाने की आशंका है। इससे घरेलू इस्पात निर्यात को बड़ा धक्का लगना तय है। इस मामले में घरेलू कम्पनियाँ इस्पात मंत्रालय के जरिये अमेरिकी प्रशासन को वस्तुस्थिति की जानकारी देने की कोशिश में लगी है।

संयुक्त संयन्त्र परिषद के एक वरिष्ठ अधिकारी ने बताया कि हाटरोल्ड कॉयल और हॉट रोल्ड सीट के बाद अब स्टेनलेसस्टील को अमेरिका द्वारा निशाना बनाया गया है। वास्तव में अमेरिकी प्रशासन द्वारा यह कदम सिर्फ भारत के बारें में नहीं उठाया जा रहा है। जिन देशों से भी अमेरिका में स्टेनलेस स्टील का ज्यादा आयात हो रहा है, उन सभी के निर्यात को लेकर जाँच की जा रही है। इस बारे में सम्बन्धित देशों से हो रहे आयात सेफगार्ड शुल्क लागू जाना है। इन देशों में भारत को भी शामिल किये जाने की पूरी आंशका हैं।

भारतीय कम्पनियों में इस्पात इंडस्ट्रीज जिन्दल स्टील्स सार्वजनिक क्षेत्र इसको व कुछ अन्य कम्पनियों द्वारा अमेरिका को स्टेनलोस स्टील का निर्यात किया जाता है। अमेरिका द्वारा अगर प्रतिबन्ध लागू किया जायेगा तो इसके दायरे में फ्लैटेन्ट बार मुख्य उत्पाद होगा। सूत्रों का कहना है गैल्वेनाइज्ड शीट के मामले में फिलहाल खतरा टल गया लगता है। भारत में अमेरिका को लगभग दो लाख टन का स्टेनलेस स्टील निर्यात किया जा रहा है।

अमेरिका ने आयातित एच आर सी पर पहले से ही डम्पिंग शुल्क लागू कर रखा है। इस मामले में भारत की कम्पनियों द्वारा निर्धारित आधार मूल्य के स्तर पर अंडरटेकिंग कर दी गयी है। इसके साथ ही यूरोपीय संघ द्वारा भारत के कई इस्पात उत्पादों पर ऐसा ही शुल्क लागू है। अब इसके दायरे में कोई नया उत्पाद आने से भारत के इस्पात निर्यात को बड़ा धक्का लगाना तय है।

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि अभी हाल में अमेरिका ने भारतीय मछली पर यह कह कर रोक लगाना कि हमारा मछली मारने का तरीका पर्यावरण विरोधी है, लेकिन डब्लू0टी0ओ0 में यह बात स्वीकार नहीं की गयी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

पुस्तकें

कृष्ण बाल	कामर्सियल रिलेशन ब्टिविन इंडिया एण्ड इंग्लैण्ड (1601 से 1757) लन्दन, 1924
कालीपाडा, देव	एक्सपोर्ट स्ट्रेटजी इन इण्डिया, सुल्तान चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0, नई दिल्ली
कृष्ण मनमोहन	नव आर्थिक व्यवस्था एवं अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठन, होराईजन पब्लिशर्स, इलाहाबाद 1995
गुप्त डा0 राम प्रताप एवं डा0 विष्णु दत्त नागर	आर्थिक विकास के सिद्धान्त एवं समस्याएं, मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया लि0, नई दिल्ली, 1977
गुर्टू डा0 डी0एन0	अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, कालेज बुक डिपो, जयपुर, 1971-72
जैन जे0के0	क्रियात्मक प्रबन्ध प्रतीक प्रकाशन, इलाहाबाद 1998
जैन डा0 एस0सी0 एवं डा0 चतुर्भुज मेमोरिया	भारतीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा, 1986
जैन पी0सी0 एवं सतीश कुमार	डेवेलपिंग कन्ट्रीज इन इण्टरनेशनल ट्रेड रिलेशन, चुघ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद 1987
जैन पी0सी0	भारत की आधुनिक आर्थिक प्रगति, हिन्दी समिति सूचना विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ, 1966
पटेल आई जी	भारत का भुगतान सन्तुलन- विदेश व्यापार पुनर्दृष्टि की एक समालोचन, भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली, 1981

पुरी वी0के0 एवं एस0के0 मिश्रा	भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालय पब्लिशिंग हाउस गिरगांव, मुम्बई, 1994
बाल गोपाल, टी0ए0एस0	निर्या प्रबन्ध, हिमालय, पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1981
मिश्र जगदीश नारायण	भरतीय अर्थव्यवस्था, किताब महल, 15 थार्नहिल रोड, इलाहाबाद 2000
लाल डा0 एस0एन0	मौद्रिक अर्थशास्त्र, शिवप्रकाशन, इलाहाबाद 1979
वर्मा डा0एम0एल0	फारेन ट्रेड मैनेजमेन्ट इन इंडिया विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0 576 मस्जिद रोड, नई दिल्ली 1996
वार्ष्णेय एवं डा0 शर्मा	विकास का अर्थशास्त्र एवं नियोजन साहित्य भवन, आगरा
शर्मा राम शरण	प्राचीन भारत कक्षा दो, एन0सी0ई0आर0टी0
	मध्यकालीन भारत, कक्षा–दो (800 ई0 से 1200 ई0 तक) एन0सी0ई0आर0टी0
सिंघई डा0 जी0सी0	अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र साहित्य भवन आगरा, 1993
श्रीवास्तव एच0जी0पी0	इन्टरनेशनल इकोनोमिक्स, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1975
श्रीवास्तव एच0जी0पी0	अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, नई दिल्ली, 1975
सिद्दीकी डा0 ए0ए0	द कामर्स जर्नल, वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 1990–91

सिद्दीकी डा0 ए0ए0	अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एवं प्रशुल्क नीति, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद 1996
सिन्हा डा0वी0सी0 एवं डा0 जे0 प्रकाश	भारतीय कृषि, उद्योग, व्यापार एवं यातायात, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1983
सिन्हा वी0सी0	अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 1985

पत्रिकायें

प्रतियोगिता सम्राट	दीवान पब्लिकेशन्स प्रा0लि0 नई दिल्ली
प्रतियोगिता दर्पण	उपकार प्रकाशन, 2/11 ए स्वदेशी बीमा नगर, आगरा
क्रानिकल	क्रानिकल पब्लिकेशंस प्रा0लि0 208-209, शिवलोक हाउस, नई दिल्ली
फारेन ट्रेड बुलेटिन	भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली
उद्योग व्यापार पत्रिका (मासिक)	इण्डिया ट्रेड प्रमोशन आर्गनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली
विदेश व्यापार प्रवृत्तियाँ एवं वृत्तांत	भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली
द कामर्स जर्नल	वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 1990-91 और 1994-95

दैनिक समाचार

फाइनेन्सियल एक्सप्रेस, नई दिल्ली

द इकोनोमिक्स टाइम्स, नई दिल्ली

नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली

जनसत्ता नई दिल्ली

हिन्दुस्तान, नई दिल्ली

राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ

आज, वाराणसी

दैनिक जागरण, वाराणसी

अमर उजारा, कानपुर

अमृत प्रभात, इलाहाबाद

नार्दन इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद

सरकारी प्रकाशन

योजना	सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार
वार्षिक रिपोर्ट 1991-92, 1992-93, 1994-95	वाणिज्य मन्त्रालय, भारत सरकार
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	योजना आयोग, भारत सरकार 1959
तीसरी पंचवर्षीय योजना	योजना आयोग, भारत सरकार की ओर से प्रकाशित, 1962
आर्थिक सर्वेक्षण	वित्त मन्त्रालय, भारत सरकार (आर्थिक प्रभाग)

दूरदर्शन प्रसारण

डी0डी0-एक, टी0वी0 प्रसारण, मेड इन इण्डिया प्रोग्राम, नालिनी सिंह द्वारा प्रस्तुत

प्रोग्राम प्रसारण तिथि - 16.10.1999, 23.10.1999

20.11.1999, 27.11.1999

04.12.1999

समय- रात्रि 8.00 बजे से रात्रि 8.30 बजे तक

फैक्स नं0- 011-332-7161

The University Library

ALLAHABAD

Accession No. T-1121

Call No. 3774-10

Presented by 7E21